आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 फरवरी, 2022
डाक प्रेषण तिथि 10 फरवरी, 2022

वर्ष : 80 अंक : 02
माघ, 2078 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

फरवरी, 2022

Website : www.jinwani.in

जो पापरहित होता है, वही शान्तचित्त हो सकता है।

– सूत्रकृताङ्गसूत्र

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Houston

श्री महावीराय नमः

श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

जय गुरु हीरा जय गुरु महेन्द्र जय गुरु मान

पुण्यधरा पीपाड़सिटी में 9 दिसम्बर, 2021 कार्तिक शुक्ला पञ्चमी विक्रम सम्वत् 2078 मंगलवार, वीर निर्वाण सम्वत् 2048 को

मुमुक्षु श्री अंशजी हीरावत द्वारा जैनभागवती दीक्षा अङ्गीकार करने के उपलक्ष्य में

(दीक्षोपरान्त नाम–श्री आनन्दमुनिजी)

अंश नहीं अब पूरण बनना अभिलाषा ये है हमारी,
इन्द्रिय पाँचों, चारों कषाय, सिर का मुण्डन हितकारी।
तन की गुलामी तजने की घड़ियाँ आई है न्यारी,
सदा रहो तुम अजय विजेता, संयम है जयकारी।।

संयम को हृदय से किया है स्वीकार,
संयम आपको पाकर गर्व करे बार–बार।
आप से संयम, संयम से आपका हो दीदार,
आप में संयम, संयम में आप हो जायें एकाकार।।

भक्ति समर्पण से गुरु चरणों में करें रमण,
मात–पितु के संस्कारों से परिपूर्ण आपका जीवन।
इतिहास के पृष्ठों पर युगों–युगों तक रहे आपका स्पन्दन,
हे संयमी! अभिवादन अभिनन्दन आनन्दम्।।

वीर पड़ दादा–दादी :: स्व. श्री पदमचन्दजी–स्व. श्रीमती चन्द्रावल देवीजी हीरावत
वीर दादा–दादी :: प्रेमचन्द – निर्मला
वीर पिता–माता :: अजय–अभिलाषा
वीर चाचा–चाची :: आलोक–सोनू
वीर बुआ–फूफाजी :: आशा – गौतम श्रीमाल
वीर भ्राता–भाभी :: अमन–सुरभि
वीर बहिन–जीजाजी :: रिद्धि– प्रतीक बोथरा
वीर भ्राता :: संकल्प, अनन्त हीरावत, लक्ष्य श्रीमाल
एवं समस्त हीरावत परिवार, जयपुर–मुम्बई

Nirmala Gems
Mumbai Office :
BW 6030B, 6th Floor, BDB, BKC, Bandra (E), Mumbai-51 (MH.)
Mob. 93225-32079, 99200-95510
Email : nirmala_gemsdesigners@hotmail.com
Jaipur Showroom :
118, Johari Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
93145-06598, 99301-44864
Email : nirmala_gemsjewellery@hotmail.com

श्री महावीराय नमः

श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

जय गुरु हीरा | जय गुरु महेन्द्र | जय गुरु मान

अंक सौजन्य

नगर-रह-चक्क-पउमे, चंदे-सूरे-समुद्द-मेरुम्मि,
जो उवमिज्जइ सययं, तं संघ-गुणायरं वंदे।।

नगर सम निवास रक्षण, चक्र सम गतिशीलता, पद्म सम निर्लिप्तता, चन्द्र सम शीतलता, सूर्य सम प्रकाश, समुद्र सम गम्भीरता-विशालता, मेरु सम अचलता-अडोलता-उन्नतता आदि-आदि अनेकानेक अद्‌भुत दिव्य लोकोत्तरिक अतिशायी गुणों से समृद्ध सम्पन्न पावन संघ के शिरोमणि जिनशासन गौरव, अष्ट सम्पदा सम्पन्न, आगमज्ञ, प्रवचन प्रभाकर, प्रशान्त मूर्ति, युगान्तरकारी, विरल विभूति, व्यसन-मुक्ति के प्रबल प्रेरक, परम पूज्य **जैनाचार्यश्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा.**, महान् अध्यवसायी सरस व्याख्यानी **भावी आचार्य श्री महेंद्र मुनि जी म.सा.** आदि सन्त-सती भगवन्तों की हमें अनन्त कृपा प्राप्त हो रही है। आपका संयमी जीवन सदैव परीषह उपसर्गों से रहित साताकारी, स्वस्थ एवं दीर्घायु हो, अनन्त अनन्त शुभ भावनाएँ.....

आपकी अनन्त कृपा एवं प्रत्यक्ष-परोक्ष उपकार के लिए अहो भाव से श्री चरणों में कोटि कोटि कृतज्ञता अर्पित करते हुए .....

:: श्रद्धानवत ::

विमला-राधेश्याम

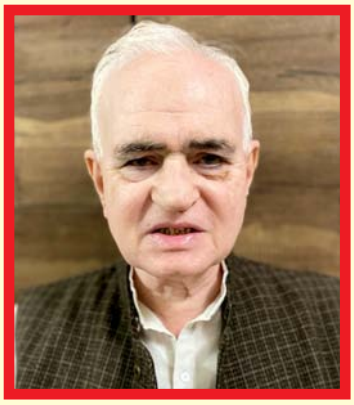

मंजू-कुशलचन्द

रजनी-पदमचन्द

सुरेखा-अशोक कुमार

नीतू-प्रदीप जैन

गौरव, रुपित, दिव्य, अक्षिता

स्नेहा, चार्वी, लब्धि, सिद्धांश

चिन्मय जैन गोटे वाला परिवार।

प्रतिष्ठान

RP GOTEWALA

राधेश्याम पदमचन्द जैन गोटे वाला
सवाईमाधोपुर (राज.)

RP SAREES

आर.पी. साड़ीज
पुराना खंडार रोड
सवाईमाधोपुर (राज.)

आर. पी. ज्वेलर्स
पुराना खंडार रोड तथा टोंक रोड,
बजरिया, सवाईमाधोपुर (राज.)

मो. : 9460441570, 94140 30572, 94140 31360, 9413885708

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह-सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अवसोहिय कंटगापहं,
ओइण्णो सि पहं महालयं।
गच्छसि मग्गं विसोहिया,
समयं गोयम! मा पमायए।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 10.32

कण्टकयुत मिथ्यापथ तज कर,
अवतीर्ण हुआ विस्तृत पथ पर।
निर्मल मन से उस पथ पर चल,
गौतम! प्रमाद क्षण का मतकर।।

फरवरी, 2022
वीर निर्वाण सम्वत्, 2548
माघ, 2078

वर्ष 80 अंक 2

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.
स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
संरक्षक सदस्यता : 11000/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/सहयोग राशि ``JINWANI'' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में NEFT/RTGS से जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) श्री अनिलजी जैन के व्हाट्स एप्प नं. 9314635755 पर भेजें।

जिनवाणी में प्रदत्त सहयोग राशि पर आयकर में 80G की छूट उपलब्ध है।

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	इच्छाओं का चयन	–डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	–डॉ. धर्मचन्द जैन	11
विचार-वारिधि-	खुद सुधरते हुए, संसार का सुधार करें	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	12
प्रवचन-	हिंसा को रोकें, अन्यथा फल भोगना होगा	–आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	13
	नवकार मन्त्र है महामन्त्र	–भावी आचार्यश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा	15
	सच्चा और अच्छा मित्र है : संयमित मन	–मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.	18
	कर्मसिद्धान्त से समझें पुण्य की महत्ता	–तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	23
	चिन्तन की धारा बदलते ही परम सुख	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	29
शोधालेख-	भारतीय दर्शन में अनेकान्तवाद के तत्त्व : एक ऐतिहासिक विवेचन	–प्रो. सागरमल जैन	32
जीवन-व्यवहार-	व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (13)	–श्री पी. शिखरमल सुराणा	39
	परिस्थिति क्या है?	–सुश्री नेहा चोरड़िया	66
English-section	**Concept of Prayer**	*–Sh. Chanchalmal Bachhawat*	40
संगोष्ठी-आलेख-	सामायिक के अधिकारी	–श्री प्रकाशचन्द जैन (प्राचार्य)	44
	सामायिक की चार भावनाएँ	–प्रो. वीरसागर जैन	47
स्वास्थ्य-विज्ञान-	आयुर्वेद और जैनधर्म	–डॉ. पी. सी. जैन	51
युवा-स्तम्भ-	14 फ़रवरी वैलेण्टाइन्स डे.. यह कैसे प्रेम दिवस?	–श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	57
चिन्तन-	स्वयं जाने आप अमीर हैं या गरीब	–श्री मोहन कोठारी 'विनर'	60
परिवार-स्तम्भ-	जीवन की ढलती साँझ	–डॉ. आई. एम. खींचा	61
तत्त्व चर्चा-	आओ मिलकर कर्मों को समझें	–श्री धर्मचन्द जैन	63
पावन-स्मृति-	संघ-स्तम्भ श्री नथमलजी हीरावत का विरल व्यक्तित्व	–डॉ. धर्मचन्द जैन	67
गीत/कविता-	धर्म ही सच्चा शरणा	–श्रीमती अंशु संजय सुराणा	17
	मत चूक यह सुनहरा मौका	–श्री निपुण डागा	22
	जीवनबोध क्षणिकाएँ	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	38
	रोशनी	–डॉ. रमेश 'मयंक'	56
	पर्यावरण का प्रतीक : जैनधर्म	–श्री अशोक कुमार जैन 'हरसाना'	88
	सुन-सुन गुरुणी भक्तों की सुन	–श्री गजेन्द्र कुमार जैन	88
विचार/चिन्तन-	अहिंसा, करुणा और क्षमा से चमत्कार सम्भव	–श्री जयदीप ढड्ढा	10
	रुह काँप उठी	–श्री आर. नरेन्द्र कांकरिया	50
	किससे क्या हो?	–श्री गणपतलाल जैन	59
	वैज्ञानिक आइंस्टीन और जैनत्व	–श्री प्रमोद महनोत	65
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	–श्री गौतमचन्द जैन	70
सम्मान-	गुणी-अभिनन्दन एवं सम्मान सूची	–संकलित	72
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	74
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	89
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	–विभिन्न लेखक	91

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 7
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

इच्छाओं का चयन

डॉ. धर्मचन्द जैन

जीवन के प्रेरण, सञ्चालन और विकास में आवश्यकता के अनुभव एवं इच्छाओं का बड़ा महत्त्व है। दुनिया में जितना भौतिक विकास हुआ, आर्थिक विकास हुआ और सुख-सुविधाओं की वृद्धि हुई है, उसमें एक दृष्टि से आवश्यकता के अनुभव और इच्छाओं का योगदान रहा है। आधुनिक युग में अर्थशास्त्र के केन्द्र में इच्छा है। मनोवैज्ञानिक भी इच्छा को जीवन सञ्चालन का बल (Driving Force) मानते हैं। इच्छा होने पर ही व्यक्ति किसी निश्चित दिशा में प्रयत्नशील होता है और उपलब्धि की ओर अग्रसर होता है। बिना इच्छा शक्ति के जीवन में सफलता प्राप्त करना दु:शक्य है।

किन्तु सन्त-महापुरुषों की वाणी हमें इच्छाओं का त्याग करने का सन्देश देती है। आगमों में भी स्थान-स्थान पर इच्छाओं पर नियन्त्रण की प्रेरणा प्राप्त होती है। कहा जाता है कि इच्छाएँ, कामनाएँ दु:ख की कारण हैं, अत: इनका त्याग अनिवार्य है।

इस सत्य को जानने के पश्चात् चित्त में यह द्वन्द्व उत्पन्न हो जाता है कि हम सभी इच्छाओं का त्याग कर देंगे तो जीवन कैसे चलेगा? इच्छाएँ तो हमारे जीवन का अभिन्न अङ्ग हैं। उनके बिना हम संसार का कोई कार्य नहीं कर सकते। इच्छाओं के बिना जीवन की सारी व्यवस्थाएँ गड़बड़ा जायेंगी। इस तरह के विचार मन में उत्पन्न होते हैं। दूसरी ओर सन्तों एवं सत्साहित्य के प्रभाव से हम कुछ इच्छाओं का दमन या शमन करते रहते हैं। इस ऊहापोह का अन्त नहीं हो पाता है कि क्या हम इच्छाओं के बिना रह सकते हैं या नहीं।

यहाँ पर कहना होगा कि यदि इच्छाओं के बिना हम नहीं रह सकते हैं तो उनमें से इच्छाओं का चयन अवश्य करना चाहिए कि कौन-सी इच्छाएँ करें और कौन-सी नहीं। कौनसी इच्छाएँ आवश्यक हैं और कौनसी अनावश्यक, कौनसी विकास में सहायक हैं और कौनसी नहीं। कौनसी इच्छाएँ दु:ख और तनाव को उत्पन्न करती हैं तथा कौनसी नहीं। क्या कोई ऐसी भी इच्छाएँ हैं जो तनाव को दूर करने और दु:ख को दूर करने का मार्ग प्रशस्त करती हों।

यह भी सत्य है कि सभी प्रवृत्तियों के मूल में इच्छा होती है। कोई प्रवृत्ति बिना इच्छा के होती है तो उसमें सुख का अनुभव नहीं होता। इच्छाएँ अच्छी भी हो सकती हैं और बुरी भी, विकास का साधन भी हो सकती हैं और पतन का सोपान भी, ये जीवन की मूल भी हैं और विनाश की हेतु भी। इच्छाओं की बहुलता चित्त को अशान्त एवं दु:खी बना देती है तथा अधिकांश इच्छाएँ दु:ख को जन्म देती हैं, इसलिए शास्त्रकार इच्छाओं के निरोध की प्रेरणा करते हैं।

किन्तु इस समस्या का निराकरण करने हेतु हम इच्छाओं को दो प्रकारों में विभक्त कर सकते हैं-1. सद् + इच्छा (सदिच्छा) 2. असद् + इच्छा (असदिच्छा)। अनेक इच्छाएँ अच्छी होती हैं, जिन्हें सद् इच्छा कह सकते हैं और जो इच्छाएँ पतन की ओर ले जाती हैं, वे असद् इच्छाएँ हैं।

मोक्ष की इच्छा सदिच्छा है जिसे मुमुक्षा कहा जाता है। इसी प्रकार स्वाध्याय की इच्छा, सामायिक की इच्छा, सत्सङ्गति की इच्छा, आत्मविकास की इच्छा सदिच्छाएँ हैं। इनकी आत्म-विकास के लिए आवश्यकता है। तत्त्वज्ञान की जिज्ञासा, सेवा करने की इच्छा, त्याग करने की इच्छा आदि इच्छाएँ भी उपादेय हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो जो इच्छाएँ राग-द्वेष को बढ़ाने वाली न हों, अपितु उनमें कमी लाने वाली हों, वे इच्छाएँ सद् इच्छाएँ हैं। असदिच्छाएँ राग-द्वेष को

बढ़ाने वाली होती हैं, आत्म अहितकारक होती हैं, वे अज्ञान पूर्वक पूर्व संस्कार वश उत्पन्न होती हैं। मनुष्य प्राय: असदिच्छाओं से ही घिरा होता है। वह अपनी असद् इच्छाओं की पूर्ति में ही सुख समझता है, किन्तु परिणाम में दु:ख भोगता है।

एक असद् इच्छा पूरी होने पर दूसरी उत्पन्न हो जाती है, और दूसरी पूर्ण होने पर तीसरी इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार असदिच्छाओं का अन्तहीन सिलसिला चलता रहता है। यही कारण है कि कामनाओं एवं इच्छाओं के त्याग की बात समस्त भारतीय वाङ्मय में कही गई है।

शास्त्रों में इच्छाओं को आकाश के समान अनन्त कहा है-**इच्छा हु आगाससमा अणंतिया**

-उत्तराध्ययनसूत्र 9.48

इच्छा के पर्यायवाची शब्द हैं-कामना, काम, आकांक्षा, लोभ, संकल्प, तृष्णा आदि।

आगमों में हमें इच्छा शब्द का प्रयोग परिग्रह और लोभवृत्ति के अर्थ में भी मिलता है। उदाहरण के लिए उपासकदशाङ्गसूत्र में आनन्द श्रावक जब पाँचवाँ अणुव्रत स्वीकार करता है तो वहाँ इच्छा विधि परिमाण शब्द का प्रयोग हुआ है-**इच्छाविहिपरिमाणं करेमाणे।** उत्तराध्ययनसूत्र में जो इच्छा को आकाश के समान अनन्त कहा है, वहाँ भी इच्छा शब्द लोभ का ही सूचक है। लोभ और परिग्रह के इस अर्थ में इच्छा त्याज्य है।

'इच्छा' शब्द का प्रयोग मात्र अभिलाषा अर्थ में भी हुआ है। उदाहरण के लिए प्रतिक्रमण में **'इच्छामि णं भंते!** के पाठ में 'इच्छामि' शब्द सद् अभिलाषा करने का वाचक है। अंतगडदसासूत्र में पद्मावती देवी दीक्षा की आज्ञा माँगते समय इच्छामि शब्द का प्रयोग करती है-**'इच्छामि णं देवाणुप्पिया! अब्भणुण्णाया समाणी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि।'** इसी प्रकार अर्जुनमाली भगवान को वन्दन करने की सुदर्शन सेठ से अभिलाषा प्रकट करते हुए कहता है-**'तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया! अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए।'** इस तरह यह इच्छा सद् इच्छा है। ऐसी इच्छा त्याज्य नहीं है।

'काम' शब्द का प्रयोग पाँच इन्द्रियों के विषय-सेवन के लिए एवं उनकी अभिलाषा के लिए हुआ है। कामसूत्रकार वात्स्यायन ने काम का स्वरूप प्रतिपादित करते हुए कहा है-

श्रोत्रत्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राणानामात्मसंयुक्तेन मनसाऽधिष्ठितानां स्वेषु स्वेषु विषयेष्वानुकूल्यत: प्रवृत्ति: काम:।। -अध्याय 2, अधिकरण 1, सूत्र 11

अर्थात् श्रोत्र आदि इन्द्रियों की उनके विषयों में जो अनुकूल प्रवृत्ति होती है, वह काम है। यह प्रवृत्ति आत्मा से युक्त, मन से अधिष्ठित इन्द्रियों के द्वारा अपने विषयों में की जाती है। इन विषयों के सेवन से जो सुख का अनुभव होता है, वह प्रधान काम है तथा उसके लिए जो इच्छा होती है, वह भी काम है। इस तरह हेतु और फल के भेद से काम दो प्रकार का है। जैनागमों में श्रोत्र एवं चक्षु इन्द्रियों के विषयों के सेवन को काम तथा शेष घ्राणेन्द्रियादि तीन इन्द्रियों के विषयों के सेवन को भोग कहा गया है। किन्तु कहीं-कहीं 'काम' शब्द का प्रयोग पाँचों इन्द्रियों के विषयों के अर्थ में भी हुआ है। उत्तराध्ययनसूत्र की निम्नाङ्कित गाथा द्रष्टव्य है-

सद्दे रूवे य गंधे य, रसे फासे तहेव य।
पंचविहे कामगुणे, णिच्चसो परिवज्जए।।

-उत्तराध्ययनसूत्र 16.10

इसमें पाँचों इन्द्रियों के विषयों को कामगुण (विषय) शब्द से कहा गया है। इन पंचविध कामविषयों का नियन्त्रण या प्रबन्धन आवश्यक है। क्योंकि इन कामभोगों में आसक्त व्यक्ति अपने जीवन में दु:ख उत्पन्न करता है-**कामाणुगिद्धिप्पभवं खु दुक्खं।** (उत्तराध्ययनसूत्र 32.19) इस तथ्य को अन्य शब्दों में कहा गया है-**'खाणी अणत्थाण उ कामभोगा'** अर्थात् कामभोग अनर्थों की खान है। ऐसा होते हुए भी इन कामनाओं को त्यागना अधीर पुरुषों के लिए निश्चय ही कठिन है-**'दुप्परिच्चया इमे कामा।'** इन सब कथनों से

यह बात सिद्ध होती है कि पाँच इन्द्रियों के विषयों के सेवन की प्रवृत्ति और उनकी इच्छा दोनों काम हैं। मनुष्य इनमें सुख देखता है, किन्तु परिणाम में दु:ख प्राप्त करता है।

भगवद्गीता (2.55) भी कहती है कि जब समस्त प्रकार की कामनाओं का कोई त्याग करता है, तब वह स्थितप्रज्ञ की श्रेणी में आता है-**प्रजहाति यदा कामान्, सर्वान् पार्थ मनोगतान्।।** दशवैकालिकसूत्र (2.1) में भी कहा गया है-

कहं नु कुज्जा सामण्णं, जो कामे न निवारए।
पए पए विसीयंतो, संकप्पस्स वसंगओ।।

जो कामनाओं का निवारण नहीं करता, वह पद-पद पर विषाद को प्राप्त करता है तथा संकल्प के वशीभूत होकर श्रमणधर्म का सही पालन नहीं कर पाता है।

आगमों में कहीं-कहीं काम शब्द का प्रयोग सद् इच्छा के अर्थ में भी हुआ है। उदाहरण के लिए उत्तराध्ययनसूत्र 5.3 में ही सकाम-मरण को पण्डितमरण कहा गया है-**पण्डियाणं सकामं तु उक्कोसेण सइं भवे।** यहाँ सकाम-मरण में काम शब्द सत्संकल्प पूर्वक संलेखना-समाधि के साथ मृत्यु के वरण के अर्थ में हुआ है। जो एक अच्छा कार्य है। इसी प्रकार सकाम-निर्जरा को अकाम-निर्जरा की अपेक्षा कर्मनिर्जरा में अधिक महत्त्व दिया गया है। सकाम-निर्जरा हेतु इच्छा पूर्वक तपाराधन किया जाता है। उत्तराध्ययनसूत्र के 32वें अध्ययन की गाथा 4 में 'काम' शब्द का प्रयोग सद् इच्छा या सत्संकल्प के लिए हुआ है-**समाहिकामे समणे तवस्सी।** श्रमण तपस्वी समाधि की कामना अर्थात् इच्छा करता है। इस प्रकार इच्छा को अच्छे अर्थ में भी लिया गया है। इससे ज्ञात होता है कि सभी इच्छाएँ त्याज्य नहीं हैं।

भारतीय परम्परा में चार पुरुषार्थों में काम को एक पुरुषार्थ माना गया है, जो गृहस्थ जीवन में ग्राह्य होता है। किन्तु उसे धर्मपूर्वक पूर्ण करने का निर्देश दिया गया है। काम का अर्थ फलाकांक्षा भी है, प्रवृत्ति करने के पूर्व इसके फल की इच्छा करना भी काम है। जो दु:ख मुक्त रहने के लिए त्याज्य है। भगवद् गीता में निष्काम प्रवृत्ति की प्रेरणा करते हुए कहा गया है-**कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।** यद्यपि निष्काम कर्मयोगी भी प्रवृत्ति करता है, उसका भी कोई उद्देश्य होता है, किन्तु वह फल के प्रति आसक्त नहीं होता। अपने कर्त्तव्य पर ही उसका ध्यान होता है। कर्त्तव्य करने की इच्छा त्याज्य नहीं है।

इच्छा की भाँति संकल्प भी दो प्रकार का होता है-सत्संकल्प और असत्संकल्प। सत्संकल्प व्रत-पालन आदि के लिए दृढ़ संकल्प के रूप में देखा जाता है। दृढ़ संकल्पी व्यक्ति धर्म के मार्ग से च्युत नहीं होता। जबकि असत्संकल्प वाला हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार आदि में प्रवृत्त होता है।

असदिच्छाएँ तीन प्रकार की हो सकती हैं-रागात्मक, द्वेषात्मक और मोहात्मक। आहार, वस्त्र, स्त्री, भवन, उपकरण आदि अनुकूल पदार्थों की इच्छा रागात्मक है। प्रतिकूल परिस्थितियों, व्यक्तियों और विषयों के विनाश या वियोग की इच्छा द्वेषात्मक है। मोहात्मक इच्छा के अन्तर्गत मदन-काम अर्थात् स्त्री-पुरुष के सहवास की इच्छा, धन-सम्पत्ति, ज़मीन-ज़ायदाद के संग्रह की इच्छा आदि सम्मिलित होती हैं। ये तीनों ही प्रकार की असद् इच्छाएँ त्याज्य हैं और गृहस्थ के द्वारा नियन्त्रण करने योग्य हैं।

सदिच्छाओं का लक्ष्य राग-द्वेष एवं मोह पर अथवा क्रोध-मान-माया एवं लोभ पर विजय प्राप्त करना होता है। इसलिए ज्ञान-दर्शन एवं चारित्र के सम्पन्न होने की इच्छा भी सदिच्छा होने से उपादेय है।

इस समस्त चर्चा का सार यह है कि हमें इच्छाओं, कामनाओं और संकल्पों के लक्ष्य का निर्धारण पूर्व में करना चाहिए। बिना लक्ष्य के इच्छाएँ उत्पन्न करके हम अपने जीवन को असन्तुलित और दु:खी बनाते हैं। हमें किस प्रकार का जीवन जीना है

सुखी या दु:खी, इसका निर्णय करने के पश्चात् तदनुरूप इच्छाओं को और संकल्पों को जीवन में स्थान देना चाहिए अन्यथा ये इच्छाएँ हमें ले डूबती हैं।

इच्छाएँ मन में उत्पन्न होती हैं, बिना मन वाले जीवों में मात्र 4 संज्ञाएँ उत्पन्न होती हैं। मन वाले जीवों पर संज्ञाएँ और इच्छाएँ दोनों का प्रभाव रहता है। जीवन जीने के लिए आहार संज्ञा होने पर आहार किया जाता है, भय संज्ञा के कारण जीव अपनी सुरक्षा करता है, मैथुन संज्ञा भावी सन्तति को जन्म देने में सहायक होती है और परिग्रह संज्ञा भी जीवन के भावी सञ्चालन के लिए प्रभावकारी होती है। किन्तु चेतनाशील मनुष्य आहार के अतिरिक्त अन्य संज्ञाओं पर नियन्त्रण करके अन्त में आहार से भी रहित हो सकता है। मन में उत्पन्न होने वाली अन्य इच्छाओं का भी वह द्रष्टा बनकर मूल्यांकन कर सकता है कि उसकी कौनसी इच्छाएँ आत्मविकास में सहायक हैं और कौनसी इच्छाएँ उसे पतन की ओर ले जा रही हैं।

मन में उत्पन्न होने वाली इन दोनों प्रकार की इच्छाओं को ध्यान में रखकर ही सम्भवत: ब्रह्मबिन्दु उपनिषद् में कहा गया है-**मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:**। मनुष्य इच्छाओं में भेद नहीं करेगा, सबको एक समान समझेगा तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाएगा, अत: इच्छाओं का चयन कर अपनी आत्मा एवं जीवन का उत्थान करना आवश्यक है।

अहिंसा, करुणा और क्षमा से चमत्कार सम्भव

श्री जयदीप ढड्ढा

कोरोना की तीसरी लहर से लोगों की जान पर फिर बन आई है। नवम्बर, 2019 से जबसे कोरोना शुरु हुआ है, विश्व भर में लाखों की संख्या में लोग मारे गए हैं और अब भी मर रहे हैं। मैंने अपने जीवन में इससे पहले इंसान को इतना निस्सहाय और बेबस स्थिति में नहीं देखा। ऐसा क्यों हो रहा है? गम्भीरता से सोचें, तो इसके लिए हम अपने आपको ही दोषी पाएँगे।

दरअसल हमने सृष्टि के परिस्थिति-चक्र को छेड़ दिया है। इंसान, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, भौतिक संसाधन आदि से परिस्थिति-चक्र बना हुआ है। एक भी आहत होता है, तो पूरा चक्र प्रभावित होता है। चूँकि हम भी उसका हिस्सा हैं, इसलिए हम भी प्रभावित हुए हैं। हमने अपने साथियों को तकलीफ पहुँचायी है, हिंसा की है। पशु-पक्षियों को पागलपन की हद तक मारा है, पेड़ काटे हैं, भौतिक संसाधनों का दोहन किया है। विकास के नाम पर हमने जो-जो भी कारनामे किए हैं उससे उनको कितनी तकलीफ पहुँची होगी। हम किसी के जीवन से खेलेंगे, तो उनकी आह तो हमें लगेगी ही। हमें अभिशप्त तो होना ही है। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि कोरोना महामारी से निपटने में चिकित्सको को भी पसीने छूट रहे हैं।

हम अपना जीवन चाहते हैं, तो सबसे पहले हमें हिंसा को तुरन्त त्यागना चाहिए। अपनी गलतियों के लिए अपने साथियों, पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों से क्षमा माँगनी चाहिए। उनके लिए हमेशा हमदर्दी और करुणा का भाव रखना चाहिए। अपने भौतिक संसाधनों का जो भी हम बेशुमार दोहन कर रहे हैं, उन पर भी लगाम लगानी चाहिए। हमें पूरा विश्वास है कि क्षमा, करुणा और अपनी अनुशासित जीवनशैली से कोरोना वाइरस में धीरे-धीरे कमी आएगी और एक दिन यह खत्म हो जाएगा।

मानव जन्म दुर्लभ है। हमारे शास्त्रों के अनुसार कई योनियों में जन्म लेने के बाद यह मिलता है। पता नहीं लोग क्यों नहीं समझना चाहते हैं कि वे तभी बचेंगे जब पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, भौतिक संसाधन आदि बचे रहेंगे। आज के हालात में समाधान यही है कि हम पारिस्थिति-चक्र को बचाएँ। सबसे क्षमा माँगे, करुणा रखें। फिर देखिए क्या चमत्कार होता है। ईश्वर की कृपा से सबके दिलो-दिमाग में यही भाव रहे। उनकी ऐसी ही मति रहे।

-ढड्ढा मार्केट, जौहरी बाजार, जयपुर-302003

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 11
ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

सम्मदिट्ठी सया अमूढे, अत्थि हु नाणे तवे संजमे य।
तवसा धुणइ पुराणपावगं, मणवयकायसुसंवुडे जे स भिक्खू।।
-दशवैकालिकसूत्र 10.7

अर्थ-साधु की दिनचर्या का वर्णन करते हुए शास्त्रकारों ने कहा है कि-सम्यग्दृष्टि साधक सदा ज्ञान, तप और संयम के सम्बन्ध में विवेक से चलता है। मन, वाणी और काय-योग की चञ्चलता कर्म ग्रहण में प्रमुख कारण है, इसी से शुभाशुभ कर्म आते हैं, अत: मुमुक्षु मन, वाणी और काया के अशुभ योगों को रोककर शुभयोग में और शुभयोग से शुद्ध, शुद्धतर एवं शुद्धतम योग की ओर बढ़ता है और निर्दोष तप द्वारा पूर्व सञ्चित कर्मों का क्षय करता है, वह सच्चा भिक्षु है।

विवेचन-भिक्षु की अनेक विशेषताओं का वर्णन दशवैकालिकसूत्र के दसवें अध्ययन 'स भिक्खु' में प्राप्त होता है। वैसे तो सम्पूर्ण दशवैकालिकसूत्र भिक्षु, श्रमण के आचार की विशेषताओं से सम्पन्न है, इसी प्रकार उत्तराध्ययनसूत्र का 15वाँ अध्ययन और 35वाँ अध्ययन भी श्रमण की विशेषताओं का प्रतिपादन करता है। आचाराङ्गसूत्र, सूत्रकृताङ्गसूत्र आदि विभिन्न आगमों में श्रमणाचार का विशेष निरूपण हुआ है।

प्रस्तुत गाथा में प्रतिपादन किया गया है कि जो सम्यग्दृष्टि से सम्पन्न है, सदैव मूढ़तारहित है, ज्ञान, संयम और तप में निरत है, मन-वचन और काया से भलीभाँति संवर युक्त है तथा तपस्या के द्वारा पुराने कर्मों को धुनता रहता है, वह भिक्षु है।

भिक्षु महान् साधक होता है। वह आत्मार्थी होता है। उसका लक्ष्य स्पष्ट होता है। वह व्यर्थ के चिन्तन, व्यर्थ के संलाप और व्यर्थ के कार्यों से दूर रहकर अपने साध्य की सिद्धि में संलग्न रहता है। प्रस्तुत गाथा में भिक्षु की पाँच विशेषताएँ प्रतिपादित की गई हैं-

1. सम्मदिट्ठी

भिक्षु सम्यग्दृष्टि से सम्पन्न होता है। सम्यग्दृष्टि का तात्पर्य है-सत्य के प्रति निष्ठा, सत्य को जानने एवं आचरण में लाने के प्रति आन्तरिक आत्मगुण। इस गुण से सम्पन्न साधक ही अपने जीवन को साधना की प्रयोगशाला बना पाता है। उसकी दूसरों से सुख की कोई आशा नहीं होती, अपितु वह सबके प्रति मैत्री और करुणा से युक्त होकर सबका भला चाहता है। वह इन्द्रियजन्य सुख भोगों की सीमाओं को जानकर अनन्त आत्मिक सुख की प्राप्ति हेतु सन्नद्ध होता है। वह अपने पूर्व कर्मों की निर्जरा करने हेतु संयम और तप का जीवन जीता है।

2. सया अमूढे

वह सदा जागृत रहता है, संसार के सुखों को देखकर भी मूढ़ नहीं बनता अर्थात् उनके प्रति आकर्षित नहीं होता है। उसे सदैव यह ज्ञात होता है कि उसका लक्ष्य क्या है? शरीर को वह साधन मानता है और सुकुमारता का त्याग करता है, स्वयं की यशकीर्ति की अभिलाषा, पूज्यता आदि की वाञ्छा से भी दूर रहता है। दूसरे शब्दों में कहें तो वह अप्रमत्त होता है।

3. नाणे तवे संजमे य

वह अपने समय का सदुपयोग ज्ञान, तप और संयम में करता है। ये तीनों आत्मकल्याणकारी हैं। पूर्वबद्ध कर्मों का क्षय करने एवं नये कर्मों के आस्रव को रोकने में इन तीनों की भूमिका रहती है। ज्ञान से यहाँ आशय सम्यग्ज्ञान से है, जो आगम के स्वाध्याय और गुरुजनों के सान्निध्य से आत्मचिन्तन पूर्वक प्रकट होता है। ज्ञान ही साधक को साधना में टिकाए रखता है। क्योंकि क्या आचरणीय है और क्या अनाचरणीय है, इसका भेद ज्ञान से ही प्रकट होता है। तप और संयम भी

शेषांश पृष्ठ 14 पर

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

खुद सुधरते हुए, संसार का सुधार करें

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- महावीर ने मार्ग बताया कि अपनी चोटी पहले पकड़कर, खुद सुधरते हुए संसार का सुधार करो।
- यदि दूसरों को देखकर तालियाँ बजाते रहेंगे और घर में करने-कराने को कुछ भी नहीं है तो वास्तव में समाज का कोई गौरव नहीं होगा।
- सद्गृहस्थ वह है जो सत्पात्र को रोज दान देवे।
- देव-भक्ति, गुरु-सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप और दान-ये गृहस्थ के षट् कर्म बताये गये हैं।
- आपका दान जनता की नज़र में जल्दी आ सकता है, लेकिन साधु का दान देखने में नहीं आता।
- नाम के भूखे महानुभाव ज्यादा हैं और काम करने के कम।
- यदि दान का उचित उपयोग करें तो समाज में देने वालों की कमी नहीं है।
- आप द्रव्य का त्याग करेंगे तो ममता घटेगी। दूसरी बात समाज में त्याग की परिपाटी कायम रहेगी। तीसरी बात, त्याग करने से समाज दुर्बल और पराश्रित नहीं रहेगा, अपने पैरों पर खड़ा रह सकेगा।
- जैनधर्म जैसा ऊँचा धर्म पाकर आप पिछड़े रह गये, तो इससे ज्यादा कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी।
- द्रव्य-दया से ही जैनधर्म ऊँचा नहीं उठेगा, द्रव्य-दया के साथ-साथ भाव-दया भी करें। जैसे नमक के बिना भोजन अच्छा नहीं लगता है, उसी तरह द्रव्य-दया के साथ भाव दया भी आवश्यक है।
- आप चाहे तप कीजिये, दया कीजिये, शीलव्रत धारण कीजिये, दान दीजिये, जो कुछ भी कीजिये निष्कपट भाव से, सरल मन से कीजिये। ऐसा नहीं हो कि मन में कुछ और है और बाहर कुछ और।
- सही आराधना करनी है तो तन से, मन से, जीवन से कपट को हटाकर साधना के मार्ग में आगे आना चाहिए।
- मन में गाँठ बाँधकर रखोगे तो साथ में काम करने वालों की गाड़ी आगे नहीं चलेगी, गाड़ी अटक जाएगी।
- जिस प्रकार स्वादु फल वाले वृक्ष पर पक्षी मण्डराते हैं; इसी प्रकार रस-भोजी को विषय घेरे रहते हैं।
- कर्णप्रिय गीत सुनना, सुन्दर रूप और चलचित्र देखना, तेल-फुलेल लगाना आदि कामनाएँ (लहरें) उसी में उत्पन्न होंगी जो सरस और उत्तेजक पदार्थों का सेवन करता है।
- हमारे भीतर जो चेतना का नाग है वह सोया पड़ा है, उसको जगाने के लिए भगवान की वाणी का सुन्दर स्वर सुनाना पड़ेगा।
- जब तक विषय-कषाय नहीं हटेंगे, तब तक जीवन का मैलापन नहीं हटेगा।
- जिस तरह मनुष्य को अपनी ही जूती काट खाती है, उसी तरह अपना ही मन जीव को दण्ड देता है।
- यदि अपने को, अपनी वाणी को, अपनी काया को आत्मा के अभिमुख कर दिया, आत्म-भाव में लगा दिया तो मन अदण्ड का कारण बनेगा।
- सामायिक की साधना करोगे तो तुम्हारा मन अदण्ड बन जाएगा, वचन भी अदण्ड बन जाएगा और काया भी अदण्ड बन जाएगी।
- दण्ड से अदण्ड में लाने वाली क्रिया का नाम सामायिक है।
- महापुरुषों के सम्पर्क में रहेंगे तो दिल-दिमाग आर्त्त और रौद्र की ओर नहीं जाएगा।

-'अमृत-वाक्' पुस्तक से साभार

10 फरवरी 2021
जिनवाणी 13
ISSN 2249-2011

प्रवचन

हिंसा को रोकें, अन्यथा फल भोगना होगा

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा जयपुर चातुर्मास में 07 अक्टूबर, 1993 को प्रदत्त प्रवचन का आशुलेखन श्री अशोकजी जैन 'हरसाना', जयपुर द्वारा किया गया है। यह प्रवचन कोरोना काल में विशेष प्रासङ्गिक हो गया है। **-सम्पादक**

अज्ञान अन्धकार का आवरण हटाकर अनन्त ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करने वाले तीर्थंकर भगवन्त तथा ज्ञान के प्रकाश में स्वयं अपना जीवन, धर्म के लिए समर्पित कर दूसरों को धर्म-मार्ग में बढ़ने की प्रेरणा करने वाले परमेष्ठी भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन।

तीर्थंकर भगवान महावीर की अन्तिम अनुपम वाणी उत्तराध्ययनसूत्र अपने जीवन से पाप हटाकर, काषायिक भावों को दूरकर, समत्व में चलने की प्रेरणा प्रदान कर रहा है। पाप न करना एक रूप है, तो दूसरा रूप पाप करने वालों को रोकना। धर्म के दो रूप तीर्थंकर भगवन्त प्ररूपित कर रहे हैं–1. निवृत्ति मार्ग 2. प्रवृत्ति मार्ग। 1. निषेधात्मक मार्ग 2. विधेयात्मक। 1. स्वयं नहीं करना। 2. दूसरे करने वालों को रोकने का प्रयास करना। शास्त्र तो इससे बढ़कर कहता है कि पाप करना नहीं, कराना नहीं तथा करने वालों का अनुमोदन भी नहीं करना। इस तरह धर्म के 3 रूप प्ररूपित किये जा रहे हैं।

सैकड़ों हजारों लोग अपने हाथ से पञ्चेन्द्रिय जीवों का घात नहीं करते। त्रस प्राणियों की विराधना नहीं करते हैं। हजारों मिलेंगे, पर नहीं करने के साथ करने वालों को समझाकर उन्हें पाप से हटाना, यह धर्म का दूसरा रूप है। यह अधिक लाभ का कारण है। धर्म क्रिया का कोई रूप लें। यदि आप सामायिक करने लगे, 24 घन्टे सामायिक करें, तो भी 30 सामायिक ही कर सकेंगे। एक मिनट का भी विराम न हो तो। अगर सामायिक का महत्त्व समझ कर समता की, सन्तोष की दूसरों को प्रेरणा करें, तो आप हजारों लाखों सामायिक का लाभ कमा सकते हैं। स्वयं का करना सीमित है, कराना उससे अधिक है। अनुमोदन तो जितने भी साधक आत्मा है, उन सबका क्षण में अनुमोदन किया जा सकता है। करना, कराना, अनुमोदन करना, धर्म के तीन रूप हैं। इसमें सबसे अधिक आवश्यकता है 'दया धर्म की।'

तत्त्वार्थसूत्र का एक सूत्र है–'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' प्रत्येक जीव एक दूसरे का उपकारी है। एक दूसरे के सहकार से जीवन चलता है। मात्र अपने लिये सोचना, दूसरों के लिये निष्क्रिय बन जाना, यह जीवन का सही रूप नहीं है।

आज आवश्यकता है धर्मियों को, अहिंसकों को, दया धर्म के प्रेमियों को, एकजुट होकर हिंसा का विरोध करने की। हर जीव जीवन में उपकारी है, शास्त्र तो यहाँ तक कहता है कि ज़हरीला जीव भी उपकारी है, जिसको आप मारने वाला कहते हो, वह भी किसी न किसी रूप में उपकारी है। ऐसे जीव जिनका अङ्ग काम आता है, उनके उपकार की तो बात ही क्या? गाय गोबर देती है, उसकी हड्डी काम आती है, चमड़ी काम आती है, वह दूध देती है जिससे दही, घी बनते हैं। उसका मूत्र भी काम आता है।

मैंने सुना है, आपने देखा होगा, कई बार जन्म के साथ बच्चे की माता गुजर जाती है, और वह बच्चा गाय, बकरी आदि पशुओं के दूध के सहारे जीता है। ऐसा उपयोगी जानवर, पर आज लोग उनकी हिंसा कर रहे हैं। आज आवश्यकता है ऐसे पशुओं की हत्याओं को रोकने की। किस मात्रा में हत्या हो रही है? कल एक भाई आये, वे स्टेशन मास्टर थे। कहने लगे रात के 11 बजे के बाद राजस्थान से इतने ट्रक गायों से एवं बछड़ों से भरकर पाकिस्तान की ओर जाते हैं। एक के बाद एक ट्रक का नम्बर लगा ही रहता है, मिलीभगत है। धन के पीछे लोगों ने अपनी मर्यादा, अपना अधिकार सब कुछ गिरवी रख दिया है। जिस संख्या में जीव हिंसा हो रही है, उससे आपको नुकसान और खामियाजा भी भुगतना पड़ेगा।

शरीर पर विपरीत तत्त्वों का भी प्रभाव पड़ता है। अखाद्य पदार्थों के खाने से शरीर ज़हरीला हो जाता है। ऐसे भी लोग हैं जो मच्छर क्या, बिच्छू भी खा जाते हैं।

हिंसा बढ़ते-बढ़ते प्रकृति ऐसा सर्वनाश करेगी। (जिससे कोरोना काल में हम सब देख रहे हैं। जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती) आप समझ रहे हैं कि आप सुखी हैं, आप अपना जीवन सुखमय बिता रहे हैं, किन्तु इस हिंसा का फल आप सबको भोगना पड़ेगा। दु:खी जितना प्रयत्न नहीं कर सकता, सामर्थ्यहीन जितना प्रयत्न नहीं कर सकता, सामर्थ्यवान उतना प्रयत्न कर सकता है, किन्तु वह भी हिंसा को रोकने का प्रयत्न नहीं करता, तो समझना चाहिये वह अपने पुरुषार्थ को छुपा कर चल रहा है। भगवान महावीर ने कहा है-

मानव की कैसी आदत हो गई है कि शरीर में शक्ति होते हुए भी, एक बार नहीं, चार बार खाता है। तप का समय आता है तो कमज़ोरी जाहिर करता है, ऐसा व्यक्ति तप का चोर है। धर्म मार्ग में चलने का सामर्थ्य रखता है, वह भी यदि सामर्थ्य छुपाता है, तो चोर है। आचरण का भी चोर है, भावनाओं का भी चोर है, ऐसा जीव अपने पुरुषार्थ का उपयोग नहीं करने से आगे हीन जाति में उत्पन्न हुआ। धन में पुरुषार्थ, भोग में पुरुषार्थ फोड़ने वाले, जब धर्म में पुरुषार्थ करेंगे तो उनकी आवाज में बल आयेगा। अभी मुनिजी कह रहे थे, एक बहिन का त्याग रंग लाया, सरकार को कत्लखाने बन्द करने पड़े। जो बिना लाइसेन्स चलते थे, उनको बन्द कराने का वचन दिया गया। आप भी एक जुट होकर प्रयास करें। एक भाई 100 गायें पाल सकता है, उसकी खुद की जरूरत ही नहीं, मोहल्ले की जरूरत पूरी हो जायेगी। आदमी का आदमी से विश्वास हट गया, इसलिये कुत्ता पाला जा रहा है। आये दिन पढ़ते रहते हैं वह नौकर सामान लेकर भाग गया, उस नौकर ने हत्या कर दी। आदमी पर तो विश्वास खत्म हो गया है। अरे भाई कुत्ता मात्र स्वामि-भक्त के अलावा कुछ काम नहीं आयेगा। गाय कितनी उपयोगशाली है। गायों को पालने के लिए कोई तैयार नहीं है, यही सिलसिला चला तो कुछ साल बाद देखने को ये जानवर नहीं मिलेंगे।

दया करना आपका कर्त्तव्य है, दया पालना आपका धर्म है। इसलिये घर की तरह पशुओं की रक्षा कीजिये। किस दिन, किसको क्या लग जाय, कहा नहीं जा सकता। तपस्या के पारणे के दिन भाई मानचन्द हीरावत सन्तों के दर्शन करने आया। जो भाई कभी सन्तों के दर्शन के लिये उपस्थित नहीं होता था, सरल स्वभाव से बोला-बापजी! मुझे शीलव्रत अङ्गीकार करा दो, प्रतिदिन आने लगा। 25 दिन में क्या परिवर्तन हुआ, कौन जानता था। दृष्टि बदलने की जरूरत है। न जाने किस आदमी को धर्म की अच्छी बात कब लग जाये। आप भी पुरुषार्थ करें। स्वयं अहिंसक बनिये, दूसरों को अहिंसक बनाइये, तो अवश्य शान्ति सुख प्राप्त करेंगे। ■

पृष्ठ 11 का शेषांश

साधक की साधना को तीव्रता प्रदान करते हैं। मुक्ति प्राप्त करने में संयम और तप स्वरूप चारित्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है।

4. तवसा धुणइ पुराणपावगं

बाह्य एवं आभ्यन्तर दोनों प्रकार के तप तथा इनके अनशन आदि और प्रायश्चित्त आदि छह-छह उप प्रकार भी पूर्व सञ्चित कर्मों का क्षय करने में साधन हैं। हमारे कर्म संस्कार कितने भी प्रगाढ़ हों, तपस्या के द्वारा उनको रुई की भाँति धुनकर हल्का करते हुए पूर्णत: समाप्त किया जा सकता है। इसी सत्य को साधना का अङ्ग बनाकर श्रमण भिक्षु हर परिस्थिति में समता रखता हुआ द्विविध तप साधना करता है।

5. मणवयकायसुसंवुडे

मन, वचन और काया से प्रवृत्ति होती है, इनसे सद्प्रवृत्ति होती है और असत्प्रवृत्ति भी होती है। साधक असत्प्रवृत्ति का संवर करता है जिसे गुप्ति कहा गया है। पाँच समितियों का पालन करने में वह तत्पर होकर प्रवृत्ति भी करता है। इस प्रकार एक श्रमण भिक्षु की विभिन्न विशेषताओं को एक ही गाथा में आगमकार ने प्रकट किया है।

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 15
ISSN 2249-2011

प्रवचन

नवकार मन्त्र है महामन्त्र

महान् अध्यवसायी, भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के द्वारा घोषित भावी आचार्य, महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. द्वारा 20 अक्टूबर, 2021 को राता उपाश्रय, पीपाड़सिटी के चातुर्मास में फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

निज को निज से निहारकर निराकार-निरञ्जन पद को प्राप्त करने वाले अनन्त-अनन्त उपकारी तीर्थङ्कर भगवन्तों को वन्दन!

प्रतिकूलता में समता का सर्जन और अनुकूलता में आराधना का अमृत-पान करने वाले आगमवेत्ता-प्रसन्नचेता अनन्त-अनन्त उपकारी आचार्य भगवन्त को वन्दन करने के पश्चात्.....!

बन्धुओं!

नवपद-आराधना का आज अन्तिम और शिखर दिवस है। इस दिन देवाधिदेव द्वारा रचित नवकार महामन्त्र का जप और आयम्बिल-आराधना का तप किया जाता है।

संसार में अनेक मन्त्र हैं, पर महामन्त्र तो यही एक नवकार महामन्त्र है। वर्तमान में जितने भी अन्य मन्त्र हैं वे देवाधीन हैं, पर नवकार महामन्त्र तो देवाधिदेव द्वारा प्रतिष्ठापित है। इस महामन्त्र की महिमा का गान सभी जैनी करते हैं।

हमें आज इस नमस्कार महामन्त्र का माहात्म्य समझना है। नवकार को महामन्त्र क्यों कहा जाता है? आपने सुना होगा कि हर धर्म में मन्त्रों का विधान है। जैन, बौद्ध, वैदिक, सनातन आदि सभी धर्मों में कोई-न-कोई प्रचलित मन्त्र है जिसका स्मरण-भजन-कीर्तन किया जाता है। गायत्री मन्त्र हो या अन्य कोई मन्त्र ही क्यों न हो, सब मन्त्रों में कोई-न-कोई अधिष्ठाता देव होता है, लेकिन नवकार महामन्त्र तो देवाधिदेव तीर्थङ्कर भगवन्त द्वारा प्रदत्त महामन्त्र है। इस महामन्त्र में विद्या भी है तो मन्त्र शक्ति भी है। इस महामन्त्र का गान बड़े-बड़े महापुरुषों ने किया है तथा आप-हम-सभी को इस महामन्त्र की महिमा सुनने को मिलती है। अनेक भजन-गीत हैं जो प्राय: हर जगह गाये जाते हैं। प्रचलित भजनों में से एक है-

नवकार मन्त्र है महामन्त्र, इस मन्त्र की महिमा भारी है।
आगम में कही-गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी है।।

आप-सब भाई मेरे साथ बोल रहे हैं। इसका मतलब है कि हम-सब महामन्त्र की महिमा का गान कर रहे हैं। हम-सबको नित्य-प्रति नमस्कार महामन्त्र का जाप करना चाहिए। क्यों, तो यह महामन्त्र तीर्थङ्कर भगवन्तों द्वारा प्रतिष्ठापित है।

आप जानते हैं कि अनन्त चौबीसियाँ हो गई हैं। आपको यदि कोई यह पूछे कि यह महामन्त्र कब से है? आपका जवाब होना चाहिए कि यह महामन्त्र अनादिकाल से है, शाश्वत है, सदा से है और सदा रहने वाला है।

नवकार महामन्त्र के अनेक लाभ हैं। आपने कई बार सुना है और आप यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि नवकार महामन्त्र के स्मरण से, जप से शूली का सिंहासन बन सकता है। आग पानी में परिवर्तित हो सकती है। सर्प फूलमाला बन सकता है। आग-पानी में बदल सकती है। स्वागत-सत्कार-सम्मान सब जगह मिल सकता है, बशर्ते कि इस महामन्त्र का श्रद्धा-भक्ति के साथ जप करें, ध्यान करें, स्मरण करें।

मुझे यहाँ एक दृष्टान्त याद आ रहा रहा है। एक सेठजी का लड़का जंगल के रास्ते से गुज़र रहा था।

लड़के को साँप ने डस लिया। सेठजी को उस समय अन्य तो कोई उपाय या उपक्रम ध्यान में नहीं आया, लेकिन सेठजी ने सुन रखा था कि यहीं का एक मुस्लिम भाई साँप के काटे का ज़हर उतारने में माहिर है।

सेठ साहब अपने बच्चे को लेकर मुस्लिम के घर पहुँचे और कहा कि जंगल में जब यह गुज़र रहा था तब किसी साँप ने डस लिया।

मुस्लिम भाई ने कहा–सेठजी! आप घबराएँ नहीं, मैं साँप के ज़हर को उतारने का प्रयत्न करता हूँ। उस मुस्लिम भाई ने नवकार महामन्त्र का स्मरण किया और ज्यों–ज्यों वह जाप करता जाता सर्प का ज़हर कम होता जाता। देखते–ही–देखते साँप का ज़हर तो उतरा ही, लड़का भी फिर से स्वस्थ हो गया।

मुस्लिम भाई की मन्त्र की शक्ति से सेठजी प्रभावित हुए और बोले–भाई! तुमने किस मन्त्र से साँप का ज़हर उतारा है? मुस्लिम भाई प्रकृति का सरल था अत: उसने बता दिया कि मैंने तो नवकार महामन्त्र के स्मरण से ज़हर उतारा है। उसने यह भी बता दिया कि मुझे तो यह मन्त्र पूज्य श्री चौथमलजी म.सा. से मिला है। मैंने इस मन्त्र से कइयों के ज़हर उतारे हैं।

सेठ साहब को बड़ा आश्चर्य हुआ कि हम जिस महामन्त्र को रोज बोलते हैं, जप करते हैं, माला फेरते हैं हमारे में से किसी को ज़हर उतारने की कला नहीं आई, इसे कैसे सिद्धि मिली?

अधिकतर लोग महामन्त्र नवकार बोलते हैं; स्मरण करते हैं, माला फेरते हैं, फिर भी हमें वैसा फायदा क्यों नहीं होता? बात यह है कि हर मन्त्र में ताकत होती है और महामन्त्र में तो अपार शक्ति है ही, पर होनी चाहिए दृढ़ श्रद्धा। आप में यदि श्रद्धा–भक्ति नहीं, अटूट आस्था नहीं तो साँप के ज़हर को उतारने की बात तो छोड़िये, छोटा–मोटे टाटिया का ज़हर भी नहीं उतरे।

इस महामन्त्र के स्मरण से, ध्यान से, जप और जाप से रोग–शोक, दु:ख–दारिद्र्य मिट सकते हैं यदि महामन्त्र पर दृढ़ श्रद्धा हो, अटूट विश्वास हो।

आपने श्रीपाल चरित्र कई बार सुना है। आपको यह भी मालूम है कि कोढ़ जैसी भयंकर बीमारी होते हुए भी नमस्कार महामन्त्र के जप से और आयम्बिल–आराधना से कोढ़ तो दूर हुआ ही, काया भी कञ्चन जैसी बन गई।

आज आयम्बिल–ओली का भी अन्तिम दिन है। आयम्बिल–तप का विशेष महत्त्व है। नमस्कार महामन्त्र और आयम्बिल–आराधना से दुष्कर–से–दुष्कर काम होते देर नहीं लगती और दोनों से किसी को कुछ भी नुकसान तक नहीं होता।

नमस्कार महामन्त्र और आयम्बिल–आराधना आत्म–विकास का मूल मन्त्र है। आपने सुना होगा, अनुभव में भी आया होगा कि बड़े–से–बड़ा रोग नवकार महामन्त्र से शान्त हो सकता है तो एक आयम्बिल के चलते पूरे नगर की रक्षा–सुरक्षा भी हो सकती है। आत्म–विकास में इन दोनों की विशेष सहायता प्राप्त हो सकती है। विकास के पथ पर आपकी गति–प्रगति बनती और बढ़ती है तो आप जप–तप की निरन्तर साधना करें।

यह महामन्त्र अनादिकाल से अक्षय है। कहने को तो लोग महामन्त्र को कल्पवृक्ष, चिन्तामणि, कामधेनु, पारस पत्थर जैसे अनेकानेक नामों से कह दें, पर यह एक ऐसा महामन्त्र है जो तन–मन को तो नीरोग रखता ही है, सुख–शान्ति और आनन्द भी देता है। तुलना करने की दृष्टि से नवकार महामन्त्र को कल्पवृक्ष की संज्ञा भले ही दे दें, लेकिन आगम में कल्पवृक्ष एवं महामन्त्र की तुलना का कोई उल्लेख तक नहीं है।

श्रद्धा–भक्ति के साथ नवकार महामन्त्र के स्मरण से सब कुछ मिल सकता है। आपको क्या चाहिए? आपका एक बड़ा त्योहार दीपावली नजदीक है। आपको भी एक ऐसा मन्त्र चाहिए जो आपको माला–माल कर दे।

मन्त्र की चाहना–कामना सब करते हैं, परन्तु सबकी भावना पूरी नहीं हो सकती। आप करना ही

चाहते हैं तो अनशन करें, ऊनोदरी करें, रसना का त्याग करें। ज्ञानियों ने ठीक ही कहा है-रस विजेता-जगत् विजेता बन सकता है। इस लालीबाई (जिह्वा) को वश में रखना सरल नहीं है। यह लालीबाई खाकर बिगाड़ती है तो बोलकर भी बिगाड़ती है।

भगवान महावीर के शासन में श्रेष्ठ सन्त कौन? इस पृच्छा पर भगवान ने धन्ना अनगार का नाम बताया। क्यों? क्या कारण था जिसमें धन्ना अनगार के काम को प्रशंसनीय कहा गया? भगवान के शासन में अनेक तपस्वी सन्त थे। तप भी कैसा? उपवास-बेला-तेला ही नहीं, मासक्षपण और चौमासी तप जैसे बड़े तप भी चलते थे, लेकिन भगवान ने धन्ना अनगार का तप श्रेष्ठ बताया।

आज भी तप करने वाले तप करते हैं। तपस्वी तप करे वहाँ तक तो ठीक, लेकिन पारणे में क्या-क्या आयटम होंगे, इसकी पहले से व्यवस्था की बात क्यों? एक है जो तप में तेला करता है और पारणे में आयम्बिल है तो.....?

भगवान ने धन्ना अनगार की बात कही तो उसके पीछे कारण था। उनके पारणे में ऐसी वस्तु जिसे भिखारी भी नहीं खाए, वैसी वस्तु आती। भिखारी भूखा रह सकता है, लेकिन वैसा सड़ा-गला नहीं खाता। धन्ना अनगार श्रेष्ठ कहा गया उसके पीछे रस-त्याग का भाव था।

अभी आपने मुनिश्री से सुना कि कभी घी घणा तो कभी मुट्ठी चणा और कभी वह भी नहीं। आप सुनते तो हैं, परन्तु उन सुनी-सुनाई बातों को जीवन में कितना उतारते हैं? आप सुनें उसे जीवन में चरितार्थ करें, यही सुनने का सार है।

आपने अभी आयम्बिल-तप की महिमा और महत्त्व सुना है। यह महत्त्व सदा से रहा है, सदा रहेगा भी। आप आज के दिन आयम्बिल करने आयम्बिलशाला जाते हैं। वहाँ पर अनेक आयटम बनते हैं। आयम्बिल के ढोकले, आयम्बिल की इडली, आयम्बिल की चटनी और न जाने कितने-कितने आयटम। आप सब आयटम का सेवन करने के बजाय शुद्ध रीति से सीमित द्रव्यों के साथ आयम्बिल की आराधना करें तो वैसा करना आपकी आत्म-साधना के लिए हितावह होगा। नमस्कार महामन्त्र और आयम्बिल-आराधना के लिए बुहत-कुछ कहा जा सकता है, लेकिन समय-सीमा के कारण आज इतना ही कहना है कि आप जपाराधन और तपाराधन में निरन्तर आगे बढ़ें, इसी मंगल मनीषा के साथ.....!

धर्म ही सच्चा शरणा

श्रीमती अंशु संजय सुराणा

(तर्ज :: किसने देखा, किसने जाना...)

गुरुवर ने सुनाया, हमको समझाया, जिनवाणी का सार।
धर्म ही सच्चा शरणा, कर देता बेड़ा पार...।।

कुंभी में उल्टा लटकाया, छेदन-भेदन खूब कराया।
भूखी लगी तो माँस खिलाया, प्यास लगी तो रुधिर पिलाया।
नरक गति में सहे जीव ने, परमाधामी के वार।।1।।

सर्दी गर्मी भूख प्यास को पड़े विवशता से सहना।
तिर्यञ्च के दु:ख चक्षु से दिखते, कैदी बन पिञ्जरे में रहना
ज़िन्दा पकते बोझ उठाते, चाबुक की खाते मार।।2।।

देवलोक के वैभव में भी, शाश्वत सुख का वास नहीं।
तृष्णा, परिग्रह में ही भटकते, शान्ति का आभास नहीं,
पर-धन पर-नारी को चुराया, वज्र के सहे प्रहार।।3।।

स्व आत्मा से हो वास्ता, जिनवाणी पर दृढ़ आस्था।
मानव भव में ही पा सकते, मुक्तिपुरी का रास्ता,
जाग रे चेतन! मन को समझा ले, व्यर्थ जन्म न हार।।4।।

लख चौरासी योनि भटके, जन्म-मरण का दु:ख उठाया।
अतिशय पुण्योदय से जिनवाणी और मनुज भव पाया,
एक ही लक्ष्य को रखना है सामने, तिरना है संसार।।5।।

-एस 149, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 18
ISSN 2249-2011

प्रवचन

सच्चा और अच्छा मित्र है : संयमित मन

मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा जोधपुर चातुर्मास 2019 में फरमाये गए इस प्रवचन का संकलन एवं आलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

आगम ज्ञान के आधार पर प्रभु वीर की अन्तिम वाणी उत्तराध्ययन सूत्र का निरन्तर स्वाध्याय चल रहा है। इस स्वाध्याय को ही लोग प्रवचन के नाम से पुकारते हैं। इस आगम ज्ञान के प्रत्येक अक्षर में आनन्द और साधना के सूत्र समाये हुए हैं। प्रत्येक वाक्य के अन्दर वैराग्य की महती प्रेरणा रही हुई है। प्रत्येक सूत्र के अन्दर सत्य का अनन्त भाव समाया हुआ है। हम उत्तराध्ययन सूत्र के 29वें अध्ययन के 25वें सूत्र पर चर्चा कर रहे हैं- प्रभु से प्रश्न किया गया कि-**मणसन्निवेसणयाएणं भंते जीवे किं जणयइ?** मन की एकाग्रता से जीव को क्या लाभ होता है? आगम ज्ञान में मन की चर्चा कई स्थानों पर पढ़ने को मिलती है। उत्तराध्ययनसूत्र के 23वें अध्ययन में केशी-गौतम के संवाद में तथा पाँच अभिगम में मन को लेकर चर्चा आयी है, साथ ही 17 प्रकार के संयम में मन का संयम भी कहा है तो नौ प्रकार के पुण्य में मन को एक पुण्य भी कहा है। यह प्रश्न इसलिए किया कि आज लगभग अधिकांश लोग मन की विचित्रता से प्रभावित हैं। वे असमञ्जस में हैं कि यह मन एक जगह केन्द्रित क्यों नहीं रहता? साधना से जुड़े हुए लोग कई बार शिकायत स्वर में कहते हैं कि जब भी माला फेरते हैं, सामायिक करते हैं, पता नहीं यह मन कहाँ-कहाँ भटकता रहता है? इसे कैसे स्थिर करें, कैसे संयमित करें?

मन का स्वभाव

मन एक पौद्गलिक शक्ति है जिसका कार्य है मनन करना, सोचते रहना। अनन्त पुण्य से इस मन की प्राप्ति होती है। द्रव्य मन के प्राप्त होने में शुभ नामकर्म का उदय कारण बनता है तथा भाव मन ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त होता है। आज जिन-जिन जीवों को मन की प्राप्ति हुई है उसमें पूर्वजन्म की विशिष्ट करणी का योगदान रहा हुआ होता है। मन एक शक्ति है, ऊर्जा है, सोचने, समझने और जानने में साधन है। मन का कार्य है मनन करने का।

मन की चञ्चलता जग प्रसिद्ध है। अच्छे-अच्छे ऋषि, महर्षि, तपस्वी, साधक, सन्त भी मन की चञ्चलता से मलिन होकर पथ से भटक गये। मन का स्वभाव है मनन करना। अन्य अनेक पदार्थ अपने स्वभाव का त्याग नहीं करते जैसे करेला वर्षों के बाद भी कड़वा ही रहता है, पत्थर हमेशा कठोर ही रहेगा, फूल अपनी कोमलता और सौरभ लिए हुए रहता है इनके ये स्वभाव बदलते नहीं हैं, उसी अवस्था में रहते हैं। मगर यह मन भीतर में रहे कषायों से रञ्जित होने के कारण दुर्मन में कब परिवर्तित हो जाये, पता ही नहीं चलता है। आज वह सज्जनता का भाव रखता है, मगर अगले ही पल कब दुर्जनता में बदल जाए पता नहीं। आज वह समझदार है कल वह नासमझी का शिकार बन जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं। आज वह पवित्र हुआ नजर आता है वह कब वासना के दलदल में सन जाए, कोई कह नहीं सकता। आज वह किसी पर मरने के लिए तैयार हो जाता है तो कल वह उसी को मारने का संकल्प जगा देता है। इसीलिए कहा है मन का स्वभाव नियत नहीं है, चञ्चल है।

असंयमित मन शत्रु तथा संयमित मन मित्र

ऐसी स्थिति में मनन करने वाले इस मन को सही दिशा देनी है, इसीलिए इस मन को समझाना है, समझा हुआ मन मित्र बन जाता है और वह मित्र बना हुआ मन मञ्ज़िल की प्राप्ति में अद्वितीय सहयोगी बन जाता है। यदि यह मन समझा हुआ नहीं रहा, संयमित और नियन्त्रित नहीं रहा, निरंकुश और चञ्चल रहा तो मात्र मन की सोच और कल्पना के आधार पर भी मनुष्य चिकने कर्मों का बन्ध कर पतन कर लेता है। जबकि उस पाप की भागीदारी में काया सक्रिय नहीं है, केवल मन ही कल्पना के आधार पर नरक और निगोद की नींव डाल देता है। तन्दुल मत्स्य जो एक हजार योजन की अवगाहना वाले मगरमच्छ के शरीर पर रहा हुआ है, देखता है कि मगरमच्छ जो मुँह खोले पसरकर रहा हुआ है उसके मुँह में अनेकों मछलियाँ आ रही हैं, जा रही हैं। ये दृश्य देख वह तन्दुल मत्स्य मन से सोचता है कि–'ये कैसा पागल मगरमच्छ है जो इतनी सारी मछलियों को गवां रहा है। यदि इसकी जगह मैं होऊँ तो एक ही झटके में सबको निगल जाऊँ।' उसके इस हिंसाजनक अशुभ विचारों के कारण भविष्य में नरक का अतिथि बन जाता है जहाँ असंख्य काल तक घोर वेदना, आर्त्तध्यान का शिकार बन कर महादु:ख उठाने के लिए मजबूर बन जाता है। जरा गौर करें वह तन्दुल मत्स्य जिसकी काया तो चावल के दाने जितनी और जीना भी उसका अधिकतम 48 मिनट तक। काया से यदि पाप भी करता तो कितना करता, बहुत ही अल्प कर पाता। लेकिन असंयमित मन के कारण घोर कर्म बन्ध कर लेता है। ये बात आपने कई बार सुनी है, सम्भव है याद भी है और सम्भव है कि दूसरों को समझाने के लिए इस दृष्टान्त का प्रयोग भी करते हैं। मगर आज हम अपने आप निरीक्षण करें, खुद पर सोचें कि कहीं इस असंयमित मन के कारण अनावश्यक कर्मबन्ध तो नहीं कर रहे हैं। क्योंकि ज्योंहि हमारे सामने कोई घटना या परिस्थिति होती है, हम तत्काल ही अपनी सोच को बदल देते हैं। वह सोच कहीं कषाय से, विषय-विकार से तो नहीं जुड़ी हुई है। इस प्रकार का चिन्तन जरूर करें, नहीं तो कर्मबन्ध निश्चित है।

कुछ वर्षों पहले रात्रि में भाई लोग बैठे हुए थे। हवाई जहाज के हाईजैक होने की बात आई तो तत्काल ही एक भाई बोल पड़ा–'इन आतंकियों को तो तत्काल शूट कर देना चाहिए।' मैंने कहा–'अरे भाई! क्यों ऐसे रोष भाव में आकर हिंसाजनक परिणाम से कर्म का बन्ध कर रहे हो।' ये तो लोगों के सोचने की एक बात आपसे कही है। पता नहीं ऐसी कितनी ही परिस्थितियों के आधार पर यह मन क्या-क्या सोच लेता है। कभी राग के प्रवाह में बहकर कर्मबन्ध कर लेता है तो कभी ईर्ष्या, द्वेष, कषाय कलुषित बनकर कर्मों का उपार्जन कर बैठता है।

मन की शक्ति

यह बात भी प्रचलित है कि 'मन से बाँधे कर्म मन की सहायता से ही तोड़े जा सकते हैं।' इस वाक्य पर जरा गम्भीरता से सोचें कि यदि गति बिगड़ गई और बिना मन वाले असन्नी जीव बन गये तो यह कर्म का बोझा कितना पीड़ित करेगा, कितना दुर्गति में बार-बार धकेलता रहेगा। पता नहीं भविष्य में कब तो मन मिलेगा और कब कर्मबन्ध से छुटकारा पाने का अनुकूल अवसर मिलेगा। तत्त्ववेत्ता कहते हैं कि मन के अशुभ परिणामों से ही जीव विशेष कर्मबन्ध करता है। तत्त्वचर्चा में बात आती है कि एकेन्द्रिय जीव जहाँ सिर्फ काययोग ही है वहाँ वह यदि मोह कर्म का बन्ध करे तो एक सागरोपम स्थिति से अधिक नहीं कर सकता। आगे जैसे-जैसे इन्द्रिय साधन बढ़ते हैं वैसे-वैसे कर्म बन्ध की स्थिति बढ़ती जाती है। बिना मन वाले असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय जीव की यदि कर्मबन्ध की स्थिति बन्धती भी है तो एक हजार सागर की स्थिति से अधिक नहीं होती है, मगर ज्यों ही जीव को मन की शक्ति मिलती है, मन योग प्राप्त होता है और परिणाम अशुभ बना ले तो 70 कोटाकोटि

सागरोपम की स्थिति के कर्मबन्ध आत्मा पर लग जाते हैं। ये ज्ञानियों के वचन हैं, रञ्चमात्र भी शंका नहीं लावें, ज्ञानी के ज्ञानभाव में ये सब झलका है, इसलिए इस वीतराग की वाणी पर श्रद्धा रखते हुए एक ही बात सोचें– 'मैं अपने परिणामों पर कड़ी नज़र रखूँ, अपने विचारों को सम्भाल कर रखूँ, अशुभ विचारों से क्यों अनावश्यक कर्मबन्ध करूँ।'' अपनी इस आत्मा पर दया करो। इस आत्मा पर दया करते हुए पाप से आत्मा को बचायेंगे तो सर्वदया स्वत: सध जायेगी।

हमें यहाँ केवल यही सोचना है कि इस मन को कैसे संयमित रखें, कैसे समझाकर रखें? किसी एक भजन में युक्ति बताते हुए कहा–

धीरे-धीरे मोड़ तू इस मन को,
इस मन को तू इस मन को।
मन मोड़ा फिर डर नहीं,
कोई दूर प्रभु का घर नहीं।।
धीरे-धीरे मोड़ तू इस मन को,
इस मन को तू इस मन को।।

मन को कैसे स्थिर करें

उत्तराध्ययनसूत्र के 23वें अध्ययन में केशी श्रमण को मन की चञ्चलता की समस्या पर समाधान देते हुए गौतम स्वामी फरमाते हैं कि श्रुतज्ञान के आधार से यदि बार-बार मन को समझाने का अभ्यास करेंगे तो निश्चित सफलता मिलेगी। मन को संयमित करना कठिन है, लेकिन असम्भव नहीं। जैसे बच्चों को प्रेम से समझाने पर बच्चा समझ जाता है। बार-बार हेय, ज्ञेय, उपादेय आदि पर अनुचिन्तन करेंगे, अशुभ परिणामों का भविष्य देखेंगे तो भी मन को संयमित बनाने में सफल हो सकेंगे। इस अभ्यास से अवश्य सफलता मिलेगी और फिर मन को यदि सकारात्मक दिशा में जोड़कर रखेंगे तो उसके परिणामस्वरूप हमेशा प्रसन्नता खिली रहेगी और तन भी स्वस्थ रहेगा। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि जैसा हम सोचते हैं वैसा ही हमारे शरीर में रसायन स्रवित होता है। यदि अशुभ विचारों का संकल्प-विकल्प-चिन्तन चलता रहेगा, कषाय कलुषित विचारों में खोये रहेंगे तो आज जितने भी बी.पी. रोगी हैं, शरीर में शुगर की अधिकता है और भी कई प्रकार की घातक बीमारियाँ पनप रही हैं वे सब अधिकांश अशुभ विचारों का परिणाम है। प्रत्येक परिस्थिति में मन के परिणाम यदि सन्तुलित, संयमित रखेंगे तो भावों में शुभता ही रहेगी। सकारात्मकता प्रदान करेंगे तो उसके परिणाम स्वयं के लिए भी सुखद बनेंगे और वातावरण भी खुशियों से भरा रहेगा। याद रखें साधना की सिद्धि में मन की बड़ी भूमिका है, कहते हैं 'मन के बिना मोक्ष नहीं, तो मन को छोड़े बिना भी मोक्ष नहीं।' अर्थात् मन का महत्त्व त्रैकालिक रहा। इसलिए गुरु हस्ती फरमाया करते थे 'कुछ मत सीखो, सीखो सबसे पहले मन का दृढ़ निश्चय करना' कितनी यथार्थ बात है, ढ़ीला मन वाला, उदास एवं निराश मन वाला, किसी भी क्षेत्र में सफलता हासिल नहीं कर सकता। सबसे पहले मन को मजबूत करना, यानी 'मुझे यह कार्य करना ही है।' ऐसे भाव संयोजित करना, कहते हैं पूर्ण ईमानदारी और पूरे मनोयोग से कार्य करने वाले पर प्रकृति भी मेहरबान बनती है। एक बात याद रखें परिणाम को लेकर किसी भी प्रकार का संशय न पालें, बस अपने कार्य में पूर्ण मनोयोग से समर्पित रहें। अभिमन्यु ने कहा– 'हिम्मत से हारना मगर हिम्मत नहीं हारना' देखें चींटी जैसा क्षुद्र जीव भी गिरता है सौ बार, मगर निरन्तर प्रयास से सफलता को प्राप्त कर ही लेता है।

जैसा मन वैसा वातावरण

हमारे विचारों की तरंगें जैसी बनती हैं, उन तरंगों के अनुसार वातावरण निर्मित होता है। आपने सुन ही रखा है कि तीर्थंकर के समवसरण में जन्मजात वैरी भी दुश्मनी भुलाकर निर्भय, निश्चिन्त बनकर, बैठकर प्रभुवाणी सुनते हैं। अनेक योजन तक कोई भी भीति नहीं होती। कई जगह वर्णन मिलता है कि ऋषि-महर्षि का जब जहाँ जितने दिन निवास होता, वहाँ कई जीव निर्भय बनकर उनका आश्रय ले लेते। आज भी कई बार लोगों के मुँह से सुनते हैं कि जब गुरु चरणों में बैठते हैं तो असीम आनन्द का अनुभव होता है। अच्छी सोच की

ऊर्जा मिलती है, सारा कालुष्य भाव चला जाता है। यह सब सन्तों के दया, करुणा, मैत्री, प्रेम तथा योगों के संयमित भाव के कारण होता है। आस-पास का वातावरण इन गुणों के आभा वलय से शान्त, सन्तुलित और मन को सुखद बनाने वाला बन जाता है। आप कभी ऐसा न सोचें कि ये केवल सन्त-समुदाय तक ही सीमित हो। नहीं, हम भी हमारे जीवन में प्रयोग कर अपने मन के परिणामों की सोचें और भावों में सदा कल्याणकारी, मंगलकारी, सुखकारी ही बना करके रखेंगे तो हम स्वयं हर समय प्रसन्नता की ताजगी से भरे रहेंगे और दूसरों पर भी इसका अनुकूल प्रभाव ही पड़ेगा।

एक प्रेरणास्पद मार्मिक घटना पढ़ने को मिली जो कि न्यूयार्क टाइम्स में छपी थी। अमेरिका के न्यूयार्क शहर के एक सरकारी बैंक में लाखों करोड़ों रुपये का लेन-देन होता था। वहाँ छह काउण्टर थे। पर एक काउण्टर पर जहाँ बैंक कर्मचारी मिस्टर लौम्यु जॉन बैठते थे, वहीं पर सबसे ज्यादा भीड़ रहती थी। बैंक मैनेजर रोज देखता और सोचता कि लोग काफी देर तक खड़े रहते हैं। फिर भी काउण्टर नहीं बदलते हैं। मैनेजर ने एक दिन लम्बी लाइन में से एक आदमी को बुलाकर पूछा-'तुम इसी काउण्टर के लिए लाइन में क्यों खड़े हो अन्य काउण्टर में जाकर क्यों नहीं अपना काम कर लेते।' उस व्यक्ति ने जवाब दिया, 'सर! बात यह है कि मिस्टर लौम्यु जॉन के हाथ से पैसा लेता हूँ तो मुझे बरकत (लाभ) होती है।' अन्य एक व्यक्ति को बुलाकर पूछा तो उसने कहा कि 'इनके हाथ से पैसा लेता हूँ तो व्यापार में सफलता मिलती है और एक दिन जब यहाँ से रुपये लेकर गया तो जिस पर्स में रुपये रखे थे वह पर्स ही गायब हो गया, लेकिन शाम तक मुझे वह पर्स सही सलामत मिल गया।' एक अन्य व्यक्ति से पूछा तो उसने कहा मेरी वेश्यालय जाने की आदत थी, पर एक दिन यहाँ से रुपये लेकर वहीं जा रहा था तो मेरे विचार ही परिवर्तित हो गये और वह गलत आदत ही छूट गई, एक महिला को भीड़ से बुलाकर जब मैनेजर ने वही प्रश्न किया तो उसने कहा, 'सर! एक दिन मैं यहाँ से प्रेमी के साथ घर छोड़कर जाने की योजना बनाकर सारे पैसे निकालने के लिए आई, मिस्टर लौम्यु जॉन ने पैसे दे भी दिये, मगर बीच रास्ते में मेरे अन्तर में से बार-बार आवाज आ रही थी कि तू गलत कर रही है, तेरा प्रेमी रुपये पूरे हो जाने के बाद तुझे अधबीच में ही छोड़ देगा। तेरे साथ धोखा हो जायेगा। अन्तर आत्मा में गूँज रही आवाज सुनकर तुरन्त वापस लौटी और पुनः पैसे जमा करवा दिये और सदा के लिये इरादा बदल दिया और अपने पति के प्रति पूरी समर्पित हो गयी। ये सब मिस्टर लौम्यु जॉन से पैसा लेने के बाद हुआ।' मैनेजर को ये सब बातें सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ और एक दिन मिस्टर लौम्यु जॉन को बुलाकर पूछा-'भैया! ऐसा क्या जादू करता है जो तेरी ही काउण्टर पर इतनी भीड़ रहती है। मिस्टर लौम्यु जॉन बोला-'मैं कोई जादू नहीं जानता। हाँ, जो भी मेरे काउण्टर पर आता है चाहे लेने या जमा कराने, मैं सिर्फ उस व्यक्ति के प्रति मंगलभावना के साथ रोम-रोम से यह बोलता हूँ 'मे गॉड ब्लेस यू' अर्थात् भगवान आपका कल्याण करे। इसके अलावा कुछ भी नहीं करता।' बैंक मैनेजर को भीड़ का रहस्य (कारण) पता लग गया और समाधान मिल गया। बाद में बैंक मैनेजर ने बैंक के मुख्य गेट, खिड़कियों और काउण्टर पर यह वाक्य लिखवा दिया 'मे गॉड ब्लेस यू'। आपने और हमने घटना को सुना, जरा सोचें। शुभ मंगलभावना का क्या प्रभाव होता है, तो आओ आज आप और हम संकल्प करें कि-

''मेरे से जो ज्ञान में, त्याग में, प्रतिभा में, यश-नाम-प्रतिष्ठा में, कार्य कुशलता में, धन-वैभव में, सुन्दरता में, वचन कला में, व्यापार में अग्रणी हैं उनसे कभी भी मन-वचन-काया से ईर्ष्याभाव नहीं रखूँगा, कभी जलन नहीं करूँगा। हमेशा उनके प्रति मंगलमैत्री मंगल भावना रखूँगा।'

संकल्प करें कि **'मेरे प्रति जो द्वेष रखते हैं, अपमान करते हैं, अपयश करते हैं, निन्दा करते हैं,**

दोषों की चर्चा करते हैं, तो उनके प्रति भी कभी दुर्भावना नहीं लाऊँगा, बदले की भावना नहीं रखूँगा, यही सोचूँगा, यही भाव रखूँगा कि जिस दोष की, कमियों की चर्चा लोगों के बीच करते हैं यदि वे दोष हकीकत में मुझ में है तो अवश्य दूर करुँगा। कमियों की चर्चा करने वालों को उपकारी मानूँगा।' यदि वे कमियाँ मुझमें नहीं हैं तो मैं यही मानूँगा कि वे मेरे समभाव की परीक्षा ले रहे हैं। मुझे विचलित होकर कर्मबन्ध नहीं करना है, न कभी दुर्भावना लाना है, क्योंकि कहा है-'जैसे को तैसा, उसका मोक्ष कैसा।' बस यही शुभ भाव रखना है-'मेरा भला, उसका भला, सबका भला।' यद्यपि ट्रक वाहन पर लिखा होता है कि 'बुरी नज़र वाले तेरा मुँह काला।' मगर एक ट्रक वाहन पर लिखा हुआ पढ़ा-'बुरी नज़र वाले तेरा भी भला।' यह है अपने मन की सम्यक् सोच।

संकल्प करें कि 'इस लोक के अन्दर सभी जीव सुख से रहें, सबका कल्याण हो, सबका मंगल हो, सभी निरामय रहें, सभी अपने आत्महित को साधें।'

संकल्प करें कि 'इस संसार में जितने भी गुणिजन, सज्जन, सन्तजन, ज्ञानी महापुरुष हैं, वे सब अपने लक्ष्य को साधे। वीतरागता को प्राप्त करें। जन्म-मरण से मुक्त बनें और अव्याबाध सुख को प्राप्त करें।'

प्रात: काल उठकर इन दोनों श्लोकों का मनसा-वाचा-कर्मणा एकरूप होकर रोम-रोम से उच्चारण करें-

सर्वेभवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दु:ख भाग्भवेत्।।
'सत्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ,
सदा ममात्मा विदधातु देव।।'

मत चूक यह सुनहरा मौका

श्री निपुण डागा

बड़े बड़े बंगलों में पलता, दु:खों के बीच है रहता
कर्मों का खेल है अनोखा, मत चूक यह सुनहरा मौका।।

पुण्य कर्म हो तो विपरीतता में भी समाधान मिलता है,
पाप कर्म का उदय हो तो
अच्छे किए पे भी पानी फिरता है,
क्यों तूने अब भी पाप कर्मों को नही रोका।।
कर्मों का खेल....

'सयं कडं दु:खं' का पाठ भगवन ने सिखाया,
अकर्म, अक्रिय, अशरीरी होने का मार्ग दिखाया,
'अहिंसा संजमो तवो' से पार करनी है
भव चक्र की नौका।। कर्मों का खेल...

कषायों की आग में यह आत्मा जल रही है,
दुर्भावों के वेग से यह आत्मा भटक रही है,
संवेग, निर्वेद भाव से मार अब वैराग्य का चौका।।
कर्मों का खेल....

मैं-मैं का घमण्ड कर दूसरों को नीचा दिखाते
आया, घिनौने खुद के कर्म,
फिर भी खुद को महान दिखाते आया,
अब तो फैंक भाई असत्य का शर्मनाक मुखौटा।।
कर्मों का खेल....

बड़े-बड़े विद्वान भी विवादों में फँस गये,
बड़े-बड़े अमीर भी पैसों के दलदल में मर गये,
अज्ञान और ममता में कब तक देगा खुद को
धोखा।। कर्मों का खेल....

-बी 13, शिवालय मार्ग, सेठी कॉलोनी, जयपुर-302004 (राज.)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 23
ISSN 2249-2011

प्रवचन

कर्मसिद्धान्त से समझें पुण्य की महत्ता

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा जोधपुर में वर्ष 2019 के चातुर्मास में 'सुपुण्यशाली की होती धर्म में मति' विषय से सम्बद्ध अनेक प्रवचन फरमाए गए थे। उनमें से इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर द्वारा किया गया है। **-सम्पादक**

पुण्य के यथार्थ स्वरूप को प्रतिपादित कर पुण्य के उत्कृष्ट अनुभाग में स्वयं को प्रतिष्ठापित कर जीव के शुद्ध स्वरूप को उद्घाटित करने वाले अनन्त-अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और वीतराग वाणी के सम्यक् प्ररूपण और सम्यक् आचरण से पुण्य, संवर, निर्जरा द्वारा मोक्षमार्ग में अग्रगामी आचार्य भगवन्त, उपाध्याय भगवन्तों के चरणों में वन्दना करने के पश्चात्-

कसायपाहुडचूर्णि के एक सूत्र के अर्थ में लब्धिसार आदि ग्रन्थों के सन्दर्भ से 34 अपसरण पढ़ने में आये। पाप प्रकृतियों के बन्ध के अध्यवसाय कैसे-कैसे किस-किस क्रम से समाप्त होते हैं, उसका सुन्दर विवेचन वहाँ उपलब्ध है। 34 अपसरण के क्रम को देखें-

1. पहला नरकायु का व्युच्छित्ति स्थान है। यहाँ से उपशम सम्यक्त्व पर्यन्त नरकायु का बन्ध नहीं होता है, ऐसा ही आगे जानना चाहिए। 2. दूसरा तिर्यञ्चायु का है (इसी क्रम में) 3. मनुष्यायु 4. देवायु 5. नरक गति, नरकानुपूर्वी 6. सूक्ष्म-अपर्याप्त-साधारण 7. सूक्ष्म-अपर्याप्त-प्रत्येक 8. बादर-अपर्याप्त-साधारण 9. बादर-अपर्याप्त-प्रत्येक 10. द्वीन्द्रिय अपर्याप्त 11. त्रीन्द्रिय अपर्याप्त 12. चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त 13. असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त 14. संज्ञी पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त 15. सूक्ष्म-पर्याप्त-साधारण शरीर 16. सूक्ष्म-पर्याप्त-प्रत्येक शरीर 17. बादर-पर्याप्त-साधारण शरीर 18. बादर-पर्याप्त-प्रत्येक एकेन्द्रिय, आतप, स्थावर 19. द्वीन्द्रिय पर्याप्त 20. त्रीन्द्रिय पर्याप्त 21. चतुरिन्द्रिय पर्याप्त 22. असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त 23. तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चानुपूर्वी, उद्योत 24. नीच गोत्र 25. अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय 26. हुण्डक संस्थान, सेवार्तक संस्थान 27. नपुंसक वेद 28. वामन संस्थान, कीलक संहनन 29. कुब्जक संस्थान, अर्धनाराच संहनन 30. स्त्री वेद 31. सादि संस्थान नाराच संहनन 32. न्यग्रोध संस्थान, ऋषभनाराच संहनन 33. मनुष्य गति, मनुष्यानुपूर्वी, औदारिक शरीर और औदारिक अङ्गोपाङ्ग, वज्रऋषभनाराच संहनन 34. अस्थिर, अशुभ, अयशकीर्ति, अरति, शोक, असाता वेदनीय।

इनमें तिर्यञ्चायु आदि 3 आयु, मनुष्य पञ्चक ये 8 प्रकृतियों का विकल्प पुण्य का है, शेष पाप की 29 अघाति कर्म की प्रकृतियों के विविध विकल्प हैं। घातिकर्म सम्बन्धी परावर्तमान पाप प्रकृतियाँ-2 वेद, अरति एवं शोक ये 4 हैं।

इन सबके अध्यवसाय रुकने के पश्चात् ही करण लब्धि प्रकट हो सकती है। यथाप्रवृत्तकरण से पूर्व ही जीव के परिणाम अत्यन्त शुभ होने प्रारम्भ हो जाते हैं। उस समय की सारी उपलब्धि पुण्य के पेटे में ही जाती है। संवर-निर्जरा रूपी गेहूँ आने में देरी है। अभी तो पुण्य रूपी घास ही प्राप्त हुई है जो आगे बढ़ती रही। विघ्न बाधाएँ दूर होती रही, कषाय उदय निष्फल होता रहा, योग शुभ ही रहे तो संवर-निर्जरा धर्म रूपी गेहूँ प्राप्त होंगे, जिनसे रोटी बनेगी, पेट की भूख मिटेगी, तृप्ति मिलेगी अर्थात् दुःखों से छुटकारा मिलेगा, अमित तृप्ति प्राप्त होगी।

न पुण्य लक्ष्य है, न संवर लक्ष्य है, न निर्जरा लक्ष्य है, लक्ष्य तो स्पष्ट है-**अच्चंत-कालस्स समूलगस्स,**

सव्वस्स दुक्खस्स उ जो पमोक्खो (उत्तराध्ययनसूत्र 32.1) अर्थात् मूल कारणों सहित समस्त अनादिकालिक दु:खों से मुक्ति का उपाय है, उसे मैं बता रहा हूँ। **अव्वाबाहं च सुहं णिव्वत्तेइ** (उत्तराध्ययनसूत्र 29.3) अर्थात् अव्याबाध सुख को प्राप्त करता है और उववाइय में अमियतित्तो-अमिततृप्ति की बात 18वीं गाथा में बतायी है।

पुण्य, संवर, निर्जरा उस लक्ष्य प्राप्ति के साधन हैं। लक्ष्य प्राप्ति की रुकावट इनके प्रतिपक्षी पाप, आस्रव एवं बन्ध हैं। तीनों का उद्गम स्थान कषाय की कमी, कषाय रहित आत्म-परिणाम हैं। तीनों के सहकारी साधन मन, वचन, काया हैं और तीनों का कार्य क्षेत्र पुद्गल है। पहला पुण्य रूपी तत्त्व पुद्गल की विपरीतता, अशुभता को समाप्त कर साधना में सहकारी बनाता है। दूसरा पहले अशुभता को रोककर फिर पुद्गल के आगमन को रोकता है, तीसरा पूर्व सञ्चित पुद्गलों को खदेड़ता है-निकालता है। पीछे के दोनों अरूपी तत्त्व होने से आत्म-परिणाम, स्वभाव रूपी धर्म के नाम से कह दिए जाते हैं, क्योंकि उनकी अभिव्यक्ति ग्रन्थि-छेदन की प्रक्रिया अपूर्वकरण से, प्रथम गुणश्रेणि प्रवेश से होती है और फिर उस प्रक्रिया के पूर्ण होने पर समकित रूपी संवर के प्रथम भेद के प्रकट होने पर गणना होती है। थोड़ा बहुत पुण्य समय-समय पर चलता रहता है, जिसकी गणना नहीं है, मुक्ति-मार्ग में सीधा सहकार भी नहीं है, अभवी जीवों के भी होता है। कुछ विशेष करके जानकारी एवं आचरण में आगे बढ़ा-ओघे पातरे भी दिला देता है। ग्यारह अङ्ग का ज्ञान (श्रुत अज्ञान) का क्षयोपशम भी करा देता है। पाप की स्थिति को अन्त: कोटाकोटि सागर में तथा अनुभाग को घटाकर द्विस्थानिक करा देता है, पर धर्म में प्रवेश नहीं करा सकता। 34 अपसरण के अध्यवसाय का सहवर्ती पुण्य और भी विशेष है, पर वह भी अनन्त बार प्राप्त हो सकता है। उसके आगे का पुण्य सुपुण्य में शामिल होता है, जो धर्म में मति उत्पन्न करता है- 'सुपुण्णाणं धम्मे उप्पज्जए मई' यहाँ से मोक्षमार्ग की उपादेयता के कारण पुण्य उपादेय तत्त्व है, पूर्व के पुण्य इस उपादेयता तक पहुँचाने में सहकारी हैं, अनन्त बार की असफलता के पश्चात् भी सही, पर पहुँचाया तो उन्होंने ही पहुँचाया है, अस्तु, कारणभूत होने से उपादेय है उसके पूर्व तक ज्ञेय है, पर हेय तो कभी भी नहीं है। अस्तु सेवा, दान, करुणा, दया, परोपकार कभी भी हेय नहीं हैं। पुण्य तो कषाय का, मोह का आंशिक ध्वन्स है। अहंकार रहित ये प्रशस्त कार्य पुण्य का वर्धापन कर धर्म द्वार खोल देते हैं।

अपसरण की प्रक्रिया और भी स्पष्टता दे रही है। गति, आगति, गमा के अधिकार का विशेष खुलासा कर रही है। 256 आवलिका की स्थिति वाले सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीव जो एक औदारिक शरीर में अनन्त जीवों के साथ अवस्थित है, लोक में ठूँस-ठूँस कर भरे हुए हैं। शरीर भी इतना सूक्ष्म कि कहीं से बाधा प्राप्त करे नहीं, किसी को बाधा पहुँचाये नहीं। काया से कोई पुण्य कर सके ऐसी सीधी सम्भावना नहीं, केवल अप्रशस्त लेश्या की कमी रूप विशुद्धि होने मात्र को काय पुण्य कह सकते हैं, क्योंकि एकेन्द्रिय से पञ्चेन्द्रिय, मनुष्य गति तक पहुँचाने के लिए पुण्य तत्त्व अनिवार्य है। वहाँ क्रियात्मक काय पुण्य सम्भव नहीं है। सहन करने रूप विशुद्धि से काय पुण्य को भावात्मक पुण्य कह सकते हैं। गमा में उनके अध्यवसाय प्रशस्त कहे हैं, अस्तु, योग शुभ होंगे ही, तब 'शुभ: पुण्यस्य' से कोई पुण्य तो होगा ही। प्रशस्त अध्यवसाय से स्वप्रायोग्य उत्कृष्ट ऊँचाई को पाकर क्रोड़ पूर्व की मनुष्यायु सहित वज्रऋषभनाराच संहनन और अगले मनुष्य भव में सम्यक्त्व और संयम की योग्यता अर्जित कर सकता है। गणना करने लायक पुण्य कुछ दिखता नहीं, पर अनन्त ज्ञानी की वाणी इस सत्य को उद्घाटित कर ही रही है। **कम्माणं तु पहाणाए आणुपुव्वी कयाइ उ। जीवा सोहिमणुप्पत्ता आययन्ति मणुस्सयं।।** (उत्तराध्ययनसूत्र 3.7) अर्थात् कालचक्र से कदाचित् कर्मों का क्षय हो जाने से जीव तदनुरूप आत्मशुद्धि को प्राप्त करते हैं, तदनन्तर वे मनुष्यता प्राप्त करते हैं। अशुभ कर्म की कमी एवं विशुद्धि के बढ़ने से मनुष्य पर्याय सम्भव है।

इस जीव की उपलब्धि के क्रम एवं आयु की स्थिति पर विचार करें तो सूक्ष्म-साधारण-अपर्याप्त, सूक्ष्म-प्रत्येक-अपर्याप्त, बादर-साधारण-अपर्याप्त एवं बादर-प्रत्येक-अपर्याप्त की आयु जघन्य 256 आवलिका एवं उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त पर्यन्त होती है। सूक्ष्म-साधारण-पर्याप्त, सूक्ष्म-प्रत्येक-पर्याप्त, बादर-साधारण-पर्याप्त की आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त है। बादर-प्रत्येक-पर्याप्त की आयु एकेन्द्रियपर्याय में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त से उत्कृष्ट 22,000 वर्ष है। द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त और तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त की आयु जघन्य 256 आवलिका एवं उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त है। द्वीन्द्रिय पर्याप्त की आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट 12 वर्ष। त्रीन्द्रिय पर्याप्त की आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट 49 अहोरात्रि है। चतुरिन्द्रिय पर्याप्त की आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट 6 माह है। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त और मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त की आयु संख्यात वर्षायुष्क अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट 1 क्रोड़ पूर्व है।

यदि और विवक्षा करें तो असन्नी, सन्नी पञ्चेन्द्रिय का भेद भी हो सकता है। छोटा सा अत्यन्त अव्यक्त अवस्था वाला जीव पुण्य की बदौलत इतना विकास करता है कि वह सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय से सम्यग्दृष्टि, श्रावक तथा मनुष्य में इन दोनों के साथ संयम तक पहुँच जाता है।

सूक्ष्म निगोद के एक शरीर के आश्रित अनन्त जीव होते हैं। उनकी गणना करते हुए कहा कि 98 बोल के बासठिए में (प्रज्ञापना पद 3) 74 नम्बर पर अभवी जीव अनन्त, 75 पर पडिवाई सम्यग्दृष्टि अनन्त, 76 पर सिद्ध भगवान अनन्त। इन तीन बार किए अनन्त से अनन्त गुणा निगोद जीव एक शरीर में भगवान ने फरमाए हैं। वे यदि एक साथ काल करते हैं तो उनमें से 1. अनन्त जीव जघन्य पुण्य से सूक्ष्म या बादर, पर्याप्त या अपर्याप्त निगोद में 2. असंख्यात जीव पाँच स्थावर में प्रत्येक शरीरी सूक्ष्म, बादर , पर्याप्त, अपर्याप्त की अपेक्षा 20 भेद-इनमें से 2 सूक्ष्म वनस्पति के कम करके 18 भेदों में प्रतिसमय असंख्यात जीव चले आयेंगे। 3. संख्यात जीव द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त में 4. उससे कम संख्यात तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय असन्नी-सन्नी, पर्याप्त-अपर्याप्त के भेदों में 5. उससे बहुत कम असन्नी मनुष्य में 6. उससे भी बहुत कम सन्नी मनुष्य अपर्याप्त में 7. सबसे कम मनुष्य पर्याप्त में और उनमें भी कोई कोई विरले जीव सम्यग्दृष्टि बनेंगे, श्रावक बनेंगे, साधु बनेंगे।

सम्यग्दृष्टि बनने के पूर्व वे ही जीव मनुष्य के भव में प्रथम बार 34 अपसरण करेंगे, गुणश्रेणि चढ़ेंगे, संसार सीमित करेंगे और कोई कोई जीव पुन: मनुष्य भव पाकर मोक्ष चले जायेंगे। पूर्व के पुण्य से मनुष्य बनने के साथ सुपुण्यशाली अपूर्व गुणश्रेणि को चढ़ेगा। वहाँ का पुण्य तो सर्वथा उपादेय ही होगा। सुपुण्य की गणना मनुष्य में ही हो सकेगी। अहो पुण्यं अहो पुण्यं-क्या सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीव की इस विशिष्ट उपलब्धि को कोई भी खराब कह सकता है? बुरा बता सकता है? आत्मा की अचिन्त्य महिमा वहाँ भी विद्यमान है। **'सिद्धां जैसो जीव है'** इस शक्ति की यत्किञ्चिद् अभिव्यक्ति को, इस उत्थान को ज्ञानियों ने पुण्य तत्त्व कह दिया। हमें तो यहाँ पर भी पुण्य हेय नजर नहीं आ रहा।

अजीव के बन्धनों से छुटकारा पाना मोक्ष है। अजीव का बन्धन होने के कारण पाप, आस्रव और बन्ध है। सूत्रकृताङ्गसूत्र की जिस गाथा की चर्चा हमने कतिपय दिवस पूर्व की थी-**'बंधणं परिजाणिया'** बन्धन समझ में आ गया। अनित्य की ओर गतिशील होने से विवेक भाव में परिवर्तित हुआ, भाव कर्म में बदल गया। कर्मोदय से परिस्थिति सर्जित हो गई। इस गतिशीलता में भी नित्य का एक अंश स्थिर रहा, इसलिए कुछ-न-कुछ शुभ कायम रहा। उत्कृष्ट संक्लेश के समय आत्मा का स्वभाव जघन्य स्तर पर अनावृत्त रहा। बन्धने वाली पुण्य प्रकृतियाँ जघन्य अनुभाग वाली रहीं। निकृष्ट अशुभ योग एवं जघन्यतम कृष्ण लेश्या में भी कुछ पुण्य प्रकृतियाँ बन्धी, पुण्यास्रव हुआ, पुण्य बन्ध हुआ, जो नाममात्र का था, पुण्य तत्त्व नहीं था। 3 शरीर, 4 शुभ

वर्णादि, अगुरुलघु, निर्माण इन 9 पुण्य प्रकृतियों का बन्ध 8वें गुणस्थान तक के बन्ध के प्रत्येक विकल्प में रहता ही है। इनके बन्ध में जो प्रदेश लगे उसे कोई भी पापास्रव नहीं कह सकता, इनका बन्ध पापबन्ध नहीं कहलाता। नाममात्र का अनावरित आत्म स्वभाव ही इनकी शुभता का हेतु रहा। स्थिति बन्ध कषाय से हुआ, अत: उन-उन की उत्कृष्ट स्थितियाँ बन्धी, इनका अनुभाग कषाय सर्जित नहीं कर सकता। यह आत्म-परिणाम से सर्जित होता है, क्योंकि दोष सर्वांश में हो ही नहीं सकते।

आत्म-परिणामों पर कषाय का प्रभाव कम होना, संक्लेश घटना, विशुद्धि बढ़ना, योग की शुभता का कारण बना। परावर्तमान शुभ प्रकृतियाँ स्थिर, शुभ, यश:कीर्ति, साता वेदनीय आदि का बन्ध हुआ, पुण्य तत्त्व, पुण्यास्रव, पुण्य बन्ध-तीनों का यहाँ अस्तित्व रहा।

40 कोटाकोटि सागर कषाय और 70 कोटाकोटि सागर मिथ्यात्व की स्थिति घटाते-घटाते आत्म-परिणामों ने नित्य की गतिशीलता से उदय प्राप्त कर्म को समता भाव में बदल डाला। विवेक का प्रकाश बढ़ने लगा। इन तीनों ने कषाय की मन्दता से उत्थान पाया। अन्त: कोटाकोटि सागर तक स्थिति घटाकर पाप के अनुभाग को घटाया, पुण्य के अनुभाग को बढ़ाया और तब जीव का वीर्य उल्लसित होकर और अधिक बढ़ गया। अपूर्व उत्साह से राग-द्वेष की गाँठ खुलने का अदम्य वीर्य प्रकट हुआ। यह ग्रन्थि सिर्फ और सिर्फ एक बार खुलती है और यहाँ तक का आत्मपरिणाम जो शुभ चिन्तन, शुभ चर्चा, शुभ कार्य रूपी शुभयोग से प्रकट हो रहा था वह पुण्य तत्त्व था। अब संवर और निर्जरा के रूप में प्रकट हुआ, यहाँ पुण्य लुप्त नहीं हुआ और अधिक बढ़ता गया। अपूर्वकरण में राग-द्वेष की गाँठ खुलने से तेरहवें गुणस्थान तक (सम्यग्दृष्टि से सयोगी अवस्था तक) तीनों (पुण्य, संवर एवं निर्जरा) का साथ रहता है। ऊपर उठने, गुणश्रेणि चढ़ने पर तो अवश्य रहता है, नीचे गिरने के साथ समाप्त हो सकता है। तीनों तत्त्व कषाय की कमी से होने वाले आत्मपरिणाम की देन है। पहला पुद्गल सापेक्ष है, अजीव है। डिवाईड एण्ड रुल रूपी आत्मपरिणाम के पुद्गल पर पड़ने वाले प्रभाव से सम्बन्धित है, पर आत्मा के लिए हितकारी है, आत्मोत्थान में सहकारी है, इसलिए उपादेय है। धर्म-प्राप्ति में सहकारी होने से उपादेय है, धर्म से अलग कहा जाना इसे अनुपादेय नहीं ठहराता।

ग्रन्थि-भेदन के योग्य पुण्य को सुपुण्य कहा। आत्मिक उन्नति में वहाँ से गणना होती है, उससे पूर्व का पुण्य अनन्त बार मिल जाता है, वह संसार में शारीरिक, मानसिक उन्नति दिलाता है, अध्यात्म में उपयोगी नहीं है। इस कारण सारे पुण्य को हेय कह डालने की बात कर दी जाती है, पर वस्तुत: आत्म-परिणामों की धारा कषायोदय जनित अशुभ योग बढ़ने से टूटी, इसलिए वह पुण्य धर्म में गति-प्रगति नहीं करा सका। दोष कषाय का है, अशुभयोग का है, पाप, आस्रव, बन्ध का है, आत्मा की जागृति नहीं रहने का है। पुण्य वहाँ भी हेय नहीं है, वही सुपुण्णाणं तक पहुँचाने वाला है। संवर, निर्जरा से मोक्ष मार्ग में आगे बढ़ाने वाला है।

अभिमान के अनेक स्तर हैं। मुख्य रूप से अनन्तानुबन्धी मान आदि 4 स्तर हैं। जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ, ऐश्वर्य आदि उच्च उन्नत अच्छे मिलना, पूर्व के सदुपयोग का परिचायक है। अब इनमें से जिसका भी मद किया वे खराब ही होते जाएँगे। नीचगोत्र अनन्तानुबन्धी के साथ दूसरे गुणस्थान तक बन्धता है। पर की निन्दा, अपनी प्रशंसा आदि कारण पूर्व में कहे जा चुके हैं। पहले गुणस्थान में भी उच्च गोत्र परावर्तमान के रूप में बदल-बदलकर बन्धता रहता है, पर सम्यक्त्व के साथ नियम से दसवें गुणस्थान में क्षपक जीव के चरम समय में सर्वोच्च शिखर पर उत्कृष्ट अनुभाग से बन्धता है, चौदहवें गुणस्थान के अन्तिम समय तक उदय में आता ही रहता है। साता वेदनीय तो अप्रमत्त सयोगी के प्रतिक्षण बन्धता है, देशोन क्रोड़ पूर्व तक बन्ध सकता है, पर उच्च गोत्र तो दूसरे गुणस्थान के ऊपर प्रतिसमय बन्धता ही है, सिद्धान्त में 66 सागर झाझेरी और कर्मसिद्धान्त तथा दिगम्बर साहित्य में (2 x 66) 132

सागर झाझेरी तक बन्ध सकता है।

सम्यक्त्व दुर्लभ है, परम दुर्लभ है, अनमोल रत्न है। समकित प्राप्त करना है तो पुण्य बढ़ाना ही होगा। समकित में अघाति कर्मों की पुण्य प्रकृतियाँ ही अधिकतम बन्धती है, अधिक अनुभाग की बन्धती है। जो मुक्ति मार्ग में, संयम में, गुणश्रेणि में, केवलज्ञान में, कहीं भी अवरोध नहीं करती, अपितु सहकारी ही बनती हैं, उस पुण्य को हेय बताना अपना पतन नहीं तो और क्या है?

तीर्थंकर दीक्षा पूर्व दान देते हैं, उस पुण्य से उनका संसार एक समय भी नहीं बढ़ा। वर्तमान भव की आयु का बन्ध पूर्व भव में करके आये थे, उसमें एक समय भी नहीं बढ़ा। अपितु, उत्कृष्ट पुण्य प्रकृतियाँ 30 या 32 (आहारक द्विक का बन्ध भजना से है) का उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध होने पर, उनका अनुभाग उत्कृष्ट होने पर ही (अनुभाग ही पुण्य का निर्धारक तत्त्व है) केवलज्ञान हो सकता है। प्रकृति की सरलता से मन-वचन-काया में अविसंवादिता अर्थात् जानकारी और जीवन में कोई अन्तर नहीं रहता। यथाख्यात चारित्र पूर्ववर्ती क्षण में यश:कीर्ति का उच्चतम स्तर शुभ नाम, पुण्य का सर्वाधिक अनुभाग बन्धता है। 8वें गुणस्थान तक अन्त: कोटाकोटि सागर के स्थितिबन्ध को जीव अन्तर्मुहूर्त में समाप्त कर सकता है, उत्कृष्ट अनुभाग को वेदन करता हुआ संसार यात्रा पूर्ण करता है। पुण्य का उत्कृष्ट अनुभाग अर्थात् सर्वोत्कृष्ट ही मोक्ष का परम सहकारी तत्त्व है।

काय पुण्य, विभाव की धारा रोकने वाले स्वाभाविक सत्य के प्रभाव से निगोद, नरक, स्थावर-जीव भी निकृष्ट प्रकृतियों का बन्ध अन्तर्मुहूर्त से अधिक कर ही नहीं सकता।

अघाति कर्मों की 37 प्रकृतियों में 5 ध्रुव बन्धिनी हैं, 4 अशुभ वर्णादि एवं उपघात नाम, ये तो प्रत्येक जीव के 8वें गुणस्थान के छठे भाग तक बन्धती रहती हैं, अनन्त काल से बन्ध रही हैं। नीचगोत्र का बन्ध तेऊकाय, वायुकाय में असंख्यात काल तक चल सकता है और उस समय तिर्यञ्च द्विक ही बन्धेगा। वे मनुष्य द्विक एवं उच्चगोत्र बाँध नहीं सकते। इन आठ को छोड़कर शेष 29 प्रकृतियाँ नरक द्विक, जाति चौक, पीछे के 5 संहनन एवं 5 संस्थान, अशुभ विहायोगति, स्थावर दशक ये 27 नामकर्म की तथा असातावेदनीय और नरकायु इन 29 प्रकृतियों को जीव निरन्तर अन्तर्मुहूर्त से अधिक बाँध ही नहीं सकता।

घाति-अघाति सबकी मिलाकर 82 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग भी अन्तर्मुहूर्त से अधिक बाँध ही नहीं सकता। उत्कृष्ट संक्लेश से निवृत्त होना ही पड़ता है। कषाय घटा, विशुद्धि बढ़ी, हल्का-सा शुभ योग हुआ, पुण्य तत्त्व हुआ, पर यह आत्म उत्थान में सीधे हितकारी नहीं है। हाँ, शारीरिक उन्नति अवश्य कराता है। मानसिक, आध्यात्मिक उन्नति का अधिकारी बना सकता है। इसका विशेष महत्त्व नहीं है, अति सामान्य है, पर हेय नहीं हो सकता। भगवतीसूत्र शतक 14 उद्देशक 8 स्पष्ट कह रहा है-

एस णं भंते! सालरुक्खए उण्हाभिहए तण्हाभिहए दवग्गिजालाभिहए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति, कहिं उववज्जिहिति?

गेयमा! इहेव रायगिहे नयरे सालरुक्खत्ताए पच्चायाहिति। से णं तत्थ अच्चियवंदियपूइयसक्का-रियसम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सन्निहिय पाडिहेरे लाउल्लोइयमहिते यावि भविस्सइ।

अर्थात् हे भगवन्! सूर्य की गर्मी से पीड़ित, तृषा से व्याकुल, दावानल की ज्वाला से झुलसा हुआ यह शालवृक्ष मृत्यु के समय में काल करके कहाँ जाएगा, कहाँ उत्पन्न होगा?

गौतम! यह प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला शालवृक्ष, इसी राजगृहनगर में पुन: शालवृक्ष के रूप में उत्पन्न होगा। वहाँ यह वंदित, पूजित, सत्कृत, सम्मानित और दिव्य (दिव्यगुणों से युक्त), सत्य, सन्निहित-प्रतिहार्य होगा तथा इसका पीठ (चबूतरा), लीपा-पोता हुआ एवं

पूजनीय होगा।

से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति? गोयमा! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति।

अर्थात् भगवन्! वह (पूर्वोक्त) शालवृक्ष वहाँ से मरकर कहाँ जाएगा और कहाँ उत्पन्न होगा? गौतम! वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा।

उसी प्रकार शाल यष्टिका, उदुम्बरयष्टिका का कथन आया। वे भी शालवृक्ष के समान अर्चित, वन्दित और पूजित होगी, यावत् उसका चबूतरा लीपा-पोता हुआ होगा और वह पूजनीय होगी। यावत् वह सर्व दुःखों का अन्त करेगी।

केवली की आगत 108 कर्म प्रकृति है। बादर पृथ्वी, पानी, प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय का पर्याप्तक जीव इसी काय पुण्य से अगले भव में सम्यग्दर्शन एवं केवलज्ञान का अधिकारी बनता है। पहले के भव के काय पुण्य के फलस्वरूप वह बीच के वनस्पति के भव में अर्चनीय, वन्दनीय, पूजनीय बना और उस पुण्य के उदय में फिर पुण्य तत्त्व का अर्जन अर्थात् उदय में उदय किया और वह भी केवल अकाम निर्जरा और काय पुण्य से। इन पुण्यों के पश्चात् उत्तराध्ययनसूत्र 3.17-18 में वर्णित 1. क्षेत्र 2. वास्तु 3. स्वर्ण 4. पशु और दास-पोष्य (या पौरुषेय) जहाँ होते हैं, वहाँ वे उत्पन्न होते हैं, वे 5. सन्मित्रों से युक्त 6. ज्ञातिमान उच्चगोत्रीय 7. सुन्दर वर्ण वाले 8. नीरोग 9. महाप्राज्ञ 10. अभिजात-कुलीन, यशस्वी और बलवान होते हैं। इन दस बोलों की प्राप्ति पुण्य से ही होती है। जहाँ दुरूपयोग हुआ, अशुभयोग हुआ, पाप हुआ, उत्थान रुका, दुर्गति में गया, भव में रुला, पर उसका दोष उस सामग्री पर मड़ना, पूर्व के शुभ योग पर मड़ना, क्या न्यायसङ्गत कहा जा सकता है? पुण्य ने निगोद से छुड़ाया, प्रत्येक बनाया, सूक्ष्म से छुड़ाया, बादर बनाया, अपर्याप्त से पर्याप्त बनाया, स्थावर से त्रस बनाकर तीन संग्रह (कर्म, शरीर, बाहरी सामग्री) में से तीसरा संग्रह दिलवाया, विकलेन्द्रिय से पञ्चेन्द्रिय, असन्नी से सन्नी, अनार्य से आर्य, कुमति से सुमति, पाखण्ड धर्म से जैनधर्म.... पता नहीं क्या-क्या उपकार किया? आज जिनवाणी सुनने-समझने का अधिकारी बनाया।

क्या इस पुण्य के बिना हम आज सम्यग्दर्शन प्राप्ति की चर्चा भी कर सकते हैं? उसको हेय कह दिया तो गाडी उल्टी... 'उल्टे बाँस बरेली को' कहावत चरितार्थ हो जाएगी। पञ्चेन्द्रिय पर्याय पुण्य है। इन्द्रियों का सदुपयोग पुण्य तत्त्व है। कान से वीतराग वाणी सुने, आँख से यतना कर चले, भगवद् वाणी पढ़े, सन्तों के दर्शन करे आदि आदि इन्द्रियों का सदुपयोग है। आचार शास्त्र दशवैकालिक की दूसरी चूलिका की अन्तिम गाथा-

अप्पा खलु सययं रक्खियव्वो, सव्विंदिएहिं सुसमाहिएहिं।
अरक्खिओ जाइपहं उवेइ, सुरक्खिओ सव्वदुहाण मुच्चइ।।

अर्थात् समस्त इन्द्रियों को सुसमाहित करके आत्मा की सतत रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि अरक्षित आत्मा जातिपथ (जन्म-मरण-परम्परा) को प्राप्त होता है और सुरक्षित आत्मा सब दुःखों से मुक्त हो जाता है। सुरक्षित का तात्पर्य है-इन्द्रियों को वश में करना, मन-वचन-काय को वश में रखना। पुण्य, संवर, निर्जरा को उत्कृष्ट कर संसार का अन्त करना। क्षपक श्रेणी में दसवें गुणस्थान के अन्त में प्रकट पुण्य उत्कृष्ट-14वें तक कायम रहता है। क्षीण मोह गुणस्थान में प्रकट हुआ यथाख्यात चारित्र संवर उत्कृष्ट-14वें तक कायम रहता है। चौदहवें गुणस्थान में शुक्लध्यान के चतुर्थ चरण तक निर्जरा कायम रहती है-उत्कृष्ट पुण्य, उत्कृष्ट संवर, उत्कृष्ट निर्जरा-

भक्ति, विनय, बहुमान सङ्ग, प्रभु वीर रमता चलूँ
श्रुत का पठन, चिन्तन गहन,
उपसर्ग परीषह सहता चलूँ
वृत्तियाँ हों कम, मिट जाए गम,
मुक्ति का साधन और कहाँ।

◆

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 29
ISSN 2249-2011

प्रवचन

चिन्तन की धारा बदलते ही परम सुख

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. ने 25 अगस्त, 2021 को नेहरु पार्क, जोधपुर में फरमाये प्रवचन में संयम और तप से आत्मा का दमन करने की प्रभावी प्रेरणा की है। प्रवचन का आलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया। **-सम्पादक**

धर्म जिज्ञासु बन्धुओं!

अनन्त सुख है आत्मा के पास।
मिलता उन्हें, जो नहीं बनते पुद्गल के दास।।

इस कथन का सार है-आत्मा के पास अनन्त ज्ञान है, अनन्त दर्शन है, अनन्त सुख है, अनन्त सामर्थ्य है। आप हमको अनन्त-अनन्त पुण्यवानी से मनुष्य भव प्राप्त हुआ है। हमें चिन्तन करना है कि यह भव हमें क्यों और कैसे मिला? क्या भौतिक सुखोपभोग में एक छलाङ्ग और लगाकर भव-परम्परा बढ़ाने के लिए यह मनुष्य जन्म मिला है? मोह और अज्ञान में फँसा हुआ जीव भव-भ्रमण बढ़ाता रहता है।

भगवान की वाणी कहती है-एक वर्ष तक कोई शुद्ध संयम पाल ले तो वह अनुत्तर विमान के देवताओं के सुख को लाँघ जाता है। ऐसा कब होता है?

(जन समुदाय में से जब अज्ञान और मोह का क्षयोपशम करेंगे।)

आपका उत्तर ठीक है। जब अज्ञान और मोह को घटायेंगे, कम करेंगे उतना-उतना भीतर का सुख प्रकट होता जायेगा। यहाँ आपको ध्यान में रखना होगा कि अज्ञान-मोह के साथ दो बड़े पाप हैं-राग और द्वेष।

पाप अठारह हैं। अठारह पापों में मुख्य पाप है-राग और द्वेष। राग समाप्त हो जायेगा तो वहाँ मिथ्यात्व नहीं रह सकता। ग्रन्थि है राग और द्वेष की। मिथ्यात्व को ग्रन्थि नहीं कहा।

कर्म आठ हैं। आठ कर्मों में राग और द्वेष को मूल पाप कहा है। शास्त्रों में इस पर विस्तार से वर्णन मिलता है। आठ कर्मों में सबसे बड़े पाप हैं-राग और द्वेष। आत्मा का बिगाड़ राग-द्वेष से होता है। राग नहीं होगा तो पुराने कर्मों की निर्जरा होती जायेगी और नए कर्म भी नहीं बन्धेंगे।

बन्धुओं! ज्ञान-दर्शन आत्मा का स्वभाव है और राग-द्वेष विभाव। ज्ञानियों ने ठीक ही कहा-

मत कर पर गुणन में रमण, ज्यूँ लगे गलतोक।
निश्चल रह निज गुणन में, आप हूँ होगा मोक्ष।।

आप जानते हैं गलतोक क्या होता है? शायद, गलतोक का मतलब कुछ लोग ही जानते होंगे। गाय के गले में गलतोक डाल दिया जाता है जिससे वह पास के खेत में चरने नहीं जाय। हमें अपने निज गुणों में रत रहना है तभी तो हम साधना-आराधना में पुरुषार्थ करके मोक्ष मञ्ज़िल प्राप्त कर सकते हैं।

आप-हम-सब मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं। हमें एकसूत्र मन में जमा लेना है और वह सूत्र है-'कुछ करना संसार है और कुछ नहीं करना मोक्ष।' आप इस उक्ति का हार्द समझें। मोक्ष जाने के लिए कुछ नहीं करना है और संसार पाने में कुछ-न-कुछ करना ही होता है। करना तो प्रवृत्ति है जहाँ भी प्रवृत्ति है वहाँ संसार है। मोक्ष जाने के लिए हमें कुछ नहीं करना है। बस, हमें तो अपने स्वभाव में रहना है।

जितने भी जीव मोक्ष में गये हैं, वे स्व-स्वभाव में रमण करके गये हैं स्वभाव में रमणता है-हमारी सामायिक की साधना। सामायिक में साधक सभी सावद्य प्रवृत्तियों का त्याग करता है। मतलब, सारे पाप-व्यापार

को त्यागकर स्व-स्वभाव में रमण करना सामायिक है।

सामायिक में प्रवृत्ति नहीं होती तो साधु जविन में भी प्रवृत्ति का कोई स्थान नहीं होता। साधु के जीवन में गुप्ति होती है, इसीलिए ज्ञानियों ने कहा-'गुप्ति में मुक्ति छिपी हुई है।'

कल हमने उत्तराध्ययनसूत्र के पहले अध्ययन की 15वीं गाथा का भाव समझा, आज 16वीं गाथा का भाव समझने का प्रयास कर रहे हैं। गाथा है-

वरं मे अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य।
माऽहं परेहिं दम्मंतो, बंधणेहिं वहेहिं य।।

गाथा में एक शब्द आया-अप्पा दंतो अर्थात् अपनी आत्मा का दमन करो। आत्मा का दमन किससे होगा? कैसे होगा? तो कहा-संयम और तप से अपनी आत्मा का दमन करो। यह जीवात्मा जितना-जितना अपने स्वभाव को छोड़कर विषयोन्मुख होगा, उतना ही वह दु:खी होगा।

जैसे-जैसे विषयाभिलाषा छूटती है, भीतर का सुख प्रकट होता जाता है। संसार में आप देखते ही हैं कि जो व्यक्ति घर में रहता है, वह घर में उपलब्ध साधनों का, सुविधाओं का और घर की सामग्रियों का उपयोग करता है। व्यक्ति घर से बाहर चला गया तो घर की सुविधाओं से वञ्चित रहना पड़ेगा।

आप एक उदाहरण से इस बात को समझें। एक सेठ का लड़का नट-कन्या पर मोहित हो गया। सेठ ने अपने पुत्र को समझाया-मैं तेरा अच्छी-से-अच्छी कन्या के साथ विवाह करा दूँगा। पर, इलायची कुमार तो नट-कन्या पर आसक्त था, वह नहीं माना, सो नहीं माना। यहाँ कोई आपसे पूछे-क्या नट-कन्या में सुख था?

नट-कन्या को पाने के लिए वह डोरी पर नाचने लगा। लोग उसके नाच को पसन्द करने लगे। नाचते-नाचते उसकी नज़र एक संयमी-साधक पर गई। मुनिराज एक नव-यौवना से आहार ग्रहण कर रहे थे। सन्त के दर्शन पाकर उसका चिन्तन चला कि मुनिराज का ध्यान आहार पर है, नव-यौवना पर नहीं। बस, इस एक निमित्त से नाचते-नाचते चिन्तन चला कि मैं एक नट-कन्या के लिए क्या कर रहा हूँ और एक वे मुनिराज हैं जो सुसज्जित नव-यौवना को देख तक नहीं रहे।

चिन्तन की धारा बदलते ही इलायची कुमार को नट-कन्या की आसक्ति के बजाय आत्म-सुख और अव्याबाध सुख की प्राप्ति हो गई। नाचते-नाचते उसे केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

भगवान ने एक ओर हम श्रमणों को संयम और तप की साधना करने की बात कही तो दूसरी ओर आप श्रावक समाज को किंपाक फल के समान जो भोग अच्छा दिखता है उसके प्रति आसक्ति नहीं रखकर शाश्वत सुख की प्राप्ति में सजग होने की बात कही। आप सब शान्ति चाहते हैं तो ज्ञानियों के कथन पर विचार करें।

कहाँ शान्ति का मूल है, ढूँढ़ रहा संसार।
कस्तूरी निज नाभि में, मृग ढूँढ़त है बाहर।।

आप कस्तूरी से परिचित हैं। उसे काम में भी लेते हैं। कस्तूरी की सुगन्ध काफी समय तक बनी रहती है। कस्तूरी मृग की नाभि में है, लेकिन मृग दौड़ता है। दौड़ लगाते-लगाते थक जाता है उसे अपनी नाभि के बजाय बाहर सुगन्ध है, ऐसा भान होता है तो वह है मृग-मरीचिका।

बस, यही आपको समझना है। इन्द्रियों के माध्यम से जो भी सुख मिल रहा है, वह क्षणिक है, स्थायी नहीं। आत्मा का सुख शाश्वत है, सत्य है, एक बार प्रकट हो जाने पर जाने वाला नहीं है। परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. तो संसारी प्राणियों की मन:स्थिति के बारे में फरमाते हैं-

सीख हिया री उपजे, दीयां लागे डाम।

संसारी लोग आत्म-दमन को एक बन्धन मानते हैं, पर जब तक वे स्वच्छन्दता का त्याग करके स्वयं को मर्यादित नहीं करते तब तक उन्हें सच्चा सुख नहीं मिल

सकता। स्वगृहीत बन्धन दु:खों के भय से मुक्त करने वाला है इसके लिए एक दृष्टान्त याद आ रहा है।

एक हथिनी थी। उसका प्रसव आश्रम में हुआ। प्रसवोपरान्त हथिनी पुन: हाथियों के झुण्ड में चली गई। शिशु हाथी आश्रम में पलने लगा। वह बड़ा हुआ। हाथी के बच्चे के प्रति मोहवश हथिनी आश्रम का ध्यान रखती। वह अपनी सूँड़ में पानी भरकर लाती और पेड़-पौधो को पानी दे देती।

हाथी का बच्चा भी बड़ा होता रहा। हाथी का मन एक दिन चञ्चल हो गया और उसने आश्रम को तहस-नहस कर दिया। आश्रम के नष्ट होने पर राजा के कान तक बात गई।

उधर हाथी का एक मित्र जो देवगति में था उसे दया आई। देव रूप में प्रकट होकर उसने एक युक्ति बताई कि तुम स्वयं होकर राजा के यहाँ बन्धन में बन्ध जाओ तो राजा के कोप से बच सकोगे।

हाथी रातों-रात राजा के वहाँ गया और स्वयं होकर बन्धन में बँध गया। राजा ने देखा तो उसे भी दया आई। सजा के बजाय उसे जीवन-दान मिल गया।

इस दृष्टान्त का मर्म है कि पाँच इन्द्रियों के विषयों पर विकार करने से आत्मा संसार में भटकती है और स्वयं होकर मर्यादित होने से रक्षण हो सकता है। हर आत्मा को स्वयं पर स्वयं का नियन्त्रण कर कषाय आत्मा का दमन करना चाहिए। जो भी संयम और तप में संयमित हो जाता है वह मुक्ति-पथ का अधिकारी बन सकता है।

जिनवाणी पर अभिमत

अभय कुमार जैन (श्रीश्रीमाल)

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका में जो सामग्री रहती है वह प्रेरक, ज्ञानवर्द्धक एवं आचरण योग्य है। दिसम्बर, 2021 की जिनवाणी के बारे में मेरी प्रतिक्रिया-

1. **प्रवचन-** 'सामायिक की वेशभूषा क्यों आवश्यक?' श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. द्वारा अजमेर में युवक-युवतियों की कक्षा में फरमाये गये प्रवचन में बहुत ही सहज सरल शब्दों में जो महत्ता बतायी, साथ ही हर उपकरण/परिधान-मुँहपत्ती, चादर/दुपट्टा, चोलपट्टा, आसन, पूँजनी आदि की जो व्याख्या की है वह चिन्तन, मनन और आचरण योग्य है। मैं स्वयं भी कई बार वेशभूषा बदलने में प्रमाद कर लेता हूँ। सम्भवत: भविष्य में यह प्रवचन कई श्रावकों को सामायिक वेशभूषा में ही सामायिक करने हेतु प्रेरित करेगा, बहुत-बहुत अनुमोदना।
2. **नारी-स्तम्भ-** 'कैसे हो बच्चों की परवरिश' श्री पारसमलजी चण्डालिया का लेख मन को छू गया। सभी अभिभावकों और बच्चों को पढ़ने की आवश्यकता है। इस प्रकार के लेख तो बच्चों के पाठ्यक्रम में शामिल किये जाने चाहिए तथा विद्यालय, महाविद्यालय के स्तर पर भी अंकित होना चाहिए। बहुत-बहुत साधुवाद।
3. **संस्मरण-** 'साम्प्रदायिक सौहार्द का अद्भुत दृश्य' श्री मनोज कुमारजी जैन 'पाटोली वाले' ने शोभायात्रा का जो वर्णन किया, मन आनन्दित हो गया। यह भी विचार आया कि ऐसे दृश्यों के हम भी साक्षी होते।

   मुमुक्षुबहिन का विगत छह वर्षों का वैराग्य पूर्ण जीवन पढ़ा। धन्य है मुमुक्षुबहिन (अब तो महासतीजी हैं) सभी पारिवारिकजन, ग्रामवासी एवं आयोजनकर्त्ता निश्चित ही इस प्रकार के अयोजन के लिए धन्यवाद के पात्र हैं।

-'तृप्ति' वृन्दा रोड़, भवानीमण्डी-326502, जिला झालावाड़ (राजस्थान)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 32
ISSN 2249-2011

शोधालेख

भारतीय दर्शनों में अनेकान्तवाद के तत्त्व : एक ऐतिहासिक विवेचन

प्रो. सागरमल जैन

अनेकान्तवाद को मुख्यत: जैनदर्शन का पर्याय माना जाता है। यह कथन सत्य भी है, क्योंकि अन्य दार्शनिकों ने उसका खण्डन मुख्यत: उसके इसी सिद्धान्त के आधार पर किया है। दूसरी ओर यह भी सत्य है कि अनेकान्तवाद का विकास और तार्किक आधारों पर उसकी पुष्टि जैन दार्शनिकों ने की है। अत: अनेकान्तवाद को जैन दर्शन का पर्याय मानना समुचित भी है; किन्तु इसका यह भी अर्थ नहीं है कि अन्य भारतीय दर्शनों में इसका पूर्णत: अभाव है। सत्ता सम्बन्ध में अनेकान्त एक अनुभूत सत्य है और अनुभूत सत्य को स्वीकार करना ही होता है। विवाद या मत-वैभिन्य अनुभूति के आधार पर नहीं, उसकी अभिव्यक्ति के आधार पर होता है। अभिव्यक्ति के लिए भाषा का सहारा लेना होता है, किन्तु भाषायी अभिव्यक्ति अपूर्ण, सीमित और सापेक्ष होती है अत: उसमें मतभेद होता है और उन मतभेदों की सापेक्षिक सत्यता को स्वीकार करने या उन परस्पर विरोधी कथनों के बीच समन्वय लाने के प्रयास में ही अनेकान्तवाद का जन्म होता है। वस्तुत: अनेकान्तवाद या अनेकान्तिक दृष्टिकोण का विकास निम्नलिखित तीन आधारों पर होता है-

1. बहु-आयामी वस्तुतत्त्व के सम्बन्ध में ऐकान्तिक विचारों या कथनों का निषेध।
2. भिन्न-भिन्न अपेक्षाओं के आधार पर बहु-आयामी वस्तुतत्त्व के सम्बन्ध में प्रस्तुत विरोधी कथनों की सापेक्षिक सत्यता की स्वीकृति।
3. परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली विचार-धाराओं को समन्वित करने का प्रयास।

वेदों में प्रस्तुत अनेकान्त दृष्टि

प्रस्तुत आलेख में हमारा प्रयोजन उक्त अवधारणाओं के आधार पर जैनेतर भारतीय चिन्तन में अनैकान्तिक दृष्टिकोण कहाँ-कहाँ किस रूप में उल्लेखित हैं, इसका दिग्दर्शन कराना है।

भारतीय साहित्य में वेद प्राचीनतम है। उनमें भी **ऋग्वेद** सबसे प्राचीन माना जाता है। **ऋग्वेद** न केवल परमतत्त्व के सत् और असत् पक्षों को स्वीकार करता है अपितु इनके मध्य समन्वय भी करता है। ऋग्वेद के नासदीयसूक्त (10.129.1) में परमतत्त्व के सत् या असत् होने के सम्बन्ध में न केवल ज्ञिज्ञासा प्रस्तुत की गई, अपितु ऋषि ने यह भी कह दिया कि परम सत्ता को हम न सत् कह सकते हैं और न असत्। इस प्रकार वस्तुतत्त्व की बहु-आयामिता और उसमें भेद से परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले पक्षों की युगपद् उपस्थिति की स्वीकृति हमें वेद काल से ही मिलने लगती है। मात्र इतना ही नहीं ऋग्वेद का यह कथन-"**एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं (1.164.46)।**" परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली मान्यताओं की सापेक्षिक सत्यता को स्वीकार करते हुए उनमें समन्वय करने का प्रयास ही तो है। इस प्रकार हमें अनैकान्तिक दृष्टि के अस्तित्व के प्रमाण ऋग्वेद के काल से ही मिलने लगते हैं। यह बात न केवल वैदिक ऋषियों द्वारा अनैकान्तिक दार्शनिक दृष्टि की स्वीकृति की सूचक है, अपितु इस सिद्धान्त की त्रैकालिक सत्यता और प्राचीनता की भी सूचक है। चाहे विद्वानों की दृष्टि में सप्तभङ्गी का विकास एक परवर्ती घटना हो, किन्तु अनेकान्त तो उतना ही पुराना है जितना ऋग्वेद का यह अंश। ऋग्वैदिक ऋषियों के समक्ष सत्ता या परमतत्त्व के बहु-आयामी होने का पृष्ट खुला हुआ था और यही कारण है कि वे किसी ऐकान्तिक दृष्टि में आबद्ध होना नहीं चाहते थे। **ऋग्वेद** के दशम मण्डल का

नासदीय सूक्त (10.129.1) इस तथ्य का सबसे बड़ा प्रमाण है–''**नासदासीन्नोसदासीत्तदानीं नासीद्रजो न व्योमं परो यत्।**''

सत्य तो यह है कि उस परमसत्ता को जो समस्त अस्तित्व के मूल में है, सत्, असत्, उभय या अनुभय– किसी एक कोटि में आबद्ध करके नहीं कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में उसके सम्बन्ध में जो भी कथन किया जा सकेगा वह भाषा की सीमितता के कारण सापेक्ष ही होगा, निरपेक्ष नहीं। यही कारण है कि वैदिक ऋषि उस परमसत्ता या वस्तु तत्त्व को सत् या असत् नहीं कहना चाहता है, किन्तु प्रकारान्तर से वे उसे सत् भी कहते हैं– यथा–**एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं (1.164.46)** और असत् भी कहते हैं यथा–**देवानां युगे प्रथमेऽसत: सदजायत (10.72.3)** इससे यही फलित होता है कि वैदिक ऋषि अनाग्रही अनेकान्त दृष्टि के ही सम्पोषक रहे हैं।

औपनिषदिक साहित्य और अनेकान्तवाद

न केवल वेदों में, अपितु उपनिषदों में भी इस अनेकान्तिक दृष्टि के उल्लेख के अनेकों संकेत उपलब्ध हैं। उपनिषदों में अनके स्थलों पर परमसत्ता के बहुआयामी होने और उसमें परस्पर विरोधी कहे जाने वाले गुणधर्मों की उपस्थिति के सन्दर्भ मिलते हैं। जब हम उपनिषदों में अनेकान्तिकदृष्टि के सन्दर्भों की खोज करते हैं तो उनमें हमें निम्न तीन प्रकार के दृष्टिकोण उपलब्ध होते हैं–

1. अलग–अलग सन्दर्भों में परस्पर विरोधी विचारधाराओं का प्रस्तुतीकरण।
2. ऐकान्तिक विचारधाराओं का निषेध।
3. परस्पर विरोधी विचारधाराओं के समन्वय का प्रयास।

सृष्टि का मूलतत्त्व सत् है या असत्–इस समस्या के सन्दर्भ में हमें उपनिषदों में दोनों ही प्रकार की विचारधाराओं के संकेत उपलब्ध होते हैं। **तैत्तिरीय उपनिषद्** (2.7) में कहा गया है कि प्रारम्भ में असत् ही था। उसी से सत् उत्पन्न हुआ है। इस विचारधारा की पुष्टि **छान्दोग्योपनिषद्** (3.19.1) से भी होती है। उसमें भी कहा गया है कि सर्वप्रथम असत् ही था उससे सत् हुआ और सत् से सृष्टि हुई। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन दोनों में असत् वादी विचारधारा का प्रतिपादन हुआ, किन्तु इसके विपरीत उसी **छान्दोग्योपनिषद्** (6.2.1,3) में यह भी कहा गया कि पहले अकेला सत् ही था, दूसरा कुछ नहीं था, उसी से यह सृष्टि हुई है। **बृहदारण्यकोपनिषद्** (1.4.1–4) में भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए कहा गया है कि जो कुछ भी सत्ता है उसका आधार लोकातीत सत् ही है। प्रपञ्चात्मक जगत् इसी सत् से उत्पन्न होता है।

इसी तरह विश्व का मूलतत्त्व जड़ है या चेतन, इस प्रश्न को लेकर उपनिषदों में दोनों ही प्रकार के सन्दर्भ उपलब्ध होते हैं। एक ओर **बृहदारण्यकोपनिषद्** (2.4.12) में याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी से कहते हैं कि चेतना इन्हीं भूतों में से उत्पन्न होकर उन्हीं में लीन हो जाती है तो दूसरी ओर **छान्दोग्योपनिषद्** (6.2.1,3) में कहा गया है कि पहले अकेला सत् (चित्त तत्त्व) ही था, दूसरा कोई नहीं था। उसने सोचा कि मैं अनेक हो जाऊँ और इस प्रकार सृष्टि की उत्पत्ति हुई । इसी तथ्य की पुष्टि **तैत्तिरीयोपनिषद्** (2.6) से भी होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि उपनिषदों में परस्पर विरोधी विचारधाराएँ प्रस्तुत की गयी हैं। यदि ये सभी विचारधाराएँ सत्य हैं तो इससे औपनिषदिक ऋषियों की अनेकान्त दृष्टि का ही परिचय मिलता है। यद्यपि ये सभी संकेत एकान्तवाद को प्रस्तुत करते हैं, किन्तु विभिन्न एकान्तवादों की स्वीकृति में ही अनेकान्तवाद का जन्म होता है। अत: हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि औपनिषदिक चिन्तन में विभिन्न एकान्तवादों को स्वीकार करने की अनैकान्तिक दृष्टि अवश्य थी। पुन: उपनिषदों में हमें ऐसे अनेक संकेत मिलते हैं जहाँ एकान्तवाद का निषेध किया गया है। **बृहदारण्यकोपनिषद्** (3.8.8) में ऋषि कहता है कि 'वह स्थूल भी नहीं है और सूक्ष्म भी नहीं है। वह ह्रस्व भी नहीं है और दीर्घ भी नहीं हैं।' इस प्रकार यहाँ हमें स्पष्टतया

एकान्तवाद का निषेध प्राप्त होता है। एकान्त के निषेध के साथ-साथ सत्ता में परस्पर विरोधी गुणधर्मों की उपस्थिति के संकेत भी हमें उपनिषदों में मिल जाते हैं। **तैत्तिरीयोपनिषद्** (2.6) में कहा गया है कि वह परम सत्ता मूर्त-अमूर्त, वाच्य-अवाच्य, विज्ञान (चेतन)-अविज्ञान (जड़), सत्-असत, रूप है। इसी प्रकार **कठोपनिषद्** (1.20) में उस परम सत्ता को अणु की अपेक्षा भी सूक्ष्म व महत् की अपेक्षा भी महान कहा गया है। यहाँ परम सत्ता में सूक्ष्मता और महत्ता दोनों ही परस्पर विरोधी धर्म एक साथ स्वीकार करने का अर्थ अनेकान्त की स्वीकृति के अतिरिक्त क्या हो सकता है? पुनः उसी उपनिषद् (3.12) में एक ओर आत्मा को ज्ञान का विषय बताया गया है, तो वहीं दूसरी ओर उसे ज्ञान का अविषय बताया गया है। जब इसकी व्याख्या का प्रश्न आया तो आचार्य शंकर को भी कहना पड़ा कि यहाँ अपेक्षा भेद से जो अज्ञेय है उसे ही सूक्ष्म ज्ञान का विषय बताया गया है। यही उपनिषदकारों का अनेकान्त है। इसी प्रकार **श्वेताश्वतरोपनिषद्** (1.7) में भी उस परम सत्ता को क्षर एवं अक्षर, व्यक्त एवं अव्यक्त ऐसे परस्पर विरोधी धर्मों से युक्त कहा गया है। यहाँ भी सत्ता या परमतत्त्व की बहुआयामिता या अनैकान्तिकता स्पष्ट होती है। मात्र यही नहीं यहाँ परस्पर विरुद्ध धर्मों की एक साथ स्वीकृति इस तथ्य का प्रमाण है कि उपनिषदकारों की शैली अनेकान्तात्मक रही है। यहाँ हम देखते हैं कि उपनिषदों का दर्शन जैनदर्शन के समान ही सत्ता में परस्पर विरोधी गुणधर्मों को स्वीकार करता प्रतीत होता है। मात्र यही नहीं उपनिषदों में परस्पर विरोधी मतवादों के समन्वय के सूत्र भी उपलब्ध होते हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि उपनिषदकारों ने न केवल एकान्त का निषेध किया, अपितु सत्ता में परस्पर विरोधी गुणधर्मों को स्वीकृति भी प्रदान की। जब औपनिषदिक ऋषियों को यह लगा होगा कि परमतत्त्व में परस्पर विरोधी गुणधर्मों की एक ही साथ स्वीकृति तार्किक दृष्टि से युक्ति संगत नहीं होगी तो उन्होंने उस परमतत्त्व को अनिर्वचनीय या अवक्तव्य भी मान लिया। **तैत्तिरीय** उपनिषद् (2) में यह कहा गया है कि वहाँ वाणी की पहुँच नहीं है और उसे मन के द्वारा भी प्राप्त नहीं किया जा सकता **(यतो वाचो निवर्तन्ते ।। अप्राप्य मनसा सह।।)** इससे ऐसा लगता है कि उपनिषद् काल में सत्ता के सत्, असत्, उभय और अवक्तव्य/अनिर्वचनीय- ये चारों पक्ष स्वीकृत हो चुके थे। किन्तु औपनिषदिक ऋषियों की विशेषता यह है कि उन्होंने उन विरोधी के समन्वय का मार्ग भी प्रशस्त किया। इसका सबसे उत्तम प्रतिनिधित्व हमें **ईशावास्योपनिषद्** (4) में मिलता है। उसमें कहा गया है कि- **''अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत्।''** अर्थात् वह गतिरहित है फिर भी मन से एवं देवों से तेज गति करता है। **''तदेजति तन्नेजति तद्दूरे तदिन्तिके''**, अर्थात् वह चलता है और नहीं भी चलता है, वह दूर भी है, वह पास भी है। इस प्रकार उपनिषदों में जहाँ विरोधी प्रतीत होने वाले अंश हैं, वहीं उनमें समन्वय को मुखरित करने वाले अंश भी प्राप्त होते हैं। परमसत्ता के एकत्व-अनेकत्व, जड़त्व -चेतनत्व आदि विविध आयामों में से किसी एक को स्वीकार कर उपनिषद् काल में अनेक दार्शनिक दृष्टियों का उदय हुआ। जब ये दृष्टियाँ अपने-अपने मन्तव्यों को ही एकमात्र सत्य मानते हुए, दूसरे का निषेध करने लगीं तब सत्य के गवेषकों को एक ऐसी दृष्टि का विकास करना पड़ा जो सभी की सापेक्षिक सत्यता को स्वीकार करते हुए उन विरोधी विचारों का समन्वय कर सके। यह विकसित दृष्टि है जो वस्तु में प्रतीति के स्तर पर दिखाई देने वाले विरोध के अन्तस् में अविरोध को देखती है और सैद्धान्तिक द्वन्द्वों के निराकरण का एक व्यावहारिक एवं सार्थक समाधान प्रस्तुत करती है। इस प्रकार अनेकान्तवाद विरोधों के शमन का एक व्यावहारिक दर्शन है। वह उन्हें समन्वय के सूत्र में पिरोने का सफल प्रयास करता है।

ईशावास्य में पग-पग पर अनेकान्त जीवन दृष्टि के संकेत प्राप्त होते हैं। वह अपने प्रथम श्लोक में ही **''तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्''** कहकर त्याग एवं भोग-इन दो विरोधी तथ्यों का

समन्वय करता है एवं एकान्त त्याग और एकान्त भोग दोनों को सम्यक् जीवन दृष्टि के लिए अस्वीकार करता है। जीवन न तो एकान्त त्याग पर चलता है और न एकान्त भोग पर, बल्कि जीवनयात्रा त्याग और भोगरूपी दोनों चक्रों के सहारे चलती है। इस प्रकार **ईशावास्य** सर्वप्रथम अनेकान्त की व्यावहारिक जीवनदृष्टि को प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार कर्म और अकर्म सम्बन्धी ऐकान्तिक विचारधाराओं में समन्वय करते हुए **ईशावास्य** (2) कहता है कि ''**कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समा:**'' अर्थात् मनुष्य निष्काम भाव से कर्म करते हुए सौ वर्ष जीए। निहितार्थ यह है कि जो कर्म सामान्यतया सकाम या सप्रयोजन होते हैं वे बन्धनकारक होते हैं, किन्तु यदि कर्म निष्काम भाव से बिना किसी स्पृहा के हों तो उनसे मनुष्य लिप्त नहीं होता, अर्थात् वे बन्धन कारक नहीं होते । निष्काम कर्म की यह जीवन-दृष्टि व्यावहारिक जीवन-दृष्टि है। भेद-अभेद का व्यावहारिक दृष्टि से समन्वय करते हुए ईशावास्य (6) में आगे कहा गया है -

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।।

अर्थात् जो सभी प्राणियों में अपनी आत्मा को और आत्मा में सभी प्राणियों को देखता है वह किसी से भी घृणा नहीं करता। यहाँ जीवात्माओं में भेद एवं अभेद दोनों को एक साथ स्वीकार किया गया है। यहाँ भी ऋषि की अनेकान्तदृष्टि ही परिलक्षित होती है जो समन्वय के आधार पर पारस्परिक घृणा को समाप्त करने की बात कहती है।

एक अन्य स्थल पर विद्या (अध्यात्म) और अविद्या (विज्ञान) (ईशा०10) में तथा सम्भूति (कार्यब्रह्म) एवं असम्भूति (कारणब्रह्म) (ईशा०12) अथवा वैयक्तिकता और सामाजिकता में भी समन्वय करने का प्रयास किया गया है। ऋषि कहता है कि जो अविद्या की उपासना करता है वह अन्धकार में प्रवेश करता है और जो विद्या की उपासना करता है वह उससे भी गहन अन्धकार में प्रवेश करता है (ईशा० 9) और वह जो दोनों को जानता है या दोनों का समन्वय करता है, वह अविद्या से मृत्यु पर विजय प्राप्त कर विद्या से अमृत तत्त्व को प्राप्त करता है (ईशा० 11)। यहाँ विद्या और अविद्या अर्थात् अध्यात्म और विज्ञान की परस्पर समन्वित साधना अनेकान्त दृष्टि के व्यावहारिक पक्ष को प्रस्तुत करती है। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सत्ता की बहु आयामिता और समन्वयवादी व्यावहारिक जीवन दृष्टि का अस्तित्व बुद्ध और महावीर से पूर्व उपनिषदों में भी था, जिसे अनेकान्त दर्शन का आधार माना जा सकता है।

सांख्य दर्शन और अनेकान्तवाद

भारतीय षड्दर्शनों में सांख्य एक प्राचीन दर्शन है। इसकी कुछ अवधारणाएँ हमें उपनिषदों में भी उपलब्ध होती हैं। यह भी जैनदर्शन के जीव एवं अजीव की तरह पुरुष एवं प्रकृति ऐसे दो मूल तत्त्व मानता है। उसमें पुरुष को कूटस्थ नित्य और प्रकृति को परिणामी नित्य माना गया है। इस प्रकार उसके द्वैतवाद में एक तत्त्व परिवर्तनशील है और दूसरा अपरिवर्तनशील। इस प्रकार सत्ता के दो पक्ष परस्पर विरोधी गुणधर्मों से युक्त हैं। फिर भी उनमें एक सह-सम्बन्ध है। पुन: यह कूटस्थ नित्यता भी उस मुक्त पुरुष के सम्बन्ध में है, जो प्रकृति से अपनी पृथक्ता अनुभूत कर चुका है। सामान्य संसारी जीव में तो प्रकृति के संयोग से अपेक्षा भेद से नित्यत्व और परिणामित्व दोनों ही मान्य किये जा सकते हैं। पुन: प्रकृति तो जैनदर्शन के सत् के समान परिणामी नित्य मानी गई है अर्थात् उसमें परिवर्तनशील एवं अपरिवर्तनशील दोनों विरोधी गुणधर्म अपेक्षा भेद से रहे हुए हैं। पुन: त्रिगुण-सत्त्व, रजस् और तमस् परस्पर विरोधी हैं, फिर भी प्रकृति में वे तीनों एक साथ रहते हैं। सांख्य दर्शन का सत्त्वगुण स्थिति का, रजोगुण उत्पाद या क्रियाशीलता का, तमोगुण विनाश या निष्क्रियता का प्रतीक है। अत: मेरी दृष्टि में सांख्य का त्रिगुणात्मकता का सिद्धान्त और जैन दर्शन का उत्पाद-व्यय और

ध्रौव्यात्मकता का सिद्धान्त एक दूसरे से अधिक दूर नहीं हैं। सत्ता की बहु-आयामिता और परस्पर विरोधी गुणधर्मों की युगपद् अवस्थिति यही तो अनेकान्त है। द्रव्य की नित्यता और पर्याय की अनित्यता जैनदर्शन के समान सांख्य को भी मान्य है। पुन: प्रकृति और विकृति दोनों परस्पर विरोधी हैं, किन्तु सांख्यदर्शन में बुद्धि (महत्), अहंकार और पाँच तन्मात्राएँ-प्रकृति और विकृति दोनों ही माने गये हैं। पुन: निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों परस्पर विरोधी हैं, किन्तु सांख्यदर्शन में प्रकृति में प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों गुण पाये जाते हैं। सांसारिक पुरुषों की अपेक्षा से वह प्रवृत्त्यात्मक और मुक्त पुरुष की अपेक्षा से निवृत्त्यात्मक देखी जाती है। इसी प्रकार पुरुष में अपेक्षा भेद से भोक्तृत्व और अभोक्तृत्व दोनों गुण देखे जाते हैं। यद्यपि मुक्त पुरुष कूटस्थ नित्य है फिर भी संसार दशा में उसमें कर्तृत्व गुण देखा जाता है, चाहे वह प्रकृति के निमित्त से ही क्यों नहीं हो। संसार दशा में पुरुष में ज्ञान-अज्ञान, कर्तृत्व-अकर्तृत्व, भोक्तृत्व-अभोक्तृत्व के विरोधी गुण रहते हैं। सांख्यदर्शन की इस मान्यता का समर्थन **महाभारत** के **आश्वमेधिक पर्व** में अनुगीता के 47वें अध्ययन के 7वें श्लोक में मिलता है- उसमें लिखा है-

यो विद्वान्सहवासं च विवासं चैवं पश्यति।
तथैवैकत्वनानात्वे स दु:खात् परिमुच्यते।।

अर्थात् जो विद्वान् जड़ और चेतन के भेदाभेद को तथा एकत्व और नानात्व को देखता है वह दु:ख से छूट जाता है। जड़ (शरीर) और चेतन (आत्मा) का यह भेदाभेद तथा एकत्व में अनेकत्व और अनेकत्व में एकत्व की यह दृष्टि अनेकान्तवाद की स्वीकृति के अतिरिक्त क्या हो सकती है। वस्तुत: सांख्यदर्शन में पुरुष और प्रकृति में आत्यन्तिक भेद माने बिना मुक्ति/कैवल्य की अवधारणा सिद्ध नहीं होगी, किन्तु दूसरी ओर उन दोनों में आत्यन्तिक अभेद मानेंगे तो संसार की व्याख्या सम्भव नहीं होगी। संसार की व्याख्या के लिए उनमें आंशिक या सापेक्षिक अभेद और मुक्ति की व्याख्या के लिए उनमें सापेक्षिक भेद मानना भी आवश्यक है। पुन: प्रकृति और पुरुष को स्वतन्त्र तत्त्व मानकर भी किसी न किसी रूप में उन दोनों की पारस्परिक प्रभावकता तो मानी गई है। प्रकृति में जो विकार उत्पन्न होता है वह पुरुष का सान्निध्य पाकर ही होता है। इसी प्रकार चाहे हम बुद्धि (महत्) और अहंकार को प्रकृति का विकार मानें, किन्तु उनके चैतन्य रूप में प्रतिभासित होने के लिए उनमें पुरुष का प्रतिबिम्बित होना तो आवश्यक है। चाहे सांख्य दर्शन बन्धन और मुक्ति को प्रकृति के आश्रित माने, फिर भी जड़ प्रकृति के प्रति तादाम्य बुद्धि का कर्ता तो किसी न किसी रूप में पुरुष को स्वीकार करना होगा, क्योंकि जड़ प्रकृति के बन्धन और मुक्ति की अवधारणा तार्किक दृष्टि से सबल सिद्ध नहीं होती है।

वस्तुत: द्वैतवादी दर्शनों-चाहे वे सांख्य हों या जैन, की कठिनाई यह है कि उनमें तत्त्वों की पाारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रिया या आंशिक तादात्म्य माने बिना संसार और बन्धन की व्याख्या सम्भव नहीं होती है और दोनों को एक दूसरे से निरपेक्ष या स्वतन्त्र माने बिना मुक्ति की अवधारणा सिद्ध नहीं होती है। अत: किसी न किसी स्तर पर उनमें अभेद और किसी न किसी स्तर पर उनमें भेद मानना आवश्यक है। यही भेदाभेद की दृष्टि ही अनेकान्त की आधार भूमि है, जिसे किसी न किसी रूप में सभी दर्शनों को स्वीकार करना ही होता है। सांख्य दर्शन चाहे बुद्धि, अहंकार आदि को प्रकृति का विकार माने, किन्तु संसारी पुरुष को उससे असम्पृक्त नहीं कहा जा सकता है। योगसूत्र साधनपाद के सूत्र 20 के भाष्य में कहा गया है-

''स पुरुषो बुद्धे: प्रति संवेदी स बुद्धेर्न स्वरूपो नात्यन्त विरूप इति। न तावत्स्वरूप: कस्मात् ज्ञाता-ज्ञातविषयत्वात्-अस्तु तर्हि विरूप इति नात्यन्तं विरूप:, कस्मात् शुद्धोऽप्यसौ प्रत्ययानुपश्यो यत: प्रत्ययं बौद्धमनुपश्यति।''

अत: प्रकृति और पुरुष दो स्वतन्त्र तत्त्व होकर भी

उनमें पारस्परिक क्रिया प्रतिक्रिया घटित होती है। उन दो तत्त्वों के बीच भेदाभेद यही बन्धन और मुक्ति की व्याख्याओं का आधार है।

योग दर्शन और अनेकान्तवाद

जैनदर्शन में द्रव्य और गुण या पर्याय, दूसरे शब्दों में धर्म और धर्मों मे एकान्त भेद या एकान्त अभेद को स्वीकार नहीं करके उनमें भेदाभेद स्वीकार करता है और यही उसके अनेकान्तवाद का आधार है। यही दृष्टिकोण हमें योगसूत्र भाष्य में भी मिलता है–

''न धर्मी त्र्यध्वा धर्मास्तु त्र्यध्वान ते लक्षिता अलक्षिताश्व तान्तामवस्थां प्राप्नुवन्तोऽन्यत्वेन प्रति निर्दिश्यन्ते अवस्थान्तरतो न द्रव्यान्तरत:। यथैकरेखा शतस्थाने शतं दशस्थाने दशैक चैकस्थाने। यथा चैकत्वेपि स्त्री माता चोच्यते दुहिता च स्वसा चेति।''

(योगसूत्र विभूतिपाद 13 का भाष्य)

इसी तथ्य को उसमें इस प्रकार भी प्रकट किया गया है–**''यथा सुवर्ण भाजनस्य भित्वान्यथा क्रियमाणस्य भावान्यथात्वं भवति न सुवर्णान्य-थात्वम्''** इन दोनों सन्दर्भों से यह स्पष्ट है कि जिस प्रकार एक ही स्त्री अपेक्षा भेद से माता, पुत्री अथवा बहिन कहलाती है उसी प्रकार एक ही द्रव्य अवस्थान्तर को प्राप्त होकर भी वहीं रहता है। एक स्वर्णपात्र को तोड़कर जब कोई अन्य वस्तु बनाई जाती है तो उसकी अवस्था बदलती है, किन्तु स्वर्ण वही रहता है अर्थात् द्रव्य की अपेक्षा वह वही रहता है अर्थात् नहीं बदलता है, किन्तु अवस्था बदलती है। यही सत्ता का नित्यानित्यत्व या भेदाभेद है जो जैन दर्शन में अनेकान्तवाद का आधार है। इस भेदाभेद को आचार्य वाचस्पति मिश्र इसी स्थल की टीका में स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हुए लिखते हैं–

''अनुभव एव ही धर्मिणो धर्मादीनां भेदाभेदौ व्यवस्थापयति।''

मात्र इतना ही नहीं, वाचस्पति मिश्र तो स्पष्ट रूप से एकान्तवाद का निरसन करके अनेकान्तवाद की स्थापना करते हैं। वे लिखते हैं–

न ह्यैकान्तिकेऽभेद धर्मादीनां धर्मिणो, धर्मी-रूपवद् धर्मादित्वं नाप्यैकान्तिके भेदे गवाश्ववद् धर्मादित्वं स चानुभवोऽनेकान्तिकत्वमवस्थापयन्नपि धर्मादिषूपजनापाय धर्मकेष्वपि धर्मिणमेकमनुगमयन् धर्मांश्च परस्परतो व्यवर्तयन् प्रत्यात्ममनुभूयत इति।

एकान्त का निषेध और अनेकान्त की पुष्टि का योग दर्शन में इससे बड़ा कोई प्रमाण नहीं हो सकता है। योग दर्शन भी जैन दर्शन के समान ही सत्ता को सामान्य विशेषात्मक मानता है। **योगसूत्र** के समाधिपाद का सूत्र 7 इसकी पुष्टि करता है–

सामान्यविशेषात्मनोऽर्थस्य।

इसी बात को किञ्चित् शब्द भेद के साथ विभूतिपाद के सूत्र 44 में भी कहा गया है–

सामान्यविशेषसमुदायोऽत्र द्रव्यम्।

मात्र इतना ही नहीं, योगदर्शन में द्रव्य की नित्यता–अनित्यता को उसी रूप में स्वीकार किया गया है, जिस रूप में अनेकान्त दर्शन में । महाभाष्य के पंचम आह्निक में प्रतिपादित है–

द्रव्यनित्यमाकृतिरनित्या, सुवर्णं कयाचिदा-कृत्यायुक्तं पिण्डो भवति पिण्डाकृतिमुपमृद्य रुचका: क्रियन्ते, रुचकाकृतिमुपमृद्य कटका: क्रियन्ते आकृति-रन्याचान्याभवति द्रव्यं पुनस्तदेव आकृत्युपमृद्येन द्रव्यमेवावशिष्यते।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सांख्य और योगदर्शन की पृष्ठभूमि में कहीं न कहीं अनेकान्त दृष्टि अनुस्यूत है।

वैशेषिक दर्शन और अनेकान्त

वैशेषिकदर्शन में जैनदर्शन के समान ही प्रारम्भ में तीन पदार्थों की कल्पना की गई, वे हैं द्रव्य, गुण और कर्म, जिन्हें हम जैनदर्शन के द्रव्य, गुण और पर्याय (क्रिया) कह सकते हैं। यद्यपि वैशेषिकदर्शन भेदवादी दृष्टि से इन्हें एक दूसरे से स्वतन्त्र मानता है, फिर भी उसे इनमें आश्रय–आश्रयी भाव तो स्वीकार करना ही पड़ा है। ज्ञातव्य है कि जहाँ आश्रय–आश्रयी भाव होता है, वहाँ उनमें कथंचित् या सापेक्षिक सम्बन्ध तो मानना ही

पड़ता है, उन्हें एक-दूसरे से पूर्णत: निरपेक्ष या स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता है। चाहे वैशेषिकदर्शन उन्हें एक-दूसरे से स्वतन्त्र कहे, फिर भी वे असम्बद्ध नहीं हैं। अनुभूति के स्तर पर द्रव्य से पृथक् गुण और द्रव्य एवं गुण से पृथक् कर्म नहीं होते हैं। यही उनका भेदाभेद है, अनेकान्त है।

पुन: वैशेषिकदर्शन में सामान्य और विशेष नामक दो स्वतन्त्र पदार्थ माने गये हैं। पुन: उनमें भी सामान्य के दो भेद किए-परसामान्य और अपरसामान्य। परसामान्य को ही सत्ता भी कहा गया है, वह शुद्ध अस्तित्व है, सामान्य है, किन्तु जो अपर सामान्य है वह सामान्य विशेष रूप है। द्रव्य, गुण और कर्म पर एवं अपरसामान्य हैं। अत: सामान्य विशेष उभय रूप है। **वैशेषिकसूत्र** (1.2.5) में कहा भी गया है-"**द्रव्यत्वं गुणत्वं कर्मत्वं च सामान्यानि विशेषाश्च।**"

द्रव्य, गुण और कर्म को युगपद् सामान्य विशेष-उभय रूप मानना यही तो अनेकान्त है। द्रव्य किस प्रकार सामान्य विशेषात्मक है, इसे स्पष्ट करते हुए **वैशेषिकसूत्र** (9.2.3) में कहा गया है-

सामान्यं विशेष इति बुद्ध्यपेक्षम्।

सामान्य और विशेष-दोनों ज्ञान, बुद्धि या विचार की अपेक्षा से हैं। इसे स्पष्ट करते हुए भाष्यकार प्रशस्त-पाद कहते हैं-"**द्रव्यत्वं पृथ्वीत्वापेक्षया सामान्यं सत्तापेक्षया च विशेष इति।**"

द्रव्यत्व पृथ्वी नामक द्रव्य की अपेक्षा से सामान्य है और सत्ता सामान्य की अपेक्षा से विशेष है। दूसरे शब्दों में एक ही वस्तु अपेक्षा भेद से सामान्य और विशेष दोनों ही कही जा सकती है। अपेक्षा भेद से वस्तु में विरोधी प्रतीत होने वाले पक्षों को स्वीकार करना-यही तो अनेकान्त है। उपस्कार कर्ता ने तो स्पष्टत: कहा है-"**सामान्यं विशेषसंज्ञामपि लभते।**" अर्थात् वस्तु केवल सामान्य अथवा केवल विशेष रूप नहीं होकर सामान्य विशेष रूप है और इसी तथ्य में अनेकान्त की प्रस्थापना है।

पुन: वस्तु असत् रूप है इस तथ्य को भी कणाद महर्षि ने अन्योन्याभाव के प्रसङ्ग में स्वीकार किया है। वे लिखते हैं-"**सच्चासत्। यच्चान्यदसद-तस्तदसत्।**" **-वैशैषिकसूत्र** (9.1.4-5)

इसकी व्याख्या में उपस्कारकर्ता ने जैनदर्शन के समान ही कहा है-"**यत्र सदेव घटादि असदिति व्यवह्रियते तत्र तादात्म्याभाव: प्रतीयते। भवति हि असन्नश्वो गवात्मना-असन् गौरश्वात्मना-असन् पटो घटात्मना इत्यादि।**"

तात्पर्य यह है कि वस्तु स्वस्वरूप की अपेक्षा से अस्ति रूप है और पर स्वरूप की अपेक्षा नास्ति रूप है। वस्तु में स्व की सत्ता की स्वीकृति और पर की सत्ता का अभाव मानना यही तो अनेकान्त है जो वैशेषिकों को भी मान्य है। अस्तित्व नास्तित्व पूर्वक और नास्तित्व अस्तित्व पूर्वक है।

(क्रमश:)

जीवनबोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

1. सब हैं मेरे

सीमित को अपना मानना है पाप।
सबको अपना मानने वाला ही बनता निष्पाप।।

2. आसक्ति

साता सबको सुहाती।
पर इसकी आसक्ति ही रुलाती।।

3. प्यास

जगेगी जब मुक्ति की तीव्र प्यास।
उस हेतु तब स्वत: होगा तीव्र प्रयास।।

4. समझना

दुनिया को चाहता है समझना।
तो प्रारम्भ कर दे स्वयं को समझना।।

-संकलित

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 39
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (13)

श्री पी. शिखरमल सुराणा

51. अपने घटिया नज़रिये का अहसास हो जाने पर भी हम उसे बदलते क्यों नहीं..? वास्तव में यह मानव प्रवृत्ति है कि हमें कभी-भी अपनी कोई भी कमी दिखाई नहीं देती। हम हमेशा दूसरों में ही कमियाँ ढूँढ़ते रहते हैं। यह और कुछ नहीं वरन् हमारा अपना अहं है, जो हमेशा स्वयं को स्थायी रूप से सही और दूसरों को गलत समझता है। इस खोखले और झूठे अहंकार के कारण ही हम अपनी स्वयं की कमियों का पता चलने पर भी उनके लिए दूसरों पर दोषारोपण हेतु उसके कारणों को भी बाहर ही ढूँढ़ते हैं। यह प्रवृत्ति ही हमारे नकारात्मक होने का प्रमाण है, और अपने में विद्यमान इसी नकारात्मकता का हमें विरोध करना है। अपने आपसे लड़ना है, अपनी कमियों एवं दोषों को पहचानना है एवं उनका विश्लेषण करते हुए आत्मचिन्तन तथा अन्तर-अवलोकन करना है। अपने स्वयं के दोष ढूँढ़ना यद्यपि सबसे कठिन कार्य है, किन्तु सबसे अधिक साहसिक और सराहनीय कार्य यही है।

52. ऐसा व्यक्ति, जिसने कभी किसी से आशा नहीं की, वह कभी निराश भी नहीं हो सकता है। उसी प्रकार जिसने कभी किसी से कोई अपेक्षा नहीं रखी, वह कभी स्वयं को उपेक्षित भी महसूस नहीं करता है। समाज एवं व्यक्तियों के प्रति पूर्ण समर्पित अवश्य रहिये, लेकिन उनसे कुछ प्राप्त होगा, ऐसी अपेक्षा अथवा आशा मत रखिये। निःस्वार्थ भाव से केवल अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करते रहिए। प्रसन्न एवं सुखी रहने का यह महत्त्वपूर्ण मूलमन्त्र है। हमारे अन्दर सबसे बड़ी कमी यह है कि हम चीजों के बारे में बात ज्यादा करते हैं और काम कम। हमारी यही कमी हमको हमारे लक्ष्य से भटकाते हुए आलस्य एवं अकर्मण्यता के जाल में फँसा देती है, जो अन्ततः हमको असफल बना देती है। अतः अपने जीवन को कर्म प्रधान बनायें, वाक् प्रधान नहीं। पूर्ण ईमानदारी से कर्म करते हुए अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर आगे बढ़ते रहिये। तर्क और कुतर्क ही करते रहे तो समझ लीजिए, समय किसी की भी प्रतीक्षा नहीं करता। उसको तो बस अपनी गति से चलना है। वह आपके तर्क के कसौटी पर खरा उतरने तक की प्रतीक्षा नहीं कर सकता। एक बार गुण एवं दोष का विचार करते हुए लक्ष्य निर्धारित कर लिया, फिर उसको हासिल करने हेतु सिर्फ कर्म करिये, तर्क-कुतर्क या बातें नहीं।

53. मुश्किलें वह चीज़ें होती हैं, जो हमें तब दिखती हैं, जब हमारा ध्यान अपने लक्ष्य पर नहीं होता। जब हमें अपने किसी लक्ष्य को प्राप्त करना है, तो हमें अपना पूरा ध्यान सिर्फ उस लक्ष्य पर ही केन्द्रित करते हुए उसे हासिल करने हेतु प्रयासों पर लगाना होगा। उन सभी सम्भावनाओं पर विचार करना होगा जो उस लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध हों। उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमारी मानसिक दृढ़ता, पूर्ण सकारात्मक दृष्टिकोण एवं कड़ी मेहनत ही कारगर होगी। लक्ष्यसिद्धि के अलावा किसी अन्य सम्भावना या विकल्प पर विचार करना भी अपनी दृष्टि और प्रतिबद्धता को लक्ष्य से दूर ले जाकर भटकाना ही होगा। अतः लक्ष्य को प्राप्त करने के सकारात्मक विचार के साथ ही उसके लिए निरन्तर कठिन प्रयास करें, मुश्किलें स्वतः ही समाप्त हो जाएँगी।

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 40
ISSN 2249-2011

English-section

Concept of Prayer

Sh. Chanchalmal Bachhawat

Acharyapravar Hastimalji Maharasahib had delivered a series of lectures on prayers from various perspectives starting from 1.2.1960 to 25.3.2060 during his stay at Lal Bhavan, Jaipur. These lectures have been compiled in the books, titled प्रार्थना प्रचन (Hindi) and Concept of Prayers (English). I have greatly enjoyed reading the book a number of times.The nature of lectures on a subject spread over a number of days is just like hearings of a case spread over a number of days. I have made an attempt to present essence of these lectures in the form an article.Acharyapravar had chosen different subjects and delivered a series of lectures on the subject to explain the same from different perspectives.Acharyapravar had emphasized on daily routine of prayers at various Sthanaks, which continues till today. I seek apologies for any wrong communication, due to my misunderstanding or deficiency in communication or otherwise and shall obliged to be apprised of the same for corrections.

Prayers are considered important across all the religions and considered spiritually very powerful and an easier way of meditation as well.

1. Our Holy religious scriptures, i.e., Agamas, have made us aware that a Soul, in its purest form, is possessor of infinite consciousness (Chetna) and a Soul has independent and permanent existence. Holy Agamas have also made us aware that the cycle of rebirths of a Soul in various forms continues as long as a Soul is not in its purest form, i.e., free of Karmas. Those who have realized this truth always feel acute need for Self-purification.
   1.1 When Lord Mahavira had sent Gautama for certain assignment, knowing it well that he will achieve Nirvana before his return,Lord Gautama had realized that Lords of Veetrag cannot have any sort of attachment (Rag) to even closest of his disciples. Such is the nature of true Arihants and disciples also have to adopt the same nature, i.e. be Veetrag. Veetrag means a state of mind where a person does not have attachment with any person. Attachment, of course, is different from affection, caring nature, compassion for others well being.
   1.2 There are 3 integrated qualities, in which we can carry out purification of our soul, i.e., Samyag Gyan (Knowledge), Samyag Darshan (Faith) and SamyagCharitra (Conduct). All these are inter-related activities, which guide us the path which we can tread upon for self-purification of our Soul.
2. Prayer of Veetrag is also a part of the path as bhakti, Shraddha or Samyagdarshana and it is not at all difficult for any one. It is, therefore, important for us to understand concept of prayers from different perspectives, i.e. concept, type, mode, object, essential qualities of a devout, do's and don'ts of prayers etc.
   2.1 Real prayer or essence of prayer : A real prayer is performed when a deep

surge of devotion oozes in the heart of a worshipper. The tongue automatically gives vent to the prayer through the medium of words. Vitality of prayer is devotion. Real prayer is conducted when activity of mind, deed and word are directed in auspicious manner. Speech of the person must be audible to himself, called self-absorption. *This type of prayer, combined with good Karmans will produce correct results.*

2.2 There is wonderful and supernatural magnetism in the prayer. Nature's hidden secrets are imperceptible to our mind. Holy literature is full of such examples, such as pure hearted prayer of Chandana, Faith of Mantungaswamy (BhaktamarStrota) etc.

2.3 There are 2 types of prayers, based on the main object for prayers-

(I) Spiritual or Supernatural prayers, i.e. Veetrag Prayers : The sole objective in these prayers is purification of soul. The devout keeps steadfast only in the Arihants and he identifies himself with Arihants, i.e., Veetrags. One should only undertake Veetrag prayers.

(II) Materialistic prayers : The main objective in these prayers is to seek resources for worldly pleasures. One should not undertake such prayers.

3. Veetrag prayers can be performed in 3 different ways, or, with combination thereof.

3.1 Eulogistic prayers : In this kind of prayers, virtues of deity are eulogized. The worshipper pours forth his hearty affection and also tries to establish his identity with the deity. Emotions germinate deep in his heart and the worshipper looses his individuality in such prayers. Eulogy of deity may consist of external divine grandeur or internal magnificent achievements.

By the praise of spiritual and internal grandeur, discretion springs forth in the heart of worshipper and he becomes acquainted with potential virtues of self, i.e., realized true nature of Soul. He, therefore, becomes truly motivated to attain the highest virtues. This form of prayer, therefore, has been recognized to be the best.

Logassa path : Logassa Ujjoyagare..., Chandesu Nimmalyara.

3.2 Emotion dominant prayers : In such prayers, the devout is emotionally immersed in the prayers of the deity and emotiond are dominant, alongwith some ingredients of eulogy as- Saccha Bhagat Ban Jaoon Bhagwan..

3.3 Entreating prayers : In such prayers, with deepest faith in Veetrags, the devout implores for being conferred with spiritual grandeur upon himself, alongwith eulogy and emotions. Arugg Bohi Labham..., Siddha Siddhimmama Disantu (Logassa Sutra)

4. Deities : There are 2 types of deities. Firstly, those who are celestial beings Secondly, Arihants, or Veetrags, in whose worship a person feels. A devout should only get immersed in spiritual prayers of Veetrags.

4.1 Veetrags are neither pleased nor displeased, neither give nor take, as per Jain beliefs and preachings in Agamas, whereas God is pleased with the prayers as per Vedic traditions. Veetrags are seen from different

viewpoints in Jainism, keeping in view the principles of Anekantvada. From real standpoint of view, God (Jina) is pleased with us when we follow his Commands, i.e., path laid down for liberation of a Soul. The devout seeks to purify his soul by following his preachings in his conduct, with right aptitude.

4.2 Arihants, through their sermon, contribute in keeping steady the tottering soul and elevating it high. Example of Meghkumar, son of Srenik, who wanted to give up sainthood on the very first evening and Lord Mahavira reminded him of his glorious past and led him to be a good monk. Thus, Arihants are doer in the sense that through their sermon they purify the souls from sins, lead them to right cognition. Hence, the importance of prayers.

4.3 People derive benefits from Siddhas also in their own way such as those who are benefitted from fresh air, sun etc.

4.4 It is true that every person is himself doer of his own good or bad. Yet, there is need for auxiliary causes, in the form of prayers.

5. Time for prayers : Resolutions made in the morning prove conducive for the whole day. Hence, this is the best time for prayers. Effect of resolutions on actions during the day also gets reflected. Besides, morning hours are also considered conducive for mustering up energy. Working of internal mind is significantly affected by the thoughts or resolutions of external mind. For example, if one resolves to get up at 4 a.m. while going to bed, one will automatically wake up at 4 a.m.

   It is also essential to assign correct priorities in use of precious time and utilize the day as per schedule. ***The central message is "Start the day first with prayer of the Almighty and Good Resolution, for a very fruitful rest of the day."***

6. Control on one's posture is very important. Otherwise, one cannot attain stability of mind. We should not pretend the disguise of worshipper but adopt the responsibility of worshipper with earnestness and responsibility. As long as one does not detach himself from inauspicious sentiments and enter into noble ones, prayers will only be like shots fired in the air.

7. Religious places or solitary places are the ideal places for conducting holy prayers.

8. Important religious days and tithis help us in recollecting the great personalities and become the cause for inspiration. Sentiments are life of any action, prayer. Performance, devoid of sentiments, does not produce results.

9. Prayers can be conducted mentally or in articulate manner. Prayers can be conducted individually or collectively.

10. Benefits of Prayers : Benefits are not essentially visible, but secured. In the rays of sun, there is no attachment or malice, yet on account of properties, agonies are lessened and benefits derived. Similarly, through meditation of Almighty Veetrag, tender rays of knowledge are attracted in conscious and it is their natural property that they should produce peace and tranquility. Targets of true prayer has to be to shoot at 4 types of Karmas. Actions should follow accordingly. A person's vigour develops and defects fade away. In fact, spiritual power increases substantially and can give different type of benefits, for example,Saint Anathi, who

recovered from incurable disease with his prayers, full of sentiments and full faith.

11. Pure Soul and Stable Mind –essential prerequisites in prayer : An empirical Soul is also homogenous of amniscient veetraga Soul. Hence, the man should absorb himself in the Almighty to get complete peace, which is the nature of Homogeneity such as water, whenever thrown, finds its way to water and finally mixed with same. This is, however, possible only and only through "Veetragta", purified soul. For example, only clean glass, as against glass covered with dust or materials, absorbs sun and reflects its rays. A million time prayers will not help without purification of thought and inteution. Arjunmali and Ajamail achieved the same, after purification of the thought. Samayik of even 20 years will not help unless our mind/conscience indulges in the Almighty. If one moves by keeping the curtain of deceit, impression that he is wealthy, wielder of authority, very learned man, he cannot meet the Almighty. We have to give up our vanity.

    11.1 Fickleness, impurity and curtain of delusions in the mind, i.e., unstable mind, prevent kindling of splendour of Veetrag sentiments in the conscience. People say mind is very fickle and it is not feasible to discipline it or keep it in a stable state. This is not true. So long as our mind is not emancipated from the intensity of defects of indulgence in sensual pleasures, aversion from abstinence, attachment, pride, deceit, greed, anger etc., mind will remain unsteady. Unstable mind suggests fruition of Karmas whereas stable mind suggests cessation-cum-destruction of Karmas, which indicates conquest over fruition of Karmas. We, therefore, need sustained introspection, meditation and practice to that end. *The proficient do not preach impossible religious performances.*

12. Prayer of 4 Objects : Ideally, there can be 4 objects in a prayer, namely, Veetragdeva, Preceptor, Own Self and Virtues. The prayer entreats, " O Lord, your such knowledge, perception, boundless bliss may also manifest in me. Thus, there are 2 fold objectives in the prayer, firstly, to realise the Almighty through pure prayers and, secondly, to understand and realise the true nature of one's own soul and the true power of one's own mind. The pure nature of the Veetragdeva is one's ideal. One has to identify himself with that nature of him. A devotee should look into mirror of his own conscience to find out as to what he has done uptil now and what remains to be accomplished by him. For example, a cub, left behind accidentally by lion, was reared by a shepherd with other goats. The cub behaved like goats. One day, cub saw Lion roaring in the jungle and instantly compared himself with the Lion. He realized his own true nature, and a lion king roared in him! This is what we have to pray for and aim to realise for our liberation. This is the true concept of prayer.

    12.1 Most of us engage ourselves in prayers at different points of time. I do hope we will introspect the same from different perspectives for achieving pure form of prayer, which is always an inner desire of every person.

-Flat No. 11C, Mani Residency, 30/2A, C.N. Roy Road, Kolkata-700039 (WB)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 44
ISSN 2249-2011

संगोष्ठी-आलेख

सामायिक के अधिकारी※

श्री प्रकाशचन्द जैन (प्राचार्य)

जैनागमों में अनेक प्रकार के धार्मिक अनुष्ठानों की चर्चा हुई है, जिनकी आराधना हर कोई व्यक्ति नहीं कर सकता। उसके लिए कुछ योग्यताएँ या पात्रताएँ निर्धारित हैं उन्हें पूर्ण करने वाला साधक ही उनकी आराधना कर सकता है। जैसे श्रमण दीक्षा के लिए कम से कम 9 वर्ष की आयु, श्रमण प्रतिक्रमण तथा दशवैकालिकसूत्र का ज्ञान तथा 18 पापों का यावज्जीवन त्याग अनिवार्य है। छेदोपस्थापनीय चारित्र (बड़ी दीक्षा) के लिए पाँच महाव्रतों का पालन, रात्रिभोजन विरमण व्रत तथा छह काय की विराधना का त्याग तीन करण तीन योग से अनिवार्य है। परिहारविशुद्धि चारित्र के लिए संयम तथा पूर्वों का ज्ञान आवश्यक है। श्रावक बनने के लिए 9 वर्ष की उम्र तथा व्रतों का पालना अनिवार्य है।

सामायिक भी एक धार्मिक अनुष्ठान है, उसे करने वाले के लिए कुछ पात्रताएँ अनिवार्य हैं, उनके बिना व्यक्ति सामायिक करने का सच्चा अधिकारी नहीं बन पाता। आचार्य हस्ती ने अपने भजन में इसकी चर्चा करते हुए कहा है-

निर्व्यसनी हो प्रामाणिक हो,
धोखा न किसी जन के संग हो।
संसार में पूजा पाना हो तो, सामायिक साधन कर लो।।
जीवन उन्नत करना चाहो तो.....।।

आचार्य हरिभद्रसूरि ने ललित विस्तरा नामक ग्रन्थ में धर्म के अधिकारी की कुछ पात्रताएँ बताई हैं, इन सबके आधार पर यहाँ सामायिक के अधिकारी की कुछ पात्रताएँ निरूपित की जा रही हैं।

निर्व्यसनी जीवन

पौषध, दया, संवर की तरह ही सामायिक भी एक विशेष अनुष्ठान है, जिसकी आराधना करने वाले व्यक्ति का जीवन व्यसनमुक्त होना अनिवार्य है। निर्व्यसनी से यहाँ तात्पर्य सप्त-कुव्यसनों के त्याग से हैं-1. जुआँ-सट्टा लगाना। 2. शिकार खेलना। 3. चोरी करना। 4. परस्त्रीगमन। 5. वेश्यागमन। 6. शराब और 7. मांसाहार। इन कुव्यसनों का सेवन करना एक ओर सामाजिक अपराध है, तो दूसरी ओर जीवन को बर्बाद करने वाला है, अतः प्रत्येक सद्गृहस्थ को इनसे बचना ही चाहिए। आचार्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा. निर्व्यसनी सामायिक पर जोर देते हैं अर्थात् सामायिक करने वाले को पहले कुव्यसनों का त्याग कराते हैं। व्यसनी व्यक्ति के द्वारा की गई धर्माराधना व्यवहार में लोगों के द्वारा अंगुली निर्देश का कारण बनती है, अतः पहले व्यसन का त्याग अनिवार्य है।

प्रामाणिक जीवन

न्याय-नीति और प्रामाणिक जीवन जीने वाला व्यक्ति लोकप्रिय होता है, सब उसे चाहते हैं। उसके ऊपर लोगों का विश्वास रहता है। वह कोई भी निन्दनीय कार्य जिससे हिंसा को बढ़ावा मिलता है, लोगों का शोषण होता है, नहीं करता। उसका व्यापार-व्यवसाय या नौकरी इस प्रकार की रहती है कि लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। ऐसा जीवन जीने वाला व्यक्ति यदि सामायिक आदि धर्माराधना करता है तो वह धर्माराधना भी उसके जीवन के कारण लोगों के लिए प्रेरणास्पद और कल्याणकारी सिद्ध होती है। अप्रामाणिक जीवन समाज

※ परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. की सन्निधि में 25-26 सितम्बर, 2021 को सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के द्वारा मानसरोवर-जयपुर में आयोजित राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

की दृष्टि में निन्दनीय तथा धर्म की दृष्टि से महान् कर्मबन्ध का कारण होता है। अत: धर्माराधना करने वाले व्यक्ति को अपना जीवन न्याय-नीतिपूर्वक उपार्जन में लगाना चाहिए। उससे उसकी धर्माराधना आदरणीय बन जाती है।

धर्म का बहुमान रखना

बहुमान उसका होता है जिसके प्रति अन्तर में प्रीति रहती है। अत: सबसे पहले सामायिक आदि आराधनाओं के प्रति हृदय में प्रेम रहना चाहिए। जिसके प्रति प्रेम होता है उसकी यदि कोई निन्दा करे तो वह सुन नहीं सकता। यदि कोई निन्दा करे तो उसे सम्भव हो तो समझावे, नहीं तो उससे दूर ही हो जाय और उसके प्रति दयाभाव लाकर क्रोधादि न करे। सामायिक के स्वरूप को चिन्तन-मनन पूर्वक चित्त में स्थापित करे, इससे सम्बन्धित जानकारी करने हेतु तीव्र जिज्ञासु भाव रखें, यही बहुमान है। बिना बहुमान के सामायिक आदि क्रियाएँ केवल बाह्य दिखावा मात्र रह जाती है। उसमें जीवन परिवर्तन की ताकत नहीं आती। अत: पहले बहुमान भाव जाग्रत करना चाहिए।

विधि में तत्परता

सामायिक आराधना की विधि के अन्तर्गत सामायिक ग्रहण करना, पारना तथा पालना में साधक को तत्पर रहना चाहिए। विधि के पाठों का शुद्ध-उच्चारण कर, उनके अर्थ-भावार्थ समझ कर, उनमें चित्त को लगाना चाहिए। पाठों को बोलते समय उचित आसन एवं मुद्रा का प्रयोग करना चाहिए तथा उन पाठों का महत्त्व समझना चाहिए। योग्य काल में आराधना करते हुए उच्चारण अधिक ऊँचे स्वर में नहीं करना चाहिए। पारते समय मन में खेद का अनुभव होना चाहिए कि मुझे धर्माराधना को छोड़कर पापप्रवृत्तियों में जाना पड़ रहा है, तो पुन: सामायिक ग्रहण करने का भाव बना रहेगा। सामायिक ग्रहण करने से पूर्व जिन गुरु भगवन्तों ने सामायिक का महत्त्व बताकर इस आराधना में लगाया है, उनके प्रति भक्ति प्रकट करनी चाहिए,उनके उपकारों का स्मरण करना चाहिए, अन्तर हृदय से उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए।

पापों की आलोचना

सामायिक में 18 पापों का त्याग किया जाता है। परन्तु जब तक किये गये कार्यों में पापों का विचार नहीं किया जाता, उन्हें गहराई से नहीं देखा जाता, उनकी आलोचना निन्दना, गर्हणा नहीं की जाती, उनका प्रतिक्रमण नहीं होता, प्रायश्चित्त लेकर शुद्धीकरण नहीं किया जाता तो सामायिक केवल एक यान्त्रिक प्रक्रिया रह जाती है। वह जीवन में परिवर्तन घटित नहीं कर पाती, अत: एक-एक पाप का गहराई से निरीक्षण करके उसका प्रतिक्रमण करके आगे से उस पाप प्रवृत्ति को नहीं करने का संकल्प ग्रहण करना चाहिए, तब ही सामायिक-साधना जीवन को ऊँचा उठाने वाली सिद्ध होगी।

व्रत धारण करना

श्रावक के 12 व्रतों में 'सामायिक' नववाँ व्रत है, इस व्रत के लिए पूर्व के आठ व्रतों का स्वरूप समझकर उन्हें धारण करना चाहिए। स्थूल प्राणातिपात का त्याग, स्थूल मृषावाद का त्याग, स्थूल अदत्तादान का त्याग, स्वस्त्री सन्तोष पर स्त्री-त्याग, परिग्रह का परिमाण ये पाँच अणुव्रत तथा दिशा परिमाण, उपभोग-परिभोग परिमाण तथा अनर्थदण्ड का त्याग ये तीन गुणव्रत स्वीकार करने पर की गई सामायिक की साधना सच्ची सामायिक का अधिकारी बना देती है। अत: व्रत अवश्य धारण करने चाहिए।

स्वाध्याय करना

सामायिक का स्वरूप, उसकी विधि, पापों का मर्म, 32 दोष आदि की परिपूर्ण जानकारी किये बिना शुद्ध सामायिक की आराधना सम्भव नहीं हो सकती, इसके लिए आवश्यकता है स्वाध्याय की। आगमों में स्थान-स्थान पर सामायिक की चर्चा आई हुई है। विशेषावश्यक भाष्य नामक श्वेताम्बर परम्परा का सैद्धान्तिक ग्रन्थ तो पूरा ही सामायिक को व्याख्यायित

कर रहा है। इस प्रकार के ग्रन्थों का स्वाध्याय करने से सामायिक के प्रति बहुमान प्रकट होगा और हमारी योग्यता विकसित होती जायेगी। स्व के चिन्तन-मनन रूप स्वाध्याय से भी सामायिक का वास्तविक स्वरूप प्रकट होने लगता है, अत: स्वाध्याय अनिवार्य है।

महापुरुषों का अनुकरण करना

अनेक महापुरुषों के जीवन चरित्र आगमों में भरे पड़े हैं, जिन्होंने सामायिक की उत्कृष्ट साधना के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। उपासकदशाङ्गसूत्र में भगवान के द्वारा गाये गये दस ही श्रावकों का जीवन आदर्श हमारे सामने हैं। आज भी कई ऐसे श्रावक-श्राविकाएँ हैं, जो सभी प्रकार की परिस्थितियों में भी समताभाव में रहते हैं, उनके जीवन का, उनकी चर्या का सूक्ष्मता से निरीक्षण करके तदनुसार अनुकरण करने से भी हम शुद्ध सामायिक के अधिकारी बन सकते हैं।

चतु:शरण स्वीकार करना

अरिहन्त, सिद्ध, साधु तथा केवली प्ररूपित धर्म, इन चारों की शरण, हमारे ज्ञान, दर्शन, सुख और शक्ति को उजागर करने में निमित्त बनती है, अत: इनकी शरण लेकर हमें अपने आन्तरिक स्वभाव को प्रकट करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील होना चाहिए। इससे हमारे भीतर पात्रता का विकास होता है। ऐसा वर्णन ललित विस्तरा और चउसरणपइन्ना नामक ग्रन्थों में हुआ है।

इस प्रकार जीवन में प्रत्येक परिस्थिति में समताभाव का अवतरण कराने वाली शुद्ध सामायिक की आराधना करने की पात्रता विकसित करने के लिए उपर्युक्त उपायों का सहारा लिया जा सकता है।

भगवतीसूत्र में कहा है-**आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे।** आत्मा ही सामायिक है और आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है अर्थात् आत्म-स्वभाव = समताभाव ही सामायिक है। आचाराङ्गसूत्र में कहा है-**समियाए सामाइयमाहियं**-समता में ही सामायिक कही गई है। हम उसी सामायिक के अधिकारी बनें, इसी शुभभावना से।

-259, गायत्री नगर बी, प्रथम मंजिल, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर-302018 (राज.)

❖

जिनवाणी पर अभिमत

श्री हस्तीमल झेलावत

जिनवाणी का जनवरी अंक नववर्ष में जीवन को श्रेष्ठ ऊर्जावान् बनाने के सन्देशों से परिपूर्ण रहा। इसमें डॉ. चंचलमलजी चोरड़िया का लेख 'क्या रात्रि-भोजन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है?' शीर्षक से प्रकाशित आलेख वर्तमान भौतिक परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य के लिए दिग्दर्शन कराते हुए व्यक्ति को स्वास्थ्य के प्रति सजग और सतर्क होने की आवश्यकता को दर्शाता है। श्री गौतमजी पारख ने 'जिन अनुभव से पढ़ा इन्सानियत का पाठ' के अन्तर्गत चिकित्सा-सेवा के क्षेत्र में सेवाभावी चिकित्सकों के प्रति सम्मान का भाव व्यक्त करते हुए इन्सानियत और मानवता को जीवन में आत्मसात् करने की प्रेरणा दी है। इसी प्रकार धर्मस्थानों में गौतमप्रसादी नि:शुल्क रखने से चातुर्मास करवाने वाले संघों पर आर्थिक भार पड़ने से कई संघ चातुर्मास नहीं करवा पाते हैं। श्री सुगालचन्दजी जैन ने 'जैनत्व को जनजन तक पहुँचाएँ' इस आलेख में व्याख्यान में उपस्थित होने वाले व्यक्तियों के लिए भोजन-व्यवस्था सशुल्क रखने का रचनात्मक सुझाव दिया है। 'ऐसा नया साल हो' श्री त्रिलोकचन्दजी जैन की रचना में नववर्ष में जनवरी से लेकर दिसम्बर तक जीवन-निर्माण के सूत्रों का वर्णन करते हुए 'ऐसे श्रेष्ठ आचरण से सम्पन्न, मेरा नया साल हो, मैं हूँ सबका, सब है मेरे, भावना बेमिसाल हो।' की सुखद प्रेरणा प्रदान की है।

-21, सुभाष चौक, इन्दौर-2 (मध्यप्रदेश)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 47
ISSN 2249-2011

संगोष्ठी-आलेख

सामायिक की चार भावनाएँ※

प्रो. वीरसागर जैन

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव!।।

यह आचार्य अमितगति द्वारा रचित 'भावनाद्वात्रिंशतिका' का प्रथम श्लोक है जिसे 'भावना-बत्तीसी' या 'सामायिक पाठ' के नाम से भी जाना जाता है। इसके अनेक हिन्दी-अनुवाद भी लोकप्रिय हैं। प्रथम श्लोक का हिन्दी-अनुवाद इस प्रकार है-

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणी जनों में हर्ष प्रभो!
करुणास्रोत बहे दु:खियों पर, दुर्जन में माध्यस्थ विभो!

अथवा-

हे देव! मेरी आत्मा धारण करे इस नेम को।
मैत्री करे सब प्राणियों से गुणिजनों से प्रेम को।।
उन पर दया करती रहे जो दु:खग्राह गृहीत हैं।
उनसे उदासी-सी रहे जो धर्म से विपरीत हैं।।

'भावना-बत्तीसी' के उक्त श्लोक में एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण विषय समझाया गया है, जो एक तरह से पूरे नीतिशास्त्र का सार भी है। लगभग सारा नीतिशास्त्र इसी का विस्तार है। इसमें हमारे नित्यप्रति काम में आने वाला एक ऐसा व्यावहारिक मार्गदर्शन भी है जिसे अपनाकर हम अपना एवं अपने समाज का जीवन अच्छा बना सकते हैं।

दुनिया में अनेक प्रकार के लोग हैं। हम उन सभी के प्रति एक-सा व्यवहार नहीं कर सकते। तो फिर किसके प्रति कैसा व्यवहार करें, यहाँ इसी की उत्तम भावना भाई जा रही है। यथा-

1. सामान्यत: सभी जीवों के प्रति-मैत्री भावना होनी चाहिए।
2. गुणी जनों के प्रति-प्रमोद भावना होनी चाहिए।
3. दु:खी जनों के प्रति-करुणा भावना होनी चाहिए।
4. दुर्जनों के प्रति-माध्यस्थ भावना होनी चाहिए।

इन चार प्रकार की भावनाओं का वर्णन 'भावना-बत्तीसी' के अतिरिक्त अन्य भी अनेकानेक ग्रन्थों में मिलता है। आचार्य उमास्वामी मुनिराज ने 'तत्त्वार्थसूत्र' (7/11) में भी कहा है-

मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि
सत्त्वगुणाधिकक्लिष्यमानाविनेयेषु।

अत: इन पर हमें बड़ी गम्भीरतापूर्वक चिन्तन करना चाहिए और फिर इसी के अनुरूप व्यवहार भी करना चाहिए। इससे सबका मंगल होता है।

1. मैत्री भावना-अर्थात् हे देव! मैं तीन लोक के सभी जीवों को अपना मित्र समझूँ, चार गति चौरासी लाख योनियों के समस्त जीवों को भी अपना मित्र समझूँ, पशु-पक्षी और पेड़-पौधे तक को भी अपना मित्र समझूँ। इसी प्रकार अरिहंत, सिद्ध आदि को भी अपना मित्र समझूँ।

मित्र समझने का अर्थ है कि सबको समान समझूँ, उनमें छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं करूँ, क्योंकि मित्रता समानता के भाव में ही होती है, छोटे-बड़े के भाव में नहीं-**'समानशीलेषु सख्यम्।'**

सभी जीव वस्तुत: स्वभाव से एक समान ही हैं, कोई छोटा-बड़ा नहीं है। हम अज्ञानवश व्यर्थ ही लिङ्ग,

※ परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. की सन्निधि में 25-26 सितम्बर, 2021 को सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के द्वारा मानसरोवर-जयपुर में आयोजित राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

जाति, वर्ण, क्षेत्र आदि बाह्य कारणों के आधार पर उन्हें छोटा या बड़ा मानकर बड़ी भारी गलती करते हैं; क्योंकि जब हम किसी को छोटा मानते हैं तो हमारे अन्दर अभिमान आदि उत्पन्न होते हैं और हम उन्हें शोषित करते हैं, जिससे हमारा मानसिक-सामाजिक-आध्यात्मिक सभी प्रकार का पतन होता है। तथा जब हम किसी को बड़ा मानते हैं तो हमारे अन्दर दीनता, लोभ आदि के भाव उत्पन्न होते हैं और उनसे भय, याचना आदि अनेक दुर्गुण उत्पन्न होते हैं। अत: सभी जीवों को समान मानना आवश्यक है। समान मानने से वीतरागता उत्पन्न होती है।

देखो आश्चर्य की बात है कि आचार्यदेव तो हमें सब जीवों को समान/मित्र मानने की शिक्षा दे रहे हैं और हम हैं कि भाई-भाई में, मनुष्य-मनुष्य में, जैन-जैन तक में ही छोटे-बड़े की भावना कर रहे हैं, अपने ही भाई के प्रति शत्रु जैसा व्यवहार कर रहे हैं। यह बड़े खेद की बात है।

अत: हमें चाहिए कि हम किसी को भी छोटा या बड़ा न समझें, सब जीवों को समान ही समझें, कभी भी किसी की उन्नति में ईर्ष्या न रखें, किसी के भी दु:ख की कामना न करें और सभी के परम कल्याण की कामना करें। यथा-

1. **सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खभाग् भवेत्।।**
2. **भावना दिन-रात मेरी सब सुखी संसार हो।**
3. **सुखी रहें सब जीव जगत् के कोई कभी न घबरावे।**

पुनश्च, यहाँ जिस प्रकार छोटे-बड़े की भेद-भावना करने का निषेध किया गया है, उसी प्रकार अपने-पराये की भेद-भावना का निषेध भी घटित कर लेना चाहिए। क्योंकि तीन लोक में कोई भी जीव वास्तव में अपना या पराया नहीं है। सब अपने हैं, सब पराये हैं। विश्व प्रेम और वीतरागता में कोई अन्तर नहीं है। कहा भी है-

त्यक्तव्य: सर्वत्र एव हि ममकार:।
नो चेद् कर्तव्य: सर्वत्र एव हि ममकार:।।

सबको मित्र मान लेने पर क्रोध, मानादि भाव खत्म हो जाते हैं। मित्र से कैसा क्रोध, कैसा मान, कैसी ईर्ष्या आदि। मित्र मान लेने पर ऐसा नहीं हो सकता कि पड़ोसी की उन्नति हो और हमारा खून जले इत्यादि। इस प्रकार यह मैत्री भावना हमें घोर पापों से बचाती है और वीतरागता के मार्ग में लगाती है।

2. प्रमोद भावना-जो जीव गुणवान् हैं-समीचीन श्रुत, ज्ञान, चारित्र, तप, शील, विनय, करुणा, सत्य, संयम आदि गुणों से सम्पन्न हैं उनके प्रति हमारे हृदय में प्रमोद भावना होनी चाहिए। प्रमोद भावना होने से स्वयं के गुणी होने का मार्ग प्रशस्त होता है।

प्राय: देखा जाता है कि लोग किसी के गुणों की सराहना नहीं कर पाते, क्योंकि इसके लिए बड़ा हृदय होना आवश्यक है जो उनके पास नहीं होता। सर्वप्रथम तो इसके लिए उन्हें अपने में विद्यमान दोषों पर दृष्टि डालकर उन्हें दोष के रूप में स्वीकारना अवश्य ही पड़ता है। यही लोग नहीं कर पाते। अपने दोषों को स्वीकारना भी तो शूरवीरता का काम है। दोष छिपाना सभी जानते हैं, परन्तु दोषों को स्वीकार करना और फिर उन्हें मिटाना कोई महावीर ही जानता है।

कितने ही लोग तो अपने दोषों को गुण के रूप में प्रस्तुत करते हैं। परन्तु ऐसे लोगों की दिल्ली अभी बहुत दूर समझना चाहिए। वे तो दोषों में ही स्थित रहने के कारण 'दुष्ट' कहे गये हैं। सज्जनों को उनकी सङ्गति शीघ्र ही छोड़ देनी चाहिए।

इसी प्रकार कितने ही लोग दूसरों के गुण को 'गुण' के रूप में देखना तो दूर, अपितु दोष के रूप में ही देखते-कहते हैं। सोचिए वे कब सुधरेंगे? यथा-कितने ही लोग दूसरे के गुणों से ईर्ष्या भाव रखते हैं अथवा उनकी हँसी उड़ाते हैं, उपेक्षा करते हैं, निंदा करते हैं। विचारणीय है कि ऐसी स्थिति में वे स्वयं उन गुणों को कब कैसे धारण करेंगे? पुराण उठाकर देखें तो पता

चलता है कि गुणीजनों की निन्दा करके आज तक इस जीव ने घोर पाप किया है और अपने आपको चिरकाल के लिए गुण प्राप्ति के मार्ग से कोसों दूर कर लिया है।

कितने ही लोग तो सभा में, शास्त्र सभा में गुणीजनों (साधु तक) की निन्दा करते हैं। वह घोर पाप का कारण है। कितने ही लोग तो गुणी जनों को नाना प्रकार से तिरस्कृत और पीड़ित करते हैं, उन पर मिथ्या दोषारोपण करते हैं, उनको शारीरिक-मानसिक कष्ट देते हैं, यहाँ तक कि उनकी मृत्यु तक का उपाय रचते हैं। यह भी महापाप का कार्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वयं गुणी बनने के लिए दूसरे गुणीजनों के प्रति प्रमोद भाव आना आवश्यक है। जब तक अपने दोषों के प्रति खेद और दूसरे के गुणों के प्रति प्रमोद की भावना हृदय में जागृत नहीं होती तब तक व्यक्ति दोषों का त्याग और गुणों का ग्रहण नहीं कर सकेगा।

3. करुणा भावना-जो जीव दु:खी हैं; शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, आर्थिक आदि किसी भी प्रकार के दु:खों से परेशान हैं, उनके प्रति हमारे हृदय में करुणा की भावना होनी चाहिए। देखा जाता है कि कितने ही लोग दु:खी जनों की हँसी उड़ाते हैं अथवा उन्हें और अधिक दु:खी करते हैं। परन्तु ऐसा करना अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारना है, घोर पापबन्ध का कारण रचना है। कभी भूलकर भी हमें ऐसा नहीं करना चाहिए। विकलाङ्ग आदि दु:खी जीवों की हँसी उड़ाने से हमें स्वयं भी आगामी जन्म में वैसा ही दु:ख उठाना पड़ता है। अत: जैनधर्म समस्त दु:खी, दलितों शोषितों के प्रति करुणा रखना सिखाता है।

इसी प्रकार कुछ लोग दु:खी जनों को देखकर ऐसा विचार करते होंगे कि मैं क्या करूँ, मैंने कोई ठेका ले रखा है, इसमें मेरी क्या ग़लती है, सब अपने कर्मों से दु:खी हैं, भोगें अपने कर्मों की सजा; परन्तु ऐसा सोचना ठीक नहीं है, इससे परिणाम कठोर एवं लोक निन्द्य बनते हैं।

कुछ लोग तो ऐसे होते हैं जो स्वयं तो दु:खियों की सहायता करते ही नहीं, यदि कोई दूसरा करे तो उसे भी रोकते हैं, रोकना चाहते हैं। यह अन्तराय कर्म के आस्रव-बन्ध का कारण है।

4. माध्यस्थ भावना-संसार में कुछ लोग अत्यन्त दुष्ट स्वभाव के होते हैं। हमें उनके प्रति रागपूर्ण या द्वेषपूर्ण कैसा भी व्यवहार-सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए, उनसे कटु या मधुर कैसा भी सम्भाषण नहीं करना चाहिए, क्योंकि दोनों ही स्थितियाँ घातक हैं। कटु सम्भाषण किया तो वे हमारा सिर फोड़ देंगे और यदि मधुर सम्भाषण किया तो हमारे सिर पर पैर रखने लगेंगे, अत: दुर्जनों से दूर रहना ही श्रेयस्कर है। उनके प्रति न अच्छा व्यवहार करो, न ही बुरा।

देखा गया है कि कुछ लोग तो दुर्जनों (दुष्टों/कुपात्रों) को सुधारने के चक्कर में अपना जीवन बरबाद कर लेते हैं और कुछ उनका बुरा करने, उनको नष्ट/समाप्त करने के चक्कर में अपना घोर अहित कर लेते हैं, जबकि ये दोनों ही कार्य अनुचित एवं असम्भव हैं। न तो दुर्जनों को सुधारा ही जा सकता है और न ही उन्हें दुनिया से नष्ट/समाप्त किया जा सकता है। अत: यहाँ उनके प्रति माध्यस्थ भाव रखने की भावना भायी जा रही है। जो लोग दुर्जनों को सुधारने के लिए उन्हें हित-शिक्षा देने लग जाते हैं, वे नहीं जानते कि यह उन्हें बहुत महँगा सिद्ध होता है, क्योंकि उस उपदेश से वे सुधरते नहीं, उल्टा उन्हें क्रोध ही उत्पन्न होता है। यथा-

उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये।
पय:पानं भुजंगानां केवलं विषवर्धनम्।।

अत: सदा यही ध्यान रखना चाहिए कि-

सीख दीजिए ताहि को, जाको सीख सुहाय।
सीख न दीजे वानरा, घर बयाँ को जाय।।

दुर्जन को शिक्षा देने की गलती करके अनेक सज्जन लोग भी बहुत कष्ट उठा चुके हैं, अत: यहाँ दुर्जनों से दूर रहने की अर्थात् उनके प्रति माध्यस्थ भावना रखने की कामना की गई है।

यहाँ इतना विशेष है कि ज्ञानीजन दुर्जन के प्रति माध्यस्थभाव रखते हुए भी, उसे कोई हित-शिक्षा न देते हुए भी, उसके प्रति कोई द्वेषभाव नहीं रखते, वह उनका बुरा करे तब भी, अपितु उसका भी शीघ्र कल्याण हो- ऐसी अन्तरंग में शुभ भावना रखते हैं।

ध्यान देने की बात है कि यहाँ दुर्जन को भी 'दुर्जन' संज्ञा हमने दी है, आचार्यदेव ने तो मूल श्लोक में मात्र 'विपरीतवृत्ति' जैसा उचित शब्द ही प्रयोग किया है-**'माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ'**।

प्रश्न-उक्त चार प्रकार के जीवों के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए- यह तो समझ में आया, परन्तु यह नहीं बताया कि जो हमारे शत्रु हैं उनके प्रति हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए।

उत्तर-संसार में कोई भी जीव वास्तव में शत्रु नहीं होता। ज्ञानीजन उसे जब द्रव्यदृष्टि से देखते हैं तो उसके प्रति भी प्रेम/मैत्री का भाव उत्पन्न होता है और जब पर्यायदृष्टि से देखते हैं तो 'विपरीतवृत्ति' होने के कारण मध्यस्थता का भाव उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त उसके गुणों या दु:खों को देखकर उनके मन में प्रमोद या करुणा का भाव भी उत्पन्न होता है। ज्ञानी जन किसी को भी अपना शाश्वत शत्रु नहीं मानते।

प्रश्न-परिवार के लोगों के प्रति कैसी भावना होनी चाहिए?

उत्तर-वे भी उक्त चार प्रकारों में ही समाहित हो जाते हैं, उनसे अलग नहीं होते; अत: जो जैसा हो उसके प्रति वैसा ही व्यवहार रखना चाहिए। हाँ, इतना तो होता है कि वे जैसे भी हैं, अपने परिवार के हैं-इस कारण उन्हें सन्मार्ग पर लगाने का भाव ज्ञानियों को भी आता है, वे युक्ति एवं स्नेह के आलम्बन से ऐसा करने का प्रयास भी बहुत अधिक करते हैं; परन्तु बात न बने तो अधिक खेदखिन्न नहीं होते और उक्त चार प्रकार की भावना भाते हुए शान्ति धारण करते हैं।

❖

रूह काँप उठी

श्री आर. नरेन्द्र कांकरिया

आज मेरे मन में इच्छा हुई और विचार आए कि मैं एक व्यक्ति विशेष को बदनाम करने हेतु कुछ लिखूँ, ऐसा लिखूँ कि उस व्यक्ति को सबकी नज़रों में गिरा दूँ। द्वेष भाव चरम सीमा पर पहुँच चुका और मैंने अपने भावों को मूर्त रूप देने हेतु कलम भी उठा ली, कलम का ढक्कन भी खोल दिया।

अपने भावों को शब्दों का रूप देने हेतु कागज पर कलम को रख भी दिया, यकायक देव-गुरु-धर्म एवं पूज्य पिताश्री की कृपा हुई, दिमाग में चिन्तन चला प्रश्न उठा कि तू क्या कर रहा है? दूसरे के बारे में लिख रहा है और कोई तेरे बारे में भी कुछ लिख देगा तो? मेरे अन्दर रहे हुए द्वेष ने मुझे उत्तर दिया कि मेरे बारे में कोई क्या लिखेगा, मैंने तो आज तक कोई गलती की ही नहीं है।

फिर द्वेष भाव से कुछ लिखने का प्रयास किया, पर कलम चली ही नही, हाथ काँपने लग गए। अपने अतीत को याद करने लगा, भूतकाल की एक-एक घटनाएँ स्मृतिपटल पर छाने लगी। एक-एक घटनाओं का चिन्तन करते करते रुह काँप उठी। किस-किस गति और जाति के जीवों को नहीं सताया, एकेन्द्रिय से सन्नी पञ्चेन्द्रिय तक के किस-किस जीव के साथ कैसा-कैसा दुर्व्यवहार मैंने किया, अतीत की एक-एक बात स्मृति में आने लगी। क्या-क्या पाप नहीं हुए मुझसे? और चिन्तन चला कि क्या करने चला था दूसरे के बारे में लिखकर उन्हें बदनाम करने की सोच रहा था।

उपकार है देव-गुरु-धर्म और पूज्य माताजी-पिताजी का कि समय रहते मुझे चेता दिया। आज मुझसे एक महा पाप होते-होते रह गया, मैं आत्मा को सम्भाल पाया। जय हो देव-गुरु-धर्म और माता-पिता की। उनका स्मरण भी पाप को रोकता है।

-79, आदियप्पा स्ट्रीट, साहूकारपेट, चेन्नई

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 51
ISSN 2249-2011

स्वास्थ्य-विज्ञान

आयुर्वेद और जैनधर्म

डॉ. पी. सी. जैन

आयुर्वेद भारतवर्ष में चिकित्सा-शास्त्र से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण विषय है। इसका प्रारम्भ जैन परम्परा के अनुसार भगवान ऋषभदेव के समय से हुआ है, क्योंकि भगवान ऋषभदेव ने इस देश के लोगों के लिए जिन जीवन-यापन के साधनों की ओर संकेत किया था, उनमें रोगों से जीवन की रक्षा करना भी सम्मिलित था। अत: आयुर्वेद का प्रारम्भ उन्हीं के समय से प्रारम्भ हुआ था, ऐसा मानना होगा।

उस समय का कोई लिखित साहित्य तो उपलब्ध नहीं है, किन्तु तीर्थंकर ऋषभदेव से महावीर तक इस प्रकार का ज्ञान श्रुतज्ञान (मौखिक) उपदेशों के द्वारा हमको प्राप्त हुआ है।

मोक्षमार्ग के लिए स्वास्थ्य ठीक रखना आवश्यक है। अत: रोगों से बचने का उपाय आयुर्वेद कहलाया। इस विषय पर उस समय तक स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं लिखे गये, किन्तु जब ज्ञान को लिपिबद्ध करने की परम्परा चली तो आयुर्वेद पर स्वतन्त्र तथा अन्य ग्रन्थों में प्रसङ्गवश आयुर्वेद का वर्णन किया गया, जो आज हमें प्राप्त है।

स्वास्थ्य की आवश्यकता

प्राणियों का स्वास्थ्य अच्छा रहने पर ही धर्मसाधना आदि हो सकती है। किसी ने ठीक ही कहा है-**'धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम्'** अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष चारों पुरुषार्थों का समीचीन रूप से पालन स्वस्थ एवं नीरोग व्यक्ति ही कर सकता है। जगत् में नीरोग रहने से बड़ा कोई सुख नहीं है, इसीलिए तो कहा है कि-**'पहला सुख नीरोगी काया'** स्वस्थ रहकर ही मानव लौकिक और पारलौकिक सुख प्राप्त कर सकता है। अस्वस्थता दु:खों और आपत्तियों की खान है, अर्थात् रोगी व्यक्ति सदैव चिन्तित रहता है, वह स्वयं तो दु:खी होता ही है, परन्तु उसके कारण पारिवारिक तथा प्रियजन भी परेशान से रहते हैं। ज्ञानिजनों ने संसार के जीवों को सम्बोधित करते हुए कहा है कि अपने शरीर को यत्नाचार पूर्वक स्वस्थ रखो, क्योंकि मानव शरीर धर्मध्यान का साधन है, **'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्'**

कई लोग अपने स्वास्थ्य पर ध्यान न देते हुए मात्र धनोपार्जन और उसकी रक्षा में ही लगे रहते हैं, ऐसा करना अच्छा नहीं है। नीतिकारों ने कहा है कि-धन से खाने का सामान मिल सकता है, भूख नहीं, धन से सुन्दर वस्त्रादि मिल सकते हैं, सौन्दर्य नहीं। धन से चश्मा मिल सकता है, दृष्टि नहीं, धन से सुन्दर औषधि मिल सकती है, स्वास्थ्य नहीं, धन से कोमल शय्या मिल सकती है, नींद नहीं, धन से सुखप्रद सामग्रियाँ मिल सकती हैं, अत: धन कमाने के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना चाहिये और भी कहा है कि-

न धर्मस्य कर्त्ता, न चार्थस्य हर्त्ता,
न कामस्य भोक्ता न मोक्षस्य पाता।
नरो बुद्धिमान् धीरसत्त्वोऽपि रोगी,
यतस्तद्विनाशाद्भवेन्नैव मर्त्य:।।

अर्थात् मानव बुद्धिमान् दृढ़मनस्क होने पर भी यदि रोगी हो तो वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थों की सिद्धि नहीं कर सकता है, अत: अपने आरोग्य की रक्षा करते हुए मानवों को सत् पुरुषार्थों का पालन करना चाहिये।

चिकित्सा का महत्त्व और फल

चिकित्सितं पापविनाशनार्थं,
चिकित्सितं धर्मं विवृद्धयेच्च।

चिकित्सितं चोभयलोकसाधनं,
चिकित्सितान्नास्ति परं तपश्च।।

-कल्याण कारक, पृष्ठ 113

रोगियों की चिकित्सा करना पाप नाश का कारण होता है, चिकित्सा से धर्म की वृद्धि होती है। चिकित्सा इहलोक और परलोक में सुख देने वाली होती है, किं बहुना! चिकित्सा से उत्कृष्ट कोई तप नहीं है, ऐसा कल्याणकारक ग्रन्थ में कहा है। हाँ आदर सत्कार की इच्छा से या अपने यश, ख्याति और पूजा की चाह से तथा लोभ आदि से की गई चिकित्सा को आचार्यों ने तप का कारण नहीं बताया है, केवल जीवों के प्रति दया भाव से एवं परलोक साधन हेतु या कर्मक्षय होने के लिए की गई चिकित्सा तप का कारण होती है। विद्वानों ने चिकित्सा का उद्देश्य बताते हुये कहा है कि-'**कारुण्य-बुद्धया परलोकहेतो:, कर्मक्षयार्थं विदधीत विद्वान्।**' इसके अतिरिक्त आचार्यश्री पूज्यपाद स्वामी ने कहा है कि साधुजनों को भी दयाभाव करके चिकित्सा करनी चाहिये।

जैन आयुर्वेद ग्रन्थ 'कल्याणकारक' के पृष्ठ 556 पर लिखा है कि-मुनियों को भी आयुर्वेद शास्त्रों की जानकारी रखना अति उत्तम है-

आरोग्यशास्त्रमधिगम्य मुनिर्विपश्चित्,
स्वास्थ्यं स साधयति सिद्धसुखैकहेतुम्।
अन्यस्स्वदोषकृत - रोगनिपीडिताङ्गो,
बध्नाति कर्म निजदुष्परिणामभेदात्।।

जो विद्वान् मुनि आरोग्य शास्त्र को भली प्रकार जानकर उसी प्रकार अपना आहार-विहार रखते हुए अपने स्वास्थ्य की रक्षा कर लेता है, वह मोक्ष-सुख के मार्ग को भी प्राप्त कर लेता है। परन्तु जो साधु स्वास्थ्य-रक्षा के विधान को न जानकर अपने आरोग्य की रक्षा नहीं कर सकते हैं, वे अनेक दोषों से पीड़ित होकर नाना प्रकार के दुष्परिणामों से कर्मबन्ध कर सकते हैं। तात्पर्य यह है कि जो साधुराज अपने स्वास्थ्य की रक्षा नहीं कर सकते तो भला वे संघस्थ साधुओं की स्वास्थ्य रक्षा कैसे करेंगे? अथवा वे करुणा करके अस्वस्थ प्राणियों को आरोग्य लाभ कैसे करायेंगे? यहाँ यह बात विचारणीय है कि कई व्यक्ति जानकारी के अभाव में कह देते हैं कि साधुजनों को चिकित्सा सम्बन्धी बातें नहीं बताना चाहिये, यह तो आयुर्वेद शास्त्रों का तथा वैद्यों का काम है। किन्तु वे भाई भली प्रकार स्वाध्याय करते तो ऐसा नहीं कहते।

आयुर्वेद-विद्या

जिस प्रकार जैनाचार्यों ने न्याय, काव्य, अलंकार, कोष, छन्द और दर्शन-शास्त्रों की रचना की है, उसी प्रकार उन्होंने ज्योतिष तथा वैद्यक ग्रन्थों की भी रचना की है। उन महर्षियों ने अपने जप-तप और ध्यान से बचे हुए अमूल्य समय को जीवों के कल्याणार्थ लगाया था। इसी हेतु से उन्होंने अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया था, आज समाज पर उनका अनन्त उपकार है। अनेक औषधरत्नों के शास्त्रों का भण्डार संगृहीत किया था, परन्तु खेद है कि आज उन ग्रन्थों का दर्शन भी नहीं होता। जो कुछ भी उपलब्ध है, उसके उद्धार की चिन्ता हमारे उदार धनिकों एवं विद्वानों को नहीं है, ग्रन्थ धीरे-धीरे कीटभक्ष्य बनते जा रहे हैं। वस्तुत: आचार्यों ने वैद्यक शास्त्रों की रचना इसलिये की थी कि जगत् में स्वस्थ पुरुषों का स्वास्थ्य रक्षण हो तथा रोगियों का रोग मोक्षण हो।

सर्वज्ञ भगवान की वाणी में आचाराङ्ग आदि बारह भेदों में अङ्ग साहित्य को विभक्त करके निरूपण किया गया हैं, इनमें बारहवें अङ्ग के चौदह उत्तर भेद हैं, जिनमें '**प्राणवायपूर्व**' भी एक भेद है, इसके विषय में लिखा है कि-'**कायचिकित्साष्टाङ्ग-आयुर्वेद-भूतकर्मजांगुलि प्रक्रम: प्राणापान विभागोऽपि यत्र विस्तरेण वर्णितस्तत्प्राणवायम्**' अर्थात् जिस शास्त्र में काय, तद्गतदोष और चिकित्सा आदि अष्टाङ्ग आयुर्वेद का विस्तार से वर्णन किया गया हो उसे 'प्राणावायपूर्व शास्त्र' कहते हैं।

आयुर्वेद के अष्टाङ्ग निम्न प्रकार हैं-1.काय

चिकित्सा, 2. बाल चिकित्सा, 3.ग्रह चिकित्सा, 4. उर्ध्वांग चिकित्सा, 5. शल्य चिकित्सा, 6. दंष्ट्रा चिकित्सा, 7. जरा चिकित्सा, 8. वृष चिकित्सा। आज भी श्री उग्रादित्याचार्य कृत 'कल्याणकारक' ग्रन्थराज उपलब्ध है, जिसमें उन्होंने पूज्यपाद समन्तभद्र, पात्रस्वामी, सिद्धसेन, मेघनाथ आदि आचार्यों के वैद्यक ग्रन्थों का उल्लेख किया है। ये आचार्यप्रवर छठी शताब्दी के पहले हो गये हैं। अत: कल्याणकारक ग्रन्थ को पढ़ने वाले पाठक स्वयं अध्ययन करके उसकी महत्ता को समझ सकते हैं। संक्षिप्त में तथ्य यह है कि लौकिक और पारमार्थिक विषयों को जानने वाले विशेषज्ञ पूर्वाचार्यों ने लोक में हिताहित-प्राप्ति-परिहार रूपी कर्त्तव्य सिद्धि का भली प्रकार प्रतिपादन किया है।

श्री विद्यानुवाद ग्रन्थराज में लिखा है कि रोगी को दवा देते समय निम्न प्रकार मन्त्र को 9 बार पढ़कर देने से तथा प्रेम और परोपकार बुद्धि से दिए जाने पर दवा अमृत रूप हो जाती है। दया भाव से किया हुआ काम निश्चय ही सुखकर होता है-'ॐ' **अमृते अमृतोपमे अमृतवर्षिणि अमृतरूपे इदमौषधममृतं कुरु-कुरु भगवति विधेस्वाहा।**' वास्तव में दया ही धर्म का मूल है, दया भाव से ओतप्रोत हृदय वाला व्यक्ति ही चिकित्सा कर सकता है।

स्वास्थ्य के भेद

आचार्यों ने स्वास्थ्य के दो भेद बताये हैं-एक पारमार्थिक स्वास्थ्य और दूसरा व्यावहारिक। ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के नाश से उत्पन्न अविनश्वर, अतीन्द्रिय तथा अद्वितीय आत्मीय सुख को पारमार्थिक स्वास्थ्य कहा है तथा शरीर स्थित सप्तधातु, अग्नि और वात, पित्तादि दोषों में समता रहना, इन्द्रियों में प्रसन्नता और मन में आनन्द रहना अर्थात् शरीर नीरोग रहना इसे व्यावहारिक स्वास्थ्य कहा है। यह जीव स्वोपार्जित पुण्य और पाप के उदय काल में बिना प्रयत्न के ही सुख और दु:ख का अनुभव करता है। वात, पित्त आदि दोषों के प्रकोप शुभाशुभ कर्मफल देने में निमित्त कारण हैं। शरीर में सर्व विकार (रोग) सहेतुक ही होते हैं, परन्तु उन हेतुओं को जानने के लिए गौण और मुख्य विवक्षा-विवेक से काम लेने की आवश्यकता है। रोगादिक विकारों का मुख्य हेतु अपने पूर्वकृत कर्म हैं, बाकी के सब निमित्त कारण हैं।

रोगोत्पत्ति के मुख्य कारण

न भूतकोपान्न च दोषकोपात्,
न चैव सांवत्सरिकोपरिष्टात्।
ग्रहप्रकोपात्प्रभवंति रोगा:,
कर्मोदयोदीरणभावतस्ते।।2।।

अर्थात् पृथ्वी आदि भूतों के कोप से रोग उत्पन्न नहीं होते हैं और न कोई दोषों के प्रकोप से होते हैं तथा वर्षफल के खराब होने से और मंगल आदि ग्रहों के प्रकोप से भी रोगों की उत्पत्ति नहीं होती है, परन्तु कर्मों के उदय और उदीरण से रोग उत्पन्न होते हैं।

यथार्थ में कर्मोपशान्ति करने वाली क्रिया ही चिकित्सा है, ऐसा आचार्यों का अभिमत है। कहा भी है कि-

तस्मात्स्वकर्मोपशमक्रियाया:,
व्याधिप्रशांतिं प्रवदंति तज्ज्ञा:।
स्वकर्मपाको द्विविधो यथाव,
दुपायकाल क्रमभेदभिन्न:।। 3।।

अर्थात् कर्मों की उपशमन क्रिया (देव स्तुति, सामायिक, स्वाध्याय, ध्यान आदि) को रोग शान्ति करने वाली क्रिया तथा चिकित्सा कहते हैं। अपने कर्मों को पकाना दो प्रकार से होता है, एक तो यथाकाल स्वयं पकना, दूसरा उपाय से पकना। जैसे महापुरुष तपस्या आदि विशुद्ध उपायों से अपने कर्मों को असमय में ही उदय में लाकर पकाते हैं, तथा कालान्तर में कर्म पककर स्वयं उदयकाल में फल देते हैं। उदाहरणार्थ-जिस प्रकार वृक्ष के फल समय आने पर स्वयं पकते हैं, परन्तु बुद्धिमान् लोग उन्हें उपायों से भी पकाते हैं, ठीक उसी प्रकार प्रकुपित रोग भी उपाय (चिकित्सा) और

कालक्रम से पकते हैं। रोग की कचावट को दूर करने वाली औषधियों का प्रयोग करके दोषों (रोगों) को पकाना 'उपाय पाक' कहलाता है तथा कालान्तर में अपनी अवधि के अन्दर स्वयमेव बिना औषधि के ही पक जाने को 'कालपाक' कहते हैं, जैसे पशु-पक्षी और अनाथों में देखा जाता है। तात्पर्य यह है कि बुद्धिमानों को पुरुषार्थ करके अपने शरीर के आगन्तुक रोगों को शुद्ध औषधियों से मिटाना चाहिये। अत: आरोग्य के लिए प्रयत्न पूर्वक अपने शरीर को रोगों से बचाना चाहिये, क्योंकि यह मानव की देह रत्नमय धर्म का साधन है।

कई भाई अज्ञानवश कहते हैं कि यदि आयु बाकी है तो हमारा कुछ बिगड़ने वाला नहीं है, उपचार करने से क्या होता है? उन बन्धुओं को याद रखना चाहिये कि पुरुषार्थ के बिना कार्य की सिद्धि कदापि नहीं होती है, ऐसा महापुरुषों का अभिमत है, प्रमादी व्यक्ति ही ऐसा कह सकते हैं, किन्तु पुरुषार्थी जन तो अपने कार्य की सिद्धि के लिए सदैव उद्यमशील रहते हैं।

लोक में यह बात सर्वमान्य है कि जीवों के रोगों की उत्पत्ति पाप के उदय से होती है, पाप और धर्म परस्पर विरोधी हैं। धर्म के अस्तित्व में पाप का नाश हो जाता है, क्योंकि धर्म पाप का प्रतिपक्षी है, अर्थात् पाप अपना प्रभाव धर्म के सामने नहीं चला सकता है, यथार्थ में प्रतिपक्ष की प्रबलता होने पर अन्य पक्ष का नाश होने में आश्चर्य ही क्या है? अत: रोग-शान्ति में धर्म आभ्यन्तर कारण है और बाह्य चिकित्सा सहकारी कारण है। फिर भी आज के लोग रोग उत्पन्न होने पर पापमय औषधियाँ सेवन करते देखे जाते हैं। इस विषय में तनिक विचार करना चाहिये कि क्या रक्त से सना हुआ कपड़ा रक्त से धोया जा सकता है? अर्थात् नहीं। उसी प्रकार पाप से उत्पन्न रोग पाप से नहीं मिटाये जा सकते हैं, परन्तु **धर्माचरण से और शुद्ध औषधियों से उन रोगों का शमन हो सकता है।** इस बात को समस्त प्राणी जो पाप-पुण्य में आस्था रखते हैं उनको ध्यान देना चाहिए।

खेद के साथ लिखना पड़ रहा है कि आज रोग हो जाने पर प्राय: मानव, धर्म-ध्यान से विमुख देखे जाते हैं। थोड़ा रोग होते ही नित्य नियम और भगवद् भक्ति आदि छोड़ देते हैं, पूछने पर कहते हैं कि अजी जैन साहब! आज जरा तबीयत ठीक न होने से पूजा आदि नहीं कर सके। भाई! जरा सोचो! क्या धार्मिक कार्यों के न करने से आपकी तबीयत अच्छी हो जायेगी। आचार्यों ने सुन्दर ढंग से समझाया है कि यदि आप के शरीर में रोग हो गया है तो आप विशेष धर्म-ध्यान में जुट जाओ, जिससे आपका असाता कर्म साता रूप में बदल जाय, परन्तु फिर भी न जाने क्या हेतु है कि मानव, रोग होने पर अक्सर धर्मकार्यों से उदास देखे जाते हैं। अत: रोग आदि हो जाने पर धार्मिक कार्यों में अपना विशेष योग देना चाहिये तथा शुद्ध औषधियों से रोग मिटाना चाहिये। इसके अतिरिक्त कई भाई रोग आदि होने पर अपने लिये व्रतों में भी दूषण लगाने को तैयार हो जाते हैं तथा रोग शमनार्थ अभक्ष्य पदार्थ और मद्य-मांस-मधु मिश्रित औषधियाँ सेवन करने में भी नहीं चूकते हैं। अहो! क्या मानवों का विवेक इतना हीन हो गया जो वे पाप कार्यों से रोग मिटाना चाहते हैं? किन्तु भाई याद रखो पाप प्रवृत्तियों से रोग नहीं मिट सकेंगे, होना तो यह चाहिये कि रोग उत्पन्न होते ही आप दान आदि सत्कार्यों में अपने मन-वचन-काय से योग दें अथवा भगवद् भक्ति में लग जाएँ। वस्तुत: भगवद् भक्ति में वह शक्ति है जो व्यक्ति को दु:ख से निकाल कर सुख में स्थापित कर सकती है। कहा भी है कि-

व्रतं शीलं तपोदानं संयमोऽर्हत्पूजनम्।
दु:खविच्छित्तये सर्वं, प्रोक्तमेतन्न संशय:।।4।।

अर्थात् धार्मिक क्रियाओं से दु:ख का नाश हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। अत: प्राणियों को सत्कार्यों में उत्साह रखते हुए सोचना चाहिये कि यह शरीर तो रोगों का घर है-'**शरीरं व्याधिमन्दिरम्**' आचार्यों ने रोगों की गणना करते हुए बताया है कि इस शरीर में, पाँच करोड़ अड़सठ लाख नवासी हजार और

पाँच सौ चौरासी रोग हो सकते हैं। ये सब पापोदय में होते हैं और पाप के अस्त होने पर मिटते हैं।

इसके अतिरिक्त रोगोत्पत्ति में बाह्य कारण- विरुद्ध आहार-विहार और असत् आचरण आदि भी हैं, अत: रोगों से बचने के लिए खान-पान की शुद्धता एवं सदाचार पूर्ण क्रियाओं की आवश्यकता होती है। यदि पापोदय में रोग से बचने का उपाय न दिखता हो तथा असाध्य रोग होकर आयु समाप्ति का समय आ गया है तो मानवों को बिना प्रमाद के सल्लेखना (समाधि मरण) के सन्मुख हो जाना चाहिये। संसार, शरीर और भोगों से विरक्त होकर बारह भावनाओं का चिन्तन करते हुये उत्तरोत्तर अपने परिणामों को विशुद्ध बनाना चाहिये, इस प्रकार अर्हद् भक्ति में तल्लीन होते हुए समस्त पदार्थों से ममत्व हटाकर साम्यभावों से समाधिमरण करना चाहिये। इसी में मानव जन्म की सार्थकता होती है। यदि मानव पर्याय प्राप्त करके पञ्चेन्द्रियों की भोगवासना में और शरीर के व्यामोह में व्यतीत कर दिया तो वह बड़ी भारी भूल होगी अर्थात् अन्त में पश्चात्ताप के अतिरिक्त कुछ भी न बचेगा।

प्राकृत ग्रन्थ 'कल्याणकारक' में प्राय: सभी रोगों की चिकित्सा एवं तन्त्र विद्या का सुसंबद्ध रूप से विवेचन किया गया है तथा आसानी से प्राप्त होने वाली साधारण औषधियों का उपयोग दर्शाया गया है। उल्लेखनीय बात यह है कि इस ग्रन्थ में किसी भी औषधि के प्रयोग में मद्य-मांस और मधु आदि का उपयोग नहीं किया गया है, क्योंकि ये हिंसाजन्य वस्तुएँ हैं। इनकी प्राप्ति में असंख्यात जीवों का संहार करना पड़ता है, बिना हिंसा के इन चीजों की प्राप्ति नहीं होती। अतएव अहिंसा धर्म के आदर्श का संरक्षण करने हेतु इनका परित्याग अत्यावश्यक है। इसके अलावा ये पापमय पदार्थ चिकित्सा कार्य में अनिवार्य भी नहीं हैं, आज पाश्चात्त्य देशों के वैज्ञानिक और डॉक्टर महाशय भी मानव शरीर के लिए इन पदार्थों की निरुपयोगिता सिद्ध कर रहे हैं, तो भला आर्य-संस्कृति के लिए तो हिंसाजन्य, निंद्य पदार्थों की आवश्यकता ही नहीं रहती। आज देश में औषधियों के बहाने लाखों प्राणियों की हिंसा की जाती है। अत: मानवों को शुद्धाशुद्ध, योग्यायोग्य, भोग्याभोग्य, भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय, गम्यागम्य आदि लोकव्यवहार देखकर भी काम करना चाहिये।

प्राणियों के शरीर में रोग दो प्रकार के होते हैं- कायिक और मानसिक। कायिक रोग को 'व्याधि' कहते हैं और मानसिक को 'आधि' कहते हैं। ये दोनों ही वात, पित्त, और कफ रूप होकर शरीर में नाना प्रकार के रोगों को उत्पन्न करते हैं। अधिकतर तो लोगों के खोटे खानपान से, गन्दे और बुरे वस्त्रों के पहनने से, गलत आचरणों से और गन्दे विचारों से ही रोगों की उत्पत्ति होती है। पुराकाल में देश में डॉक्टरों एवं वैद्यों तथा चिकित्सालयों की बहुलता नहीं थी, उस समय लोग शुद्ध आहार-विहार और संयम आदि पर पूरा ध्यान रखते थे, जिससे स्वस्थ रहते थे। किसी कारण यदि कभी रोग हो भी जाता तो वे लंघन एवं गर्म जल का प्रयोग कर लेते थे, इसके अतिरिक्त वे औषधि भी लेते तो अडूसा, तुलसी, नीम, सोंठ, पीपल, अजवायन, मेथी, हरड आदि का प्रयोग करके आरोग्य लाभ कर लेते थे। आज भी गाँवों में ज्वर आने पर तुलसी, कालीमिर्च, सोंठ, अजवाइन का क्वाथ तथा खाँसी होने पर अडूसा के पंचाग का स्वरस, अतिसार में बेलगिरी का चूर्ण और कैंज में त्रिफला आदि प्रयोगों का प्रचलन देखा जाता है। परन्तु आज तो लोग इतने परतन्त्र हो गये हैं कि साधारण-सा रोग होते ही बड़े-बड़े इञ्जेक्शन और ग्लूकोज चढ़ाना, केप्शूल, टेबलेट तथा आधुनिक यन्त्रों से ऑपरेशन आदि के चक्कर में आ जाते हैं, परिणाम यह होता है कि उनका रोगों से पीछा नहीं छूटता है। आज लोग बाजारू आटा, मसाला, पापड़, बड़ी तथा मिलावटी घी, तेल, आदि का सेवन करते हैं तथा होटलों में अमर्यादित वस्तुओं को खाते हैं, अनछणा पानी पीते देखे जाते हैं, वे जिह्वा की लोलुपता से यद्वा-

तद्वा पदार्थों को खा लेते हैं, परन्तु वे लोग अपने स्वास्थ्य के विषय में तनिक भी ध्यान नहीं देते हैं। फलस्वरूप उन्हें रोगों का निशाना बनना पड़ता है, वास्तव में **अधिकतर रोग तो लोगों की गलतियों से ही होते हैं।**

जैनाचार्यों ने जगत् के प्राणियों पर करुणा करके सम्बोधन करते हुए कहा है कि लोगों! आप यदि दु:ख से बचना चाहते हो तथा सुखी रहना चाहते हो तो कम से कम अपने जीवन में सदाचार को अपनाओ, समबुद्धि रखकर बोलो, विचार पूर्वक कार्य करो, देखकर चलो, सत्य का पक्ष लो, प्राणिमात्र पर करुणा भाव रखो, परायी वस्तु को मत अपनाओ, क्षमावान बने रहो, इन्द्रिय-भोगों में अनासक्त रहो, पूर्वाचार्यों के बताए हुए मार्ग पर चलो, अधर्म का परिहार करो, धर्म पर श्रद्धान करो, अभक्ष्य भक्षण मत करो, अन्याय के मार्ग को मत अपनाओ तथा अति तृष्णा मत करो, पर स्त्री को माता समान समझो, सप्तव्यसनों से बचो। इतना ही नहीं मानवता को अपनाओ तथा देव-शास्त्र और गुरुओं की श्रद्धा सहित भक्ति करो, इन सत् आचरणों से आप अनेक प्रकार के दु:खों से बचकर अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं तथा अपने भविष्य को उज्ज्वल बना सकते हैं। परन्तु जो लोग दुराचारी होते हैं वे अपने उभय लोक को बिगाड़ लेते हैं।

-निदेशक, सरस्वती उच्चस्तरीय अध्ययन अनुसंधान संस्थान, बी-417, प्रधान मार्ग, मालवीय नगर जयपुर -302017 (राज.)

रोशनी

डॉ. रमेश 'मयंक'

लेकर आदर्शन-कलम हाथ में
जिओ, लिखो ऐसा जीवन-साहित्य
जो, जलती हुई मशाल बने,
समाज में आगे चलने वाली
रोशनी
हमें भीतर से जगाए-जिलाए
हिम्मत हौंसला चेतना बढ़ाए
अन्धकारीय अवगुंठन की तपन
जलाए नहीं जगाए
उत्साह-उमंग-जोश के साथ आगे बढ़ाए।
जब आदर्शन चरित्रवान कलम
मशाल बन जाती है
संघर्ष-उत्पीड़न की यथार्थ तस्वीरें
उभर कर सामने आती हैं
युवा पीढ़ी के मन में शब्दों से बन्धती-बढ़ती
उम्मीदों के कारण सकारात्मक सोच वाली
सम्भावनाएँ जाग्रत हो जाती हैं।
आग-सकारात्मक ऊर्जा बनकर
रोशनी देने वाली हो राख का ढेर नहीं लगाए
निराशा-दु:ख, त्रासदी मिटाए
देख लो-मिट्टी के लघु दीपक को
तेल-बाती-दियासलाई का संयोग
पलभर में मिटाकर तिमिर
जगमग-जगमग करता
रोशनी फैलाए.....।
जानता हूँ वर्तमान की
विद्रूपताओं, विसङ्गतियों
और दुर्व्यवस्थाओं को
समाप्त करने के लिए
आवश्यक जन-जागरण पर-पहल करेंगे
मिट्टी के नन्हे-नन्हे दिए
लो-गायब हुआ अन्धकार
और रोशनी में चेहरे खिले
आओ गले-मिलें।

-बी 8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 57
ISSN 2249-2011

युवा-स्तम्भ

14 फ़रवरी वैलेण्टाइन्स डे... यह कैसा प्रेम दिवस?

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

जय जिनेन्द्र ...प्रीति बहन! आपका पत्र मिला ...जिसमें मुख्य रूप से आपने लिखा है कि भैया! मैं कॉलेज में प्रथमवर्ष की छात्रा हूँ। आने वाली 14 फ़रवरी को हमारी क्लास के कुछ छात्र-छात्राएँ मिलकर वैलेण्टाइन्स डे की पार्टी मनाना चाहते हैं ...और उसके लिए लगातार मुझ पर दबाव डाल रहे हैं। उनका कहना है कि उन्होंने शहर से बाहर हाईवे पर ...कोई फाइव स्टार रिसोर्ट भी बुक किया हुआ है ...और पूरा खर्चा नमन, सलीम और जोसेफ़ मिलकर ही करेंगे (ये तीनों ही खूब अमीर हैं....) और जो भी लड़कियाँ पार्टी में आयेंगी... उन सबको ढेर सारी चॉकलेट, महँगा वाला केक, स्पेशल ड्रेस और सरप्राइज गिफ्ट भी मिलेगा। मेरी प्रिय सहेली प्रियंका (वह मध्यम परिवार से है) ने तो मुझे इतना तक बोल दिया कि 'प्रीति ...तुमको भी जरूर चलना पड़ेगा ...अरे भई ...ऐसे फ्री में मौज-मस्ती करने के मौके रोज-रोज थोड़े न मिलते हैं।' इन सभी ने आपस में ही यह तय किया है कि कोई भी अपने घर वालों को इस पार्टी के बारें में नहीं बतायेंगे और रोज की तरह कॉलेज ही जा रहे हैं ...यह बोलकर ही घर से निकलेंगे। सवेरे आठ बजे कॉलेज के पहले वाली चाय की दुकान के पास इकट्ठे होना है ...और वहीं से सलीम और पवन की कारों में सीधा रिसोर्ट निकल लेंगे ...दिन भर पार्टी में नाच-गाना, खाना-पीना... स्वीमिंग पुल में मौज-मस्ती करके ...शाम को घर पहुँच जायेंगे और लेट हो भी गया ....तो घर वालों से बोल देंगे कि कॉलेज में एक्स्ट्रा क्लास थी और हाँ ....यह भी कहा है कि वैलेण्टाइन्स डे की पार्टी में कोई भी लड़का या लड़की एक-दूसरे को अपने प्रेम का इज़हार भी कर सकते हैं। भैया...अब मुझे समझ ही नहीं आ रहा कि मैं उन सभी के साथ जाऊँ या नहीं ...यदि जाऊँ तो घर में क्या बोलूँ ...और अगर नहीं जाऊँ तो उन दोस्तों को क्या बोलूँ? दिल बोल रहा है कि घर वालों से झूठ बोलकर जाना सही नहीं है ...और दिमाग बोल रहा है कि नहीं जाऊँगी तो सभी दोस्त बुरा मान गए तो ...और उन सभी को पार्टी में नहीं जाने का क्या कारण बताऊँ? ...समय भी कम है और मुझे तुरन्त निर्णय लेना पड़ेगा ...भैया आप ही बताओ कि मैं क्या करूँ?

प्रीति बहन ...कुछ भी निर्णय करने से पहले इन विचारों पर चिन्तन अवश्य करना ...कि मम्मी-पापा अपने बच्चों को स्कूल या कॉलेज में पढ़-लिखकर जीवन-निर्माण के लिए भेजते हैं या फिर मौज-मस्ती करने के लिए? तो फिर झूठ बोलकर उनके विश्वास को तोड़ना ...सिर्फ भूल ही नहीं, बल्कि बड़ी भारी गलती है। इससे सिर्फ उनका विश्वास ही नहीं टूटता...बल्कि खुद के सपने भी टूट जाते हैं। पराये लोगों के कारण अपनों से विश्वासघात किसी भी अपेक्षा से सही नहीं है, इसलिए किसी भी परिस्थिति में मम्मी पापा से अभी भी या कभी भी झूठ बोलने का विचार अपने मन में भी मत लाओ।

दूसरी बात ...क्या आप जानती हैं ...कि आपका इस तरह शहर से बाहर रिसोर्ट पर ..उन लोगों के साथ जाना कितना ज्यादा असुरक्षित है ..? आये दिन अखबारों में छपता है ...टी.वी. के समाचारों में दिखाया जाता है ...कि अमुक-अमुक होटल, रिसोर्ट, डाँस बार, क्लब इत्यादि में पुलिस ने छापा मारा और वहाँ पर जुआ खेलते हुए ...नशे में धुत ...अश्लील डाँस करते हुए ...अनेक लड़के-लड़कियाँ पकड़े गए। उनमें मुख्य रूप से रईस घरों के बिगड़े हुए ...किशोर और युवा होते

हैं और कई मध्यम या गरीब परिवार के ऐसे युवा भी होते हैं ...जो मौज-मस्ती भरी ज़िन्दगी जीने के आकर्षण में ...उन बिगड़ैल रईसों का साथ देते हैं। पुलिस उन सभी को जेल में डालती है ...पैसों के दम पर भले ही कुछ समय बाद जेल से छूट जाते हैं, लेकिन भविष्य तो खराब हो ही जाता है। उनमें भी जो कोई खानदानी युवा होते हैं ...वे खुद ही खुद से नज़रें नहीं मिला पाते ...किसी को कैसे मुँह दिखाए ...यह सोचकर या तो घर छोड़ देते हैं या अवसाद के शिकार हो जाते हैं ...और कुछ तो आत्महत्या करके अपने जीवन को ही समाप्त कर देते हैं। इनमें से कुछ तो ...अपराध की दुनिया में भी क़दम रखकर...समाज और राष्ट्र के लिए कलंक साबित होते हैं। ऐसे होते हैं कुसंगत के असर...इसलिए प्रीति बहन ...आपसे अनुरोध है कि आप अभी यह निर्णय भी कर लें और संकल्प भी...कि चाहे कोई कितना ही दबाव डाले ...लेकिन आपको किसी भी कीमत पर इस तरह की पार्टी में नहीं जाना है...न तो अभी और न ही फिर कभी।

प्रीति बहन ...आप भी एक जैन परिवार की बेटी हो...बचपन से ही हमें अहिंसा और करुणा के संस्कार सिखाये गए हैं। हमें गर्व है कि हम सब शाकाहारी हैं और हमारी थाली में कभी किसी प्राणी का खून नहीं होता...यह जानते हुए भी माँसाहारी रिसोर्ट में जाना और मांसाहारी-शराबी लोगों के साथ खाना-पीना ...एक तरह से जैनधर्म के साथ भी और स्वयं की आत्मा के साथ भी विश्वासघात है ..इसलिए मांसाहारी और शराबी लोगों से हमेशा दूरी बनाये रखना बुद्धिमानी भी है और नितान्त आवश्यक भी।

प्रीति बहन ...आपने यह भी लिखा है कि आपकी सबसे प्रिय दोस्त और बचपन की सहेली प्रियंका जैन भी उस दिन ...यानी वैलेण्टाइन्स डे की पार्टी में ...सलीम से अपने प्रेम का इजहार करेगी...और आपको नरेश से यह भी पता चला है कि उसका मित्र जोसेफ़ भी उस पार्टी में प्रियंका को प्रेम का इजहार करने का सोच रहा है ...तो आपकी सहेली को इन गलत इरादों और अन्धेरे रास्तों से बचाना ...क्या आपका कर्तव्य नहीं है? ये कैसी मित्रता ...आपकी सहेली प्रियंका एक मुसलमान लड़के सलीम को प्रेम का इजहार करने वाली है ...और एक ईसाई लड़का जोसेफ़ भी प्रियंका को फँसाने की तैयारी कर रहा है ...यह जानकर भी आप हाथ पर हाथ धरे कैसे बैठी है? तुरन्त अपनी सहेली को गलत क़दम बढ़ाने से रोकिये...ब्लैकमेल की शिकार होने से बचाइये ...उसे वास्तविक प्रेम की यह परिभाषा समझाइये ...कि **प्रेम अलग है और आकर्षण अलग है ...सच्चा प्रेम और वासना कभी एक नहीं हो सकते...कहाँ प्रेम की महक और कहाँ वासना की दुर्गन्ध।** उसे बताइये कि यह भारी गलती की एक चिंगारी उसके जीवन को तबाह कर सकती है। प्रीति बहन! आपकी एक भरपूर कोशिश आपकी सहेली प्रियंका के भविष्य को अन्धकार में खोने से बचा सकती है।

जिन अत्यन्त ज्ञानी और चारित्रवान महासती मण्डल का पिछले वर्ष हमारे क्षेत्र में चातुर्मास था ...महाराज साहब अभी आपके शहर में विराजमान हैं। ये सभी महासतीजी धार्मिक संस्कारों की बहुत अच्छी समझाइश करते हैं। उनका समझाने का तरीका इतना अच्छा और सरल है ...कि युवा पीढ़ी उनके विचारों से विशेष प्रभावित और आकर्षित होती है । महासती मण्डल ने सात कुव्यसनों के दुष्परिणाम समझा कर अनेक युवतियों को गुमराह होने से बचाया है । आप अपनी सहेली प्रियंका को साथ लेकर...उनके दर्शन और सेवा का लाभ अवश्य उठायें और उनसे सही जीवन जीने की कला सीखने का मानस बनायें ...साथ ही उनसे सात कुव्यसनों के बारे में समझ कर उनके त्याग का नियम अवश्य ग्रहण करें...इससे आपका जीवन अधिक मर्यादित तो बनेगा ही ...साथ ही सुसंस्कारों से सुरक्षित भी बनेगा।

और हाँ प्रीति बहन ...आपने अपने पत्र में यह भी

लिखा है कि मैंने पार्टी के लिए सभी को एक बार तो मना भी किया था ...कि घर वाले नहीं भेजेंगे ...तो क्लास के सारे लडके यही बोलने लगे कि ...प्रीति! तुम तो क्लास की शान हो ...तुम्हारे बिना पार्टी एकदम फीकी हो जाएगी ...तुम आओगी तो ही पार्टी की रौनक रहेगी ...तुम्हारे जैसी तो पूरे कॉलेज में ही कोई नहीं है ...तुम हिरोइन हो ...हिरोइन ...हम कोई बहाना नहीं सुनेंगें ...तुमको तो आना ही है ...वगैरह-वगैरह।

प्रीति बहन...सावधान! कभी भूलकर भी इन तारीफों के जाल में मत उलझना ...ये तारीफें चाहे सच्ची हो या झूठी ...लेकिन है तो खतरनाक ही! ये तारीफें ...महँगी वस्तुएँ ...आकर्षक उपहार इत्यादि लालच के दाने हैं ...तुम्हारी जैसी लड़कियों को फँसाने के लिए। जैसे मासूम नन्ही चिड़िया...कुछ दानों के लोभ में ...शिकारी के जाल में फँस जाती है ...और मछलियों को फँसाने वाला ...तालाब के पानी में आटे की गोलियाँ डालता है ...भोली मछली ...आटे में छिपे काँटे को नहीं देख पाती है ..और आटे के लालच में काँटे से अपनी जान गँवा देती है ...वैसे ही आप जैसी अनेक लड़कियों की भावुकता, नासमझी, भोलेपन और कच्ची उम्र का अनेक लोग फायदा उठा लेते हैं ....गुमराह कर देते हैं ! बहुत वेदना का विषय है कि जैन समाज के अच्छे परिवारों की कुछ बेटियाँ भी ...ऐसे ही कई शिकारियों के जाल में फँस चुकी हैं ...ऐसी अनेक सत्य घटनाओं को ..जैन सन्त पूज्य श्री धैर्यसागरजी म.सा. ने 'लव केमिस्ट्री' पुस्तक में संकलित किया है...इस पुस्तक में उन भुक्तभोगी युवतियों के जीवन के...वास्तविक कटु अनुभव एवं अत्यन्त मार्मिक परिणाम पढ़कर आप समझ पायेंगी ...कि ज़िन्दगी में इस तरह की ठोकरें...कितनी दर्दनाक साबित हो सकती हैं (यह पुस्तक भगवान ऋषभदेव ग्रन्थमाला, सांगानेर-जयपुर से फ़ोन 0141-2730390 द्वारा मँगवाई जा सकती है , मेरी उनसे बात भी हो चुकी है) यह पुस्तक आपके लिए तो हितकारी साबित होगी ही ...साथ ही आप अपनी सहेलियों को भी ...इस पुस्तक के माध्यम से सही राह दिखा सकती हैं जिससे कि वे सभी भी जीवन में कभी कोई गलत क़दम नहीं उठायें।

वैसे तो कॉलेज में आपको किसी को यह सफाई देने की आवश्यकता नहीं है ...कि आप पार्टी में क्यों नहीं जा रही हैं ...फिर भी आवश्यकता लगे ..तो आप अत्यन्त गौरव के साथ यह कह सकती हैं ..कि आप उस दिन अपने परिवार के साथ ...सम्पूर्ण विश्व के प्रत्येक प्राणी से नि:स्वार्थ प्रेम करने वाले...गुरुणीजी म.सा. की सत्संगति में जायेंगी। सतीवृन्द के सान्निध्य से बेहतर प्रेम और प्रीति का वातावरण भला कहाँ मिलेगा? हर साल 14 फ़रवरी को जहाँ संसार नकली प्रेम दिवस मनाता है ...वह भी वासना के साथ...जबकि निर्ग्रन्थ महाव्रती तो हर दिन को असली प्रेम दिवस के रूप में मनाते हैं ...वह भी साधना के साथ...हर प्राणी से वास्तविक प्रेम की भावना के साथ ! प्रीति बहन...महासती मण्डल के पावन सान्निध्य से आपका जीवन पावन बने...और सुसंस्कारों की महक से...हर घर मन्दिर-सा पवित्र और हर परिवार उपवन सा सुरभित बने ...इसी मंगल भावना के साथ ...

आपका हितैषी भाई तीर्थ

-'जिनशासन', 14, अग्रहारम स्ट्रीट, चिन्ताद्रीपेट, चेन्नई-600002 (तमिलनाडु)

किससे क्या हो?

श्री गणपतलाल जैन

1. दिल में क्या हो - गुरु का नाम।
2. हाथों से क्या हो - गुरु की सेवा।
3. आँखों में क्या हो - गुरु का चेहरा।
4. कान से क्या हो - गुरु का श्रवण।
5. शरीर से क्या हो - गुरु को नमन।
6. मुख से क्या हो - गुरु गुणगान।

-51, जवाहर नगर, गुलाब बाग, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 60
ISSN 2249-2011

चिन्तन

स्वयं जानें, आप अमीर हैं या ग़रीब

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

आप अमीर हो या ग़रीब यह आपके जीवन से जाना जा सकता है। आपने जिनशासन में प्रवेश किया है और यदि आपके पास श्रद्धा और साधना की पूँजी नहीं है तो समझ लीजिये कि आप ग़रीब हैं। यदि आपके अन्तरंग में जिनशासन के प्रति एवं जिनवाणी के प्रति अनुराग है, श्रद्धा है, भक्ति है, समर्पण है और अटूट आस्था है तो निश्चित रूप से आप अमीर हैं। अध्यात्म के क्षेत्र में यदि आप समृद्धिशाली हैं तो आप संघ-समाज में अपनी विशेष छवि बना सकते हैं। धर्म के प्रति आपकी अनन्य भक्ति आपके जीवन को उन्नत बना सकती है और आप अलौकिक अमीरी का आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। किसी कवि ने यह ठीक कहा है-

धर्म जिसके करीब होता है, वह खुशनसीब होता है।
जिसके पास यह दौलत नहीं, वह बहुत ग़रीब होता है।

जैसे रत्नों की दुकान में हम पहुँचते हैं और हमारी जेब में पर्याप्त पैसे नहीं हैं तो हम डायमण्ड का हार नहीं खरीद सकते। ठीक वैसे ही यदि हमने जिनशासन प्राप्त किया है और हमारे पास श्रद्धा और साधना की पूँजी नहीं है तो हम मोक्ष रूपी हार को प्राप्त नहीं कर सकते। नासमझ उन्हीं को कहा जाता है जो इस दुर्लभ मनुष्य जीवन का मूल्य नहीं समझते। इस अनमोल जीवन की कद्र नहीं करते। ऐसे लोग दीन बनकर जीवन को हार जाते हैं। निम्न पंक्तियों पर ध्यान दीजिये-

जहाँ जिसकी समझ नहीं, वहाँ अन्धेरा घोर।
हीरा तज कर हाथ से, बालक पकड़े बोर।।

यदि हमें अमीर बनना है तो हमें मनमस्तिष्क को स्वस्थ रखकर, श्रावकव्रतों का निष्ठापूर्वक पालन करना चाहिये तथा त्यागवृत्ति को अपनाकर पुण्यवानी की पूँजी को बढ़ाना चाहिये। ऐसा करके हम अपने जीवन का सही मूल्यांकन कर सकते हैं।

जिस घर में परिवार के सभी सदस्यों में परस्पर प्रेमपूर्ण व्यवहार नहीं है, आपस में संवाद नहीं है, बड़ों के प्रति सम्मान नहीं है, छोटों के प्रति स्नेह नहीं है तो यह समझना चाहिये कि घर में सब सुविधाएँ होते हुए भी वह परिवार ग़रीब है। मीठे बोल-बोलकर रिश्तों को महकाया जा सकता है। मीठे बोल बोलने की यदि हमारे पास कला नहीं है तो समझना हम वचनों से ग़रीब हैं। **आत्मीयता और अपनेपन की सौरभ लुटाने से अमीर बना जा सकता है।**

दूसरों की शिकायत करने वाला ग़रीब होता है। दूसरों की निन्दा कर व्यक्ति अशुभ कर्मों का बन्ध करता है। हर शिकायत के पीछे कषाय की भावना जुड़ी रहती है। हमें ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में समभाव रखना है, कोई प्रतिक्रिया नहीं करनी है। यदि हमें अमीर बनना है तो हम शिकायतों को सुनना और सहना सीखें।

समाधान तभी प्राप्त हो सकता है जब हमारी सोच सकारात्मक हो। नकारात्मक सोच वाला व्यक्ति दीन होता है, ग़रीब होता है। विवाद की स्थिति में कोई निर्णय मत लो, प्रत्युत्तर मत दो। धैर्य रखकर, सोच-विचार कर उत्तर दो जिससे अप्रिय स्थिति को उत्पन्न होने से उसे टाला जा सके। समभावों से समृद्ध बनो। दुनिया के समस्त जीवों के प्रति दया, करुणा, सहिष्णुता और अनुकम्पा के भाव होने चाहिये। तभी मोक्ष पाने का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

अमीरी प्राप्त करनी है तो निम्न बातों पर ध्यान दो- 1. जीवन में धर्म को आत्मसात् करो। 2. जिनवाणी का सम्मान करो। 3. भगवान की आज्ञा के अनुरूप आचरण करो। 4. छह काया जीवों के प्रति मैत्री भाव रखो। 5. व्रत-नियमों में और तप-त्याग में अग्रसर बनो। 6. देव, गुरु, धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा-भक्ति रखो। 7. सबके साथ प्रेम और वात्सल्य का व्यवहार करो। 8. साधर्मी और दीन-दुःखियों को सहयोग करो।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 61
ISSN 2249-2011

परिवार-स्तम्भ

जीवन की ढलती साँझ

डॉ. अरई. एम. खींचा

व्यक्ति के जीवन की सफलता का आभास उसके जीवन के उत्तरार्द्ध में उसकी मनोदशा (मन:स्थिति) से भी होता है। भले ही व्यक्ति की बाल्यावस्था एवं युवावय कितनी भी शान्त और सुखद क्यों न बीती हो, किन्तु उसके ढ़लते जीवन की साँझ अर्थात् वृद्धावस्था अशान्त, अरुचिकर और मनोमालिन्य से घिरी है तो जीवन में सब कुछ पा लेने के बाद भी कुछ भी नहीं है, ऐसा उसे लगना स्वाभाविक है। एक मान्यता के अनुसार मृत्यु के समय यदि व्यक्ति नैराश्य, असन्तोष तथा मन की मलिनता से उत्पीड़ित है तो कहते हैं कि उसकी भावी गति के बिगड़ने की आशंका रहती है। मृत्यु मांगलिक तब ही बन सकती है जब प्रयाण करने वाला व्यक्ति शान्त, सन्तुष्ट एवं सद्भावयुक्त वातावरण में विदा हो। कहते हैं-व्यक्ति के समग्र जीवन का प्रतिबिम्ब उसकी मरण स्थिति में भी परिलक्षित होता है।

सन्तों के जीवन में तो ऐसा सहजता से सम्भव है, क्योंकि वे परिवार, पैसा और पेटी की चिन्ता से मुक्त होते हैं। वे सादा जीवन-उच्च विचार और आचरण की शुद्धता में जीवन जीते हैं तथा आत्मार्थी विचारों और भावनाओं से ओत-प्रोत रहते हैं, बशर्ते उन्होंने-'आये थे हरिभजन को ओटन लगे कपास' की किंवदन्ती से स्वयं को दूर रखा हो। किन्तु गृहस्थ जीवन में अन्तिम समय मांगलिक तब ही बन पाता है जब व्यक्ति कषायों अर्थात् क्रोध, मान, माया एवं लोभ इत्यादि दुर्गुणों से जीवन के उत्तरार्द्ध में तो कम से कम निजात पा चुके हों। यदि व्यक्ति अन्त तक इन दोषों से घिरा रहा तथा दानवीय प्रवृत्तियों से ग्रसित रहा तो उसे सच्ची शान्ति तथा सन्तोष की अनुभूति का होना अति दूर की बात होगी। जीवन का यह वैषम्य कम से कम इस वृद्धावस्था में तो दूर हो ही जाना चाहिए।

दूसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु व्यक्ति का मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य है। जीवन के उत्तरार्द्ध में आते-आते शरीर के विविध अंग क्षीण होने लगते हैं, स्फूर्ति और सक्रियता मन्द पड़ने लगती है। इस क्षरण को पूर्णत: रोका तो नहीं जा सकता, किन्तु आहार-विहार, विवेक द्वारा क्षरण की गति को धीमा अवश्य किया जा सकता है। 40-50 वर्ष की आयु के बाद व्यक्ति को अवश्य ही सचेत होकर अपने शरीर, मन, बुद्धि और हृदय की शुद्धता, सात्त्विकता और सकारात्मकता के लिए कब, कितना, कैसा खाना-पीना है? व्यायाम, भ्रमण तथा परिश्रम से कैसे अपना जुड़ाव रखना है और किन बातों से परहेज रखना है; इस आयु में गम्भीर चिन्तन का विषय होना चाहिए। घर, परिवार, पड़ोस तथा निकट समाज से अपना जुड़ाव कैसा रखें कि जहाँ एक ओर निकटता और आत्मीयता में कोई कमी न आये वहीं दूसरी ओर तटस्थता और सहज रूप से उदासीन भाव बना रहे।

ज्यों-ज्यों वृद्धावस्था आगे बढ़ती है त्यों-त्यों शरीर और बुद्धि की अशक्तता भी बढ़ने लगती है। ऐसी स्थिति में आगे चलकर वह दशा आती है जब शरीर लड़खड़ाने लगता है, रोग अपने रंग दिखाने लगते हैं तथा व्यक्ति पराधीन बनने लगता है। यदि निकट परिवारजन सेवा, दायित्व और लगाव भाव से जुड़कर व्यवहार न करें तब वृद्धावस्था की यह समस्या गम्भीर रूप धारण कर लेती है। वर्तमान में सामूहिक परिवार की कल्पना धूमिल हो चली है। संयुक्त परिवारों का विघटन तेजी से हो रहा है। परिवार की परिभाषा मात्र बीबी-बच्चों तक सिकुड़ गयी है। ऐसे में सेवा की भावना तो दूर, वृद्धजनों की खुली उपेक्षा एक सामान्य सत्य है, तब ऐसी दशा में

वृद्धजन गम्भीर मानसिक वेदना से ग्रसित और उत्पीड़ित रहते हैं।

बच्चों द्वारा वृद्ध परिवारजनों की दिल से सेवा करना तो इस युग में परम प्रशंसनीय गुण है जो विरले बच्चों में ही पाया जाता है। सेवा भीख रूप में माँगने वाली चीज नहीं है और न ही इसे मात्र धन से क्रय किया जा सकता है। यह तो व्यक्ति के स्वभाव और संस्कार से जुड़ी भावना है। मैंने कई ऐसे वृद्धजनों को देखा है जो आप बीती कहना तो बहुत चाहते हैं, किन्तु बच्चों के डर से कह नहीं पाते। मानो बच्चों ने उनके मुँह पर ताला जड़ दिया है। वैसे स्वयं के विवेक से भी उन्हें निन्दा-विकथा में नहीं उलझना चाहिए।

एक प्रश्न है कि अन्य लोगों का वृद्ध व्यक्तियों के प्रति जो कर्त्तव्य है, क्या वह उनका अधिकार है? भूल यहीं होती है। वे दूसरों के कर्तव्यों को अपना अधिकार मान बैठते हैं, जो उचित नहीं है। इस सम्बन्ध में वृद्धजनों को कुछ बिन्दुओं पर गम्भीरता से अपना चिन्तन करना चाहिए। वे ऐसा करके दु:ख और विषाद से अपना बचाव कर सकते हैं। परिवारजन और अन्य निकट के लोग अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते तो चिन्तित नहीं होना चाहिए और न ही उन्हें बुरा कहना चाहिए। हम अपने परिवारजनों के प्रति तटस्थ भाव से रहें। उन्हें अपनी पसन्द, उम्र तथा परिस्थिति के अनुसार जीवन जीने की पूरी छूट दें। परिवारजनों की ओर से की जाने वाली सेवा, सद्व्यवहार के प्रति सकारात्मक रुख रखें तथा उनके इस गुण की अन्य लोगों के बीच प्रशंसा करने में कञ्जूसी न करें तथा उन्हें आत्मीयतापूर्ण प्यार भरा आशीर्वाद देते रहें। 'काम आ जाओ-कुछ न चाहो' इस प्रवृत्ति को अपने स्वभाव में ढालें। किसी से अपेक्षा भाव रखना ही दु:ख का कारण बनता है। मृत्यु एवं अपने इष्ट का सदा स्मरण रखें। मृत्यु के नाम से भय न खायें। प्रभु के प्रति समर्पण रखें। 'पैसा, परिवार और पेटी न मेरे थे न मेरे रहेंगे। मैं अकेला आया हूँ, अकेला जाऊँगा।' संसार एक रंगमञ्च है जहाँ व्यक्ति आता है-ठहरता है और अन्त में चला जाता है। ऐसी एकत्व की सोच हमें अपने मन एवं मस्तिष्क में भावपूर्वक बैठानी चाहिए। इससे बड़ी शान्ति मिलेगी।

उम्र के इस पड़ाव पर व्यक्ति की सोच में नकारात्मकता के आने का भय बढ़ जाता है। इस दुर्गुण पर नियन्त्रण रखने का अभ्यास करें। स्वयं को अनावश्यक सांसारिक प्रवृत्तियों के जञ्जाल से बचायें। जीवनवृत्त को सांसारिक उलझनों में अटकाना तथा अपनी सहज शान्ति और सन्तोष की स्थिति को भङ्ग करना विवेकी व्यक्ति का कार्य नहीं है। इस उम्र में आकर कभी-कभी व्यक्ति अतीत में गहराई से झाँकने लगता है तथा उन दिनों की याद को मस्तिष्क में ताजा कर दु:खी होता है। व्यक्ति को मात्र वर्तमान जीवन जीने का अभ्यास करना चाहिए। इस आयु में हमें कतिपय मूलभूत आदर्शों को पूर्णरूपेण पूरी निष्ठा से अपनाना चाहिए। उनसे संकल्पभाव से अपना जुड़ाव रखना चाहिए। ये ही कुछ बातें हैं जो वृद्ध पुरुषों के जीवन के उत्तरार्द्ध अर्थात् वृद्धावस्था में सफल जीवन की अनुभूति कराने में सहयोगी करेंगी और शान्ति, भक्ति और मुक्ति के राजमार्ग पर अग्रसर करेंगी। इसी से जीवन की ढलती साँझ प्रकाशमान होगी तथा वह उन्हें शाश्वत मोक्ष के निकट ले जायेगी।

-खींचा निवास, एसबी स्कूल रोड़, ब्यावर, जिला-अजमेर (राज.) 9251037466

जिनवाणी पर अभिमत

श्री आर. प्रसन्नचन्द चोरड़िया

आज दिसम्बर, 2021 की जिनवाणी में साधु-जीवन की चुनौतियाँ पढ़ा-आपने इस लेख में साधु-जीवन का जो चित्रण किया है-वह सही है। मैं तो यही कहूँगा कि साधुजीवन की तरह श्रावक जीवन भी सरल-निर्मल-नैतिकता के साथ जीना चाहिये।

-52, कालाथी पिल्लै स्ट्रीट, चेन्नई-600001 (तमिलनाडु)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 63
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

आओ मिलकर कर्मों को समझें (18)

(दर्शनावरणीय कर्म)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– पाँच निद्राओं के बन्ध का प्रमुख कारण क्या हैं?

समाधान–पाँच निद्राओं के बन्ध का प्रमुख कारण प्रमाद है। प्रमाद में जितनी तीव्रता, गाढ़ता होती है, उसी अनुपात में निद्रादि पाँच प्रकृतियों का बन्ध होता है। प्रमाद की तीव्रता-प्रगाढ़ता में स्त्यानर्द्धि त्रिक का तथा प्रमाद की तरतमता-न्यूनता में निद्रा-द्विक का बन्ध होता है। जितना प्रगाढ़ अनुभाग बन्ध होता है, तो उनके उदय में आने पर उनमें उतनी ही अधिक तीव्रता-गाढ़ता रहती है।

जिज्ञासा– पाँच निद्राओं का बन्ध किन-किन गुणस्थानों में होता है?

समाधान–निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला और स्त्यानर्द्धि इन तीनों का बन्ध पहले, दूसरे गुणस्थान में होता है। इसमें भी उत्कृष्ट, मध्यम तथा जघन्य बन्ध मिथ्यात्व गुणस्थान में होता है। तीव्र संक्लेश युक्त परिणामों में उत्कृष्ट बन्ध तथा समकित आदि के सन्मुख विशुद्धि परिणामी मिथ्यादृष्टि के जघन्य बन्ध होता है। बाकी अवस्था में मध्यम बन्ध होता है। दूसरे गुणस्थान में मध्यम प्रकार का ही बन्ध होता है।

निद्रा तथा प्रचला इन दो प्रकृतियों का बन्ध पहले गुणस्थान से लेकर आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग तक होता है। उसके आगे इनका बन्ध रुक जाता है। निद्रा-प्रचला का उत्कृष्ट स्थिति तथा अनुभाग बन्ध प्रथम गुणस्थान में तीव्र संक्लेश परिणामों में पर्याप्तक सन्नी पञ्चेन्द्रिय के होता है, जबकि जघन्य स्थिति तथा जघन्य अनुभाग बन्ध आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग के अन्त में क्षपक श्रेणि वाले साधु के होता है।

जिज्ञासा– पाँच निद्राओं का उदय किन-किन गुणस्थानों में होता है?

समाधान–निद्रा और प्रचला इन दो प्रकृतियों का उदय यदि हो तो पहले गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समय तक के जीवों के हो सकता है। शरीर पर्याप्ति से पर्याप्त होने के बाद ही निद्रा द्विक का उदय हो सकता है। बाटा बहती अवस्था में उदय नहीं होता है।

इस सम्बन्ध में यह ज्ञातव्य है कि कर्मग्रन्थ के अनुसार पहले से बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समय तक निद्रा द्विक का उदय होना मानते हैं, किन्तु कम्मपयड़ी ग्रन्थ के अनुसार तो क्षपक श्रेणि वाले जीवों में निद्रा द्विक का उदय नहीं माना जाता है। निद्रा द्विक का उदय जो अप्रमत्त अवस्था में, उपशम श्रेणि, क्षपक श्रेणि में माना है, वह अत्यन्त मन्द अवस्था रूप समझना चाहिए।

स्त्यानर्द्धि त्रिक का उदय पहले गुणस्थान से लेकर छठे गुणस्थान तक हो सकता है। आगे के गुणस्थानों में इसका उदय नहीं होता है। स्त्यानर्द्धि निद्रा के उत्कृष्ट उदय रहते यदि आयुबन्ध तथा मरण हो तो वह जीव नरक में ही जाता है। स्त्यानर्द्धि के जघन्य-मध्यम उदय में नरक में जाने की नियमा नहीं मानी जाती है।

पाँचों निद्राएँ अध्रुव उदय वाली प्रकृतियाँ हैं, अत: इनका उदय हमेशा नहीं रहता है। कारण उपस्थित होने पर, आलस्य, प्रमाद, अरुचि, थकान आदि बढ़ने पर इनका उदय हो सकता है। इनका निरन्तर उदय नहीं रहता है।

जिज्ञासा– पाँच निद्राओं का क्षयोपशम होता है अथवा नहीं?

समाधान–पाँच निद्राएँ सर्वघाती प्रकृतियाँ कहलाती हैं।

ये प्रकृतियाँ अपने-अपने से सम्बन्धित दर्शनलब्धि को पूरी तरह रोके रखती हैं, इसलिए इन्हें सर्वघाती माना जाता है। किसी भी जीव में इनके क्षयोपशम योग्य परिणाम नहीं आ पाते हैं, इस कारण से इनका क्षयोपशम नहीं हो पाता है। इनका तो उदय ही होता है। उदय में तीव्रता-मन्दता रह सकती है। तीव्रता-मन्दता रहते हुए भी पाँचों निद्राओं का क्षयोपशम नहीं मानने में जीव-स्वभाव ही प्रमुख कारण है।

जिज्ञासा- पाँच निद्राओं की सत्ता जीव में कब तक रहती है?

समाधान-पहले से लेकर आठवें गुणस्थानवर्ती सभी जीवों में पाँचों निद्राओं की सत्ता बनी रहती है। उपशम श्रेणि करने वालों की अपेक्षा से विचार करें तो आठवें से ग्यारहवें गुणस्थान वाले साधकों में भी पाँचों निद्राओं की सत्ता रहती है। यदि क्षपक श्रेणि वाले साधकों की अपेक्षा से विचार करें तो नवम गुणस्थान के दूसरे भाग तक तो उनमें भी पाँचों निद्राओं की सत्ता रहती है। तीसरे भाग के प्रारम्भ में स्त्यानर्द्धि त्रिक की सत्ता समाप्त हो जाती है। निद्रा द्विक की ही सत्ता रहती है।

यह निद्रा द्विक की सत्ता क्षपक श्रेणि वालों में बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समय पर्यन्त बनी रहती है। चरम समय में इनकी सत्ता समाप्त हो जाती है।

जिज्ञासा- निद्रा और प्रचला के उदय में भी अप्रमत्तता, उपशम श्रेणि तथा क्षपक श्रेणि मानने का क्या कारण है?

समाधान-अप्रमत्तता, उपशमश्रेणि, क्षपक श्रेणि आदि का सम्बन्ध मोहनीय कर्म से है। राग-द्वेष, कषायादि की तीव्रता इनमें अधिक बाधक बनती है। इनके कम होने पर, अभाव होने पर अप्रमत्तता, वीतरागता बढ़ती जाती है। निद्रा और प्रचला तो देखने रूप, संवेदन रूप, सामान्य बोध रूप दर्शन लब्धि में बाधक बनती है, अप्रमत्तता आदि में नहीं। यही कारण है कि उपशम श्रेणि-क्षपक श्रेणि में भी निद्रा और प्रचला का क्वचित् कदाचित् उदय होने में बाधा नहीं मानी जाती है। सभी के उदय होना आवश्यक भी नहीं है।

जिज्ञासा- दर्शनावरण चतुष्क तथा निद्रा पंचक में क्या-क्या अन्तर हैं?

समाधान-1. दर्शनावरण चतुष्क-दर्शनावरण चतुष्क का बन्ध 10वें गुणस्थान तक तथा उदय 12वें गुणस्थान तक रहता है। **निद्रा पंचक**-निद्रा पंचक में निद्रा द्विक का बन्ध आठवें गुणस्थान के प्रथम भाग तक तथा स्त्यानर्द्धि त्रिक का बन्ध दूसरे गुणस्थान तक होता हैं। निद्रा द्विक प्रकृति का उदय बारहवें गुणस्थान के द्विचरम समय तक तथा स्त्यानर्द्धि त्रिक का उदय छठे गुणस्थान तक हो सकता है।

2. दर्शनावरण चतुष्क-दर्शनावरण चतुष्क ध्रुव बन्धी तथा ध्रुव उदय वाली प्रकृति होने से इनका बन्ध तथा उदय दोनों ही अपने-अपने गुणस्थान तक लगातार रहता है। **निद्रा पंचक**-पाँच निद्राएँ ध्रुवबन्धी होने पर इनका बन्ध अपने-अपने गुणस्थान में लगातार होता है किन्तु उदय की अपेक्षा अध्रुव होने से एक बार में किसी एक ही निद्रा का उदय होता है। वह भी कभी होता है, कभी नहीं भी होता है।

3. दर्शनावरण चतुष्क-दर्शनावरण चतुष्क की सत्ता एक साथ ही तेरहवें गुणस्थान के प्रथम समय में समाप्त होती है। **निद्रा पंचक**-निद्रा पंचक में से स्त्यानर्द्धि त्रिक की सत्ता क्षपक श्रेणि में 9वें गुणस्थान के तीसरे भाग में समाप्त होती है, जबकि निद्रा द्विक की सत्ता बारहवें गुणस्थान के चरम समय में समाप्त होती है।

4. दर्शनावरण चतुष्क-दर्शनावरण चतुष्क में केवल दर्शनावरण सर्वघाती प्रकृति है तथा शेष तीन देशघाती प्रकृति होती है। **निद्रा पंचक**-निद्रा पंचक की सभी प्रकृतियाँ सर्वघाती ही होती हैं।

5. दर्शनावरण चतुष्क-चक्षु, अचक्षु तथा अवधि दर्शनावरण इन तीन प्रकृतियों का क्षयोपशम भी होता है, किन्तु केवल दर्शनावरण का क्षयोपशम नहीं होता हैं। **निद्रा पंचक**-पाँचों ही निद्राओं का क्षयोपशम नहीं होता है। ये उदय में आकर ही समाप्त होती हैं। प्रदेशोदय तथा विपाकोदय दोनों प्रकार का उदय होता है।

6. दर्शनावरण चतुष्क–अचक्षु दर्शनावरण का क्षयोपशम तो सभी छद्मस्थ जीवों के रहता ही है। चक्षु तथा अवधि दर्शनावरण का क्षयोपशम किसी-किसी जीव के रह सकता है। **निद्रा पंचक**–किसी भी प्रकार की निद्रा का किसी भी जीव के क्षयोपशम नहीं हो पाता है।

-रजिस्ट्रार, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राजस्थान)

वैज्ञानिक आइंस्टीन और जैनत्व

श्री प्रमोद महनोत

विश्व में दो सर्वाधिक प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुये हैं। 'सर आईजेक न्यूटन' और 'सर अलबर्ट आइंस्टीन' भौतिक शास्त्र के ज्ञाता एवं अणु शक्ति प्रदाता आइंस्टीन ने 18 अप्रैल, 1955 को रोज प्रिंस्टन अस्पताल में अपना नश्वर शरीर त्यागने की कुछ घड़ी पहले अपने समीप खड़ी नर्स से जीवन रहस्य बतलाते हुये कहा था कि-''यदि मेरा पुनर्जन्म होता है तो मैं जैनधर्म का पालन करना चाहूँगा। मुझे यह धर्म प्रिय है।''

आइंस्टीन जैन नहीं थे, पर उनकी जैनत्व आस्था वाली धारणा बड़ी प्रबल थी। वे हमारी तरह सिर्फ बातों में नहीं, बल्कि व्यवहार में पक्के अपरिग्रही थे। आपको आश्चर्य होगा कि वे एक ही साबुन से शेव करते थे, उसी से कपड़ो की धुलाई करते थे और कभी कभार स्नान करने में भी उसी साबुन का इस्तेमाल करते थे। रोज स्नान नहीं करते थे ताकि अप्काय (पानी) की रक्षा हो सके। उनके दैनिक उपयोग के सामान भी निहायत ही सीमित थे जैसे-एक छड़ी, एक घड़ी, एक रूमाल, गिनती के कपड़े। वे अल्पाहारी (अर्थात् ऊनोदरी तप निभाने वाले), मितभाषी और पक्के शाकाहारी थे। उन्होंने धन जोड़ना सीखा ही नहीं, सीखा तो सिर्फ देना जो अतिरिक्त है वह जरूरतमन्दो को।

सन् 1932 की बात है, 'इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवान्स स्टडीज्' ने आइंस्टीन की सेवाएँ लेने के वास्ते उनसे वेतन के बारे में राय माँगी। वे बोले-''3,000 डॉलर।'' अपनी सदी का सबसे बड़ा वैज्ञानिक और इतना भोला व्यवहार। जबकि इन्स्टीट्यूट इनके लिये दस गुना अर्थात् 30,000 डॉलर पहले ही निर्धारित कर चुका था, जो उन्हें मैनेजमेन्ट ने सहर्ष प्रदान किया, पर आइंस्टीन तो सम्पदा सम्पत्ति के अपरिग्रही ठहरे, सो उन्होंने वेतन राशि का एक बड़ा भाग जर्मनी स्थित एक जैन संस्था जो जैन पाण्डुलिपियों के प्रकाशन और अनुवाद के लिए समर्पित थी, उसे भेंट कर दी।

व्यावहारिक जीवन में इन्होंने सादगी एवं साधुत्व युक्त जीवन जिया। समता को साधा। इससे बड़ा जैनत्व का प्रमाण और क्या?

बीसवीं सदी के मानवतावादी भारतीय वैज्ञानिक डॉ. दौलतसिंहजी कोठारी विनम्रता के सहज प्रतीक थे। आप भारत के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष रहे। डॉ. कोठारी और आइंस्टीन की ऐतिहासिक भेंट के दौरान जैनधर्म और दर्शन पर वार्ता प्रसङ्ग चला। तब आइंस्टीन ने "Theory of Probability and Relativty" का जिक्र छेड़ते हुये जैनधर्म के स्याद्वाद के तालमेल का भावमय प्रतिपादन कर भारतीय अध्यात्म के प्रति गहरी कृतज्ञता प्रगट की।

आइंस्टीन को भौतिकी में नोबेल पुरस्कार वास्ते चयन की घोषणा सन् 1921 में हुई, अणुशक्ति का समीकरण $E=mC^2$ उनके द्वारा उद्घाटित किया गया था। वे अपने दैनिक जीवन में प्रमुख कार्यकलापों को डायरी में अंकित करते थे। फिर इस पुरस्कार का जिक्र भी अपनी डायरी में नहीं किया, न किसी मित्र को पत्र लिखकर जताया। दुनिया के सर्वोच्च पुरस्कार की प्राप्ति पर भी यह कीर्तिशाली मनुष्य तटस्थ रहा। लगता है, वे वीतरागत्व की तह तक जा पहुँचे थे।

-सी 345, हंस मार्ग, मालवीय नगर, जयपुर-

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 66
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

परिस्थिति क्या है?

सुश्री नेहा चोरड़िया

परिस्थिति पूर्व में सञ्चित कर्म का उदय है। जो उस उदय में शिकायत के भाव नहीं रखता है वह बन्धनों से मुक्त होता चला जाता है। परिस्थिति को निम्नाङ्कित चार्ट से समझा जा सकता है।

भीतर में सञ्चित कर्म

↓

↓	↓
उदय	परिस्थिति
न सुखद समझा, न दुःखद	भोग नहीं किया।
अच्छा-बुरा समझा	भोग किया।

परिस्थिति का प्रभाव

↓

↓	↓
उपकार माना	तनाव हुआ, अशान्ति हुई
↓	↓
कर्म से छुटकारा	कर्म बन्ध

परिस्थिति के प्रति कृतज्ञ हो जाएँ, परिस्थिति को धन्यवाद देते जाएँ, उसका उपकार मानें, सहयोग मानते जाएँ तो हम परिस्थिति चाहे जैसी हो, उस परिस्थिति को स्वीकार कर पाएँगे।

''इस क्षण की यह सच्चाई है'' इस सूत्र को आत्मसात् कर हम वर्तमान में जीने की कला सीख जाएँगे।

परिस्थिति को जब हम स्वीकार नहीं करते हैं, तो हमारी अपनी हानि करते हैं। परिस्थिति को बदलने का श्रम रात-दिन करते रहते हैं और उस श्रम से परिस्थिति बदले न बदले, पर हम अपनी ऊर्जा को, शक्ति को उसमें लगा देते हैं और हम शक्तिहीन होते चले जाते हैं, मस्तिष्क को सन्तुलित नहीं रख पाते हैं, सही सामायिक नहीं कर पाते हैं

साधना का तरीका कितना आसान है, कितना सरल है, जो परिस्थिति जैसी है उसे वैसे ही सहजता पूर्वक स्वीकार कर लिया जाए तो हम अनन्त शक्ति का अनुभव कर सकते हैं। हमारे भीतर सब कुछ है। पर जब हम बाहर की परिस्थितियों को देखने लग जाते हैं तब भीतर में झाँकने से वञ्चित रह जाते हैं।

बाहर की परिस्थितियों से जुड़ना ही नहीं है।
ये कृतज्ञता के भाव, उपकार के भाव, सहकार के भाव
हमारा जुड़ाव समाप्त करने में परम सहयोगी हैं
वह परिस्थिति हमें शिक्षा देने आयी है।

-पुस्तक 'विजय तुम्हें बुला रही' से साभार

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 67
ISSN 2249-2011

पावन-स्मृति

संघ-स्तम्भ श्री नथमलजी हीरावत का विरल व्यक्तित्व

डॉ. धर्मचन्द जैन

अनन्य गुरुभक्तों में सूझबूझ के धनी, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के स्तम्भ, संघ संरक्षक माननीय श्री नथमलजी हीरावत का जन्म 11 फरवरी, 1930 को जयपुर में हुआ और 20 जनवरी, 2022 को 92 वर्ष की आयु में आपका समाधि भावों के साथ देवलोकगमन हो गया। आपके साथ ही उस पीढ़ी के श्रावकों के युग का अन्त हो गया, जिनमें श्री उमरावमलजी ढड्ढा, श्री श्रीचन्दजी गोलेच्छा, श्री पूनमचन्दजी बड़ेर, श्री इन्दरचन्दजी हीरावत, श्री पृथ्वीराजजी कवाड़, श्री रतनलालजी नाहर, श्री मोतीलालजी मूथा, न्यायमूर्ति श्री इन्दरनाथजी मोदी, श्री विजयमलजी कुम्भट, श्री दौतलमलजी भण्डारी आदि अनेक श्रावकों का नाम लिया जा सकता है।

आदरणीय श्री नथमलजी हीरावत का संघ में तीन प्रकार का योगदान रहा-1. पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के विनयशील गुरुभक्त होने के साथ उनके सत्परामर्शदाता भी रहे। 2. संघ के गठन के पूर्व संघ हितैषी श्रावकों में वे अग्रगण्य थे। संघ गठन के पश्चात् संघ के सभी घटकों के उन्नयन में उनके मूल्यवान विचार प्रेरक रहे। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी मासिक पत्रिका को उन्होंने सम्बल प्रदान किया। 3. स्वाध्याय एवं तप-त्याग के साथ उनका निजी जीवन भी निर्मल था।

जब आप मात्र 19 वर्ष के किशोर थे तभी आपके पिताश्री श्री मोतीचन्दजी हीरावत का देवलोकगमन हो गया, जो श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन जयपुर श्रावक संघ, जयपुर के अध्यक्ष रहे। माता श्रीमती मिश्रीदेवीजी के मार्गदर्शन में अपने पाँच छोटे भाई-बहिनों का पारिवारिक दायित्व आपके कन्धों पर आ पड़ा। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर एवं सुबोध विद्यालय में हुई। विलक्षण प्रतिभा के धनी, कर्त्तव्यनिष्ठ श्रावकरत्न ने अपने सभी दायित्वों का निर्वहन बुद्धिमत्ता एवं धीरता के साथ पूर्ण किया।

आपके सुपुत्र श्री अमिताभजी हीरावत को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के यहाँ से गिर्राजजी के द्वारा जो संवेदना पत्र प्रेषित किया गया उसका अंश आपके जीवन पर समुचित प्रकाश डालता है-''दिवंगत जीवात्मा देव-गुरु-धर्म एवं रत्नसंघ के प्रति समर्पित श्रावक रत्न थे। आपके पिताश्री के स्वर्गस्थ हो जाने पर गुरु हस्ती के प्रेरणादायी पत्र से आपके अन्तरंग में गुरु हस्ती के प्रति श्रद्धा के विशेष भाव जाग गये और सश्रद्धा, अनन्य गुरुभक्ति में डूबकर संघ-सेवा में उन्मुख होकर आपने गुरुवचनों का कर्त्तव्य रूप पालन करने का लक्ष्य बना लिया। कर्त्तव्य एवं दायित्वबोध से आपमें धृति सम्पन्नता एवं मेधाविता के कारण निरन्तर प्रखरता निखरती गई। लघु से लेकर बृहत् एवं बृहत्तर दायित्वों का कुशलता पूर्वक निर्वहन किया। पूज्य गुरु हस्ती ने स्वयं सन्तों को भी निमाज में कहा कि सूझबूझ वाला श्रावक है इनकी सलाह मानना। हीरे-जवाहरात के सफल व्यापारी होते हुए अत्यन्त निर्लिप्त एवं सारगर्भित जीवन जीया। जब-जब सन्त भगवन्त सम्मुख होते तो वे भावना भाते कि अन्तिम समय तक शरीर में परायेपन का भाव बना रहे। विरक्त-विरक्ता भाई-बहिनों के आत्मोत्थान हेतु आप विशेष प्रेरणा प्रदान करते थे। विरक्त बन्धु अंशजी हीरावत जो वर्तमान में नवदीक्षित श्री आनन्दमुनिजी हैं, के संयम भावों को प्रवर्द्धमान करने में आपका प्रेरणादायी सहयोग रहा। संघ को मूर्त एवं प्रवर्द्धमान स्वरूप प्रदान करने हेतु गुरु हस्ती की देशनाओं, भावनाओं को समझना, आत्मसात् कर उन्हें प्रवर्तांना, स्वयं करना एवं सभी को प्रेरित करके करने-

करवाने हेतु सहयोग रूप सकारात्मक सक्रियता, सहजता, सरलता, श्रद्धा, समर्पणशीलता आपमें जीवन पर्यन्त सतत बनी रही। 92 वर्ष की अवस्था में शारीरिक अशक्तता भले ही रही, परन्तु हृदयस्थ व्याप्त श्रद्धा, सेवा, समर्पण भाव आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर सभी सन्त-सतीवृन्द के प्रति रहा। चित्त में चिन्मयता, श्रद्धा, एवं सेवाभाव में आत्मीय स्फूर्तता अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक आत्मभावों में सम्पृक्त थी।''

आप संघ के मेढ़ीभूत श्रावक थे। अनेक श्रावक उनसे सत्परामर्श किया करते थे। उनकी सलाह भी स्पष्ट और नेक होती थी। संघ में अपना महत्त्व स्थापित करना कभी उनका लक्ष्य नहीं रहा। किन्तु संघ के उन्नयन, सन्त-सतियों के रत्नत्रय में अभिवृद्धि तथा संघ से जुड़े छोटे-बड़े हर व्यक्ति के निजी जीवन को सुन्दर बनाने की वे सत्प्रेरणा करते रहे। जीवन की सच्चाई को समझने वाले एवं उसे प्रस्तुत करने वाले वे निर्भीक श्रावक थे। सभाओं में वक्ता बनकर बोलने की अपेक्षा व्यक्तिगत वार्ता में वे जीवन-सुधार की प्रेरणा किया करते थे। सब को आत्मीयता एवं प्रेम प्रदान कर आगे बढ़ाना उनका स्वभाव था। आध्यात्मिक बातों को भी तार्किक ढ़ग से गले उतारते थे।

आप 1968 से 1973 तक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के मन्त्री, वर्ष 1983-84 में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष, शासन सेवा समिति के प्रारम्भ से ही सदस्य, संघ संरक्षक एवं गजेन्द्रनिधि के ट्रस्टी रहे। आचार्य श्री विनयचन्द ज्ञान भण्डार के सञ्चालन में लगभग 18 वर्षों तक आपका योगदान रहा। वहाँ पर दो-तीन घण्टे नियमित श्वेताम्बर एवं दिगम्बर आगमों का आदरणीय श्री श्रीचन्दजी गोलेच्छा, श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा, श्री मोहनलालजी मूथा के साथ स्वाध्याय करते थे। श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान जब 1973 में प्रारम्भ हुआ तब से ही आपने इसके सञ्चालन, संरक्षण एवं संवर्द्धन में हृदय से सेवाएँ प्रदान की। आप व्यक्तिगत रूप से संस्थान के विद्यार्थियों से मिलकर उन्हें प्रेरणा करते थे। मैं भी उनमें से एक विद्यार्थी रहा जिसने आपसे बहुत कुछ सीखा। संस्थान से निकलने के पश्चात् भी जब कभी आपसे सम्पर्क हुआ तभी आपकी सतत आध्यात्मिक प्रेरणा प्राप्त होती रही। आप स्वयं एक श्रेष्ठ साधक थे। आपने एक वर्ष तक मिर्ची के सेवन का पूर्णत: त्याग रखा। किशनगढ़ में तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. के सान्निध्य में वीतराग ध्यान शिविर आयोजित हुआ तब आपके साथ एक ही कक्ष में ठहरने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ। सुख-समृद्धि में पले बढ़े होने पर भी आप उसकी वास्तविक सच्चाई से परिचित थे।

जैनधर्म का मौलिक इतिहास एवं अन्य इतिहास ग्रन्थों का प्रकाशन 'इतिहास समिति' के माध्यम से हुआ, जिसके गठन तथा सञ्चालन में हीरावत साहब की महती भूमिका रही। जिनवाणी पत्रिका के प्रबन्धन से जुड़े होने के कारण कुछ वर्षों तक आपका नाम प्रबन्ध सम्पादक के रूप में देखने को मिला। मानद् सम्पादक डॉ. नरेन्द्रजी भानावत के साथ आपके मधुर सम्बन्ध थे।

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के आप विनयशील, विश्वस्त एवं कृपापात्र श्रावकरत्न थे। नमो पुरिसंवरगन्धहत्थीणं ग्रन्थ में आपने जो अपने विचार प्रकट किये उसका कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत है-''मैं भी उन हजारों व्यक्तियों में से रहा हूँ, जिन पर गुरुदेव का उपकार रहा। उन्होंने मुझे सही दिशा की ओर मुख करके खड़ा कर दिया, यह मेरा अहोभाग्य है। उन्होंने ही मुझे स्वाध्याय से जोड़ा। गुरु महाराज के सम्पर्क में मैं जीवन के प्रारम्भ से ही आ गया था। विक्रम सम्वत् 2011 में जब मैं 24-25 वर्ष का था, तब और अधिक जुड़ाव हो गया, जो निरन्तर बढ़ता रहा। गुरुदेव का इतना प्रेम रहा, जिसे शब्दों में प्रकट नहीं किया जा सकता।''

23 जनवरी, 2022 को ऑनलाइन आयोजित श्रद्धाञ्जलि सभा में संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक आदरणीय श्री पी. मोफतराजजी मुणोत ने भावाभिव्यक्ति करते हुए कहा कि आदरणीय श्री

नथमलजी हीरावत का उन पर बहुत उपकार रहा। वे निर्भीकता पूर्वक सही बात को डाँटकर भी कहने में समर्थ थे। वे सदैव नेक सलाह दिया करते थे। संघाध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया ने आदरणीय श्री नथमलजी हीरावत की पुनीत सेवाओं का स्मरण कर सुपुत्र श्री अमिताभजी हीरावत एवं परिवार के प्रति शुभकामनाएँ व्यक्त की। संघ के पूर्व अध्यक्ष श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफना ने कहा कि वे मेरे धर्मपिता थे। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल में जब वे मन्त्री थे तब मुझे आचार्यश्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की दीक्षाशती एवं पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की दीक्षा अर्द्धशती के आयोजन का दायित्व प्राप्त हुआ उस समय उनका असीम आशीर्वाद मिला। बड़ों का प्रेम एवं स्नेह ही कार्यकर्ता को आगे बढ़ाता है। उन्होंने कह रखा था कि आप कभी भी कहीं रुकावट हो तो कह सकते हो कि मैंने नथमलजी को पूछ लिया है। कार्यकर्ता पर उनका इतना भरोसा था। आदरणीय श्री हरिसिंहजी रांका के साथ आदरणीय श्री हीरावत साहब का घनिष्ठ सम्पर्क रहा और बाद में वे समधि भी बने। श्री हरिसिंहजी रांका ने हीरावत साहब के प्रतिभाशाली एवं आत्मीय व्यक्तित्व की विशेषताओं को रेखांकित किया। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के प्रथम अध्यक्ष, श्रावक संघ के पूर्व उपाध्यक्ष एवं हीरावत साहब के सुपुत्र श्री अमिताभजी हीरावत ने पिताश्री के आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन को अपने भावी जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण सम्बल बताया।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ से प्राप्त संवेदना पत्र में कहा गया कि-''गुरु हस्ती का दिशानिर्देश आपके लिए पत्थर की लकीर होता था। संघ सञ्चालन में आपकी राय एवं मार्गदर्शन विशेष महत्त्वपूर्ण होते थे। आपके निर्देशन एवं प्रेरणा से संघ में कई श्रावक-श्राविकाएँ तैयार हुए जो आज भी संघ सेवा में सक्रिय हैं। संघ समाज को सक्रिय, सक्षम एवं स्वावलम्बी बनाने में आपका महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा। भगवान महावीर के आप सच्चे सिपाही एवं गुरु के प्रति श्रद्धाशील श्रावक थे। विरक्त-विरक्ता, वीर परिवारजनों एवं सन्त-सतियों की सार-सम्भाल में आपकी सक्रियता प्रेरणादायी थी। संघ समाज में विद्वानों, साहित्यकारों, लेखकों, कवियों, समाज सुधारकों, स्वाध्यायियों एवं साधकों का सम्मान बढ़े, इस हेतु आप सदैव प्रयासरत रहे।''

आदरणीय श्री हीरावत साहब की सेवाओं के कारण संघ द्वारा उन्हें सन् 2001 में 'संघरत्न' सम्मान से सम्मानित किया गया। आपकी धर्मसहायिका श्राविकारत्न श्रीमती पदमदेवीजी हीरावत का सहकार आपको सदैव मिलता रहा, इसलिये आप संघ एवं समाज में समय निकाल कर पूर्ण मनोयोग से संलग्न रहे। सुपुत्र श्री अमिताभजी हीरावत के अनुसार श्रद्धेय श्री हीरावत साहब 40 वर्ष की वय में पूर्व निर्णय की अनुपालना में रत्नों के व्यापार से निवृत्ति लेकर स्वाध्याय एवं संघसेवा में संलग्न हो गये थे। ऐसे महामना, संघसेवी, सन्तसेवी व्यक्तित्व को शत-शत प्रणाम।

वे विचारों के धनी एवं इरादों के पक्के थे।

डॉ. जतनराज मेहता

युग पुरुष भारती की महान् विभूति अनन्त शक्ति के धारक महान् उपकारक आचार्य गुरुदेव श्री हस्तीमलजी म.सा. को अनन्त प्रणाम।

श्री नथमलजी हीरावत पूज्य गुरुदेव के परम भक्त थे। एक बार जिनवाणी बन्द होने के कगार पर थी। पूज्य गुरुदेव ने मुझसे कहा-''तू नथमल से मिल।''

मैं हीरावत साहब के पास गया। 10-15 मिनट में सारी स्थिति समझकर जिनवाणी का सम्पूर्ण कार्य भार सम्भाल लिया और वर्षों तक नरेन्द्रजी भानावत के सहयोग से ऊँचाईयों तक पहुँचाते रहे।

श्री हीरावत साहब विचारों के धनी, इरादों के पक्के थे। वे कम बोलते थे, पर जब मौन खोलते थे तो कोई गहरी बात बोलते थे। मेरा उनका आत्मीय सम्बन्ध

शेषांश पृष्ठ 88 पर

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौत्तमचन्द जैन

मन्त्र बड़ो नवकार-लेखक-प्रो. सी. एस. बरला, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-देवेन्द्रराज मेहता संस्थापक एवं मुख्य संरक्षक, प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरु नानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राजस्थान), ISBN No. 978-93-92317-21-7, **प्रथम संस्करण**-2021, **पृष्ठ**-106 + 15 = कुल 121, **मूल्य**-225 रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने नवकार मन्त्र की महिमा बतलाते हुए यह स्पष्ट किया है कि इसको महामन्त्र क्यों कहते हैं? इसका विधि अनुसार श्रद्धा के साथ जाप करने से होने वाले प्रभावों का भी उदाहरणों के साथ वर्णन किया है। लेखक ने अपने स्वयं के जीवन में होने वाले चमत्कारों के साथ में अन्य परिचितों के जीवन में होने वाले चमत्कारों का भी वर्णन किया है। पुस्तक के प्रारम्भ में पाँच महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं के साथ पञ्च परमेष्ठि महामन्त्र का स्वरूप बतलाते हुए उसका माहात्म्य प्रकट किया है। नवकार मन्त्र की साधना एवं उसके ध्यान की विधि स्पष्ट की है। नवकार मन्त्र से सम्बन्धित ऐतिहासिक कथानकों और आधुनिक युग में णमोकार महामन्त्र के प्रभाव से घटित चमत्कारों के प्रसङ्गों का प्रामाणिक सन्दर्भ सहित वर्णन प्रस्तुत किया है। इन प्रसङ्गों को पढ़कर पाठक के मन में सहज ही नवकार मन्त्र के प्रति श्रद्धा के भाव उत्पन्न हो जाते हैं।

पुस्तक के अन्त में लेखक ने स्पष्ट चित्रण किया है कि नवकार मन्त्र के प्रभाव से किस प्रकार से सभी आधि-व्याधि नष्ट हो जाती हैं और विपरीत ग्रहों का प्रभाव समाप्त हो जाता है। वास्तव में हम सभी को नवकार मन्त्र का श्रद्धा के साथ सदैव स्मरण एवं जाप करना चाहिये।

परिशिष्ट पर्व-रचयिता-आचार्य श्री हेमचन्द्र। अनुवादिका-जैन साध्वी कमलप्रभा। **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा-311021, जिला-भीलवाड़ा (राज.), Email swadhyayeesanghgulabpura@gmail.com, फोन 01483-223592, **प्रथम संस्करण**-ईस्वी सन् 2021, **पृष्ठ**-704 + 18 = कुल 722, **मूल्य**-200 रुपये।

आचार्यश्री हेमचन्द्र ने 'त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित' नामक ग्रन्थ में 63 श्लाघनीय पुरुषों का वर्णन करके उसी के परिशिष्ट के रूप में 'परिशिष्ट पर्व' की रचना की। उक्त ग्रन्थ संस्कृत भाषा में पद्य में निबद्ध है। इसका हिन्दी भाषा में अनुवाद साध्वी कमलप्रभाजी ने किया है। इसमें भगवान महावीर के उत्तरकालीन आचार्य परम्परा का वर्णन करते हुए आर्य जम्बूस्वामी से लेकर आचार्य वज्रस्वामी तक के प्रभावक महापुरुषों के जीवनवृत्त का वर्णन किया गया है। साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से यह काव्य ग्रन्थ बहुत महत्त्वपूर्ण है।

प्रस्तुत काव्य ग्रन्थ में 13 पर्व (सर्ग) हैं और 3500 श्लोक हैं। इसमें प्राय: अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग प्रत्येक सर्ग के अन्त में अन्य छन्द प्रयुक्त है। इसकी शैली उदात्त है। उपदेश प्रधान होते हुए भी इसमें प्रवाह एवं प्रसाद गुण उपलब्ध होते हैं। यह एक प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थ है जो भगवान महावीर से लेकर ईसा की प्रथम, द्वितीय शताब्दी तक का भारतीय एवं जैन इतिहास प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम से पाँचवें सर्ग तक जम्बूस्वामी के पूर्वभव, जन्म-विवाह, प्रभव चोर का वर्णन, पत्नियों और प्रभव के साथ जम्बूकुमार का संवाद, सपरिवार प्रव्रज्या, जम्बूस्वामी का निर्वाण तथा प्रभवस्वामी एवं शय्यंभवस्वामी द्वारा शासन-प्रभावना के प्रसङ्गों का भव्य विस्तृत वर्णन किया गया है। छठे से तेरहवें सर्ग तक 8 सर्गों में आचार्य भद्रबाहु, सम्भूतविजय, स्थूलिभद्र आदि से लेकर वज्रस्वामी तक के पट्टधर आचार्यों के जीवनवृत्त एवं उनसे सम्बन्धित कथानकों का समुचित विवरण प्रस्तुत किया गया है।

समकालीन नगर का वर्णन, नन्दवंश का अभ्युदय, शकटाल एवं वररुचि की घटनाएँ, चाणक्य द्वारा नन्दवंश का उन्मूलन एवं मौर्यवंश की स्थापना, सम्राट् बिन्दुसार, अशोक, कुणाल, सम्प्रति आदि प्रमुख राजाओं का वर्णन भी उपलब्ध है। सम्प्रति राजा के द्वारा जैनधर्म के प्रचार-प्रसार के लिए जो कार्य किये गये, उनका भी इसमें उल्लेख हुआ है। आचार्य महागिरि और आर्य सुहस्ती के साथ-साथ अवन्ति सुकुमाल का परिचय वर्णित है। द्वादश सर्ग में आर्य वज्रस्वामी तथा त्रयोदश सर्ग में आर्य रक्षित के चरित्र का वर्णन किया गया है।

साध्वी कमलप्रभाजी ने परिशिष्ट पर्व का गहन अध्ययन कर सुन्दर, सरल एवं सुबोध हिन्दी अनुवाद किया है। अनुवाद की भाषा प्राञ्जल, सहज एवं सुगम है। संस्कृत श्लोकों के सामने के पृष्ठ पर ही क्रमश: हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है, जिससे पाठक को मूल श्लोक को पढ़कर हिन्दी अनुवाद को समझने में सरलता के साथ विशेष आनन्द की अनुभूति होती है। कठिन शब्दों के अर्थ क्रमांक डालकर उसी पृष्ठ पर नीचे दिये गये हैं जो पाठक को मूल श्लोक के अर्थ को समझने में सहायक सिद्ध होते हैं।

साध्वीजी ने कठिन परिश्रम पूर्वक अनुवाद का कार्य सफलतापूर्वक सम्पादित किया है। हिन्दी अनुवाद सभी के लिए पठनीय, आनन्ददायक, ज्ञानप्रद एवं प्रेरणादायक है।

तीर्थङ्करमहावीरचरितमूलक हिन्दी प्रबन्ध काव्य-एक पर्यालोचन-लेखिका-जैन साध्वी कमलप्रभाजी, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा-311021, जिला-भीलवाड़ा (राज.), फोन 01483-223592, **प्रथम संस्करण**-ईस्वी सन् 2021, **पृष्ठ**-488 + 2 = कुल 490, **मूल्य**-300 रुपये।

महासती साध्वी कमलप्रभाजी ने हिन्दी भाषा में रचित तीर्थङ्कर महावीर के 15 चरित काव्यों को लेकर यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। शोध-प्रबन्ध सात अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में महासतीजी ने भारतीय संस्कृति एवं तत्कालीन चिन्तन तथा श्रमण-परम्परा का उल्लेख करते हुए प्राकृत एवं संस्कृत भाषा के काव्यों का परिचय दिया है। द्वितीय अध्याय में भगवान महावीर के पूर्वभव एवं वर्तमानभव के कथानकों के वर्णन में श्वेताम्बर एवं दिगम्बर परम्पराओं के मत-वैभिन्य का भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है। तृतीय अध्याय में तीर्थङ्कर महावीर के चरितों के विभिन्न पात्रों यथा-वर्धमान, सिद्धार्थ, यशोदा और चन्दना का विस्तृत विवेचन हुआ। चतुर्थ अध्याय में काव्य के रस एवं वस्तु-वर्णन से तथा पञ्चम अध्याय शिल्प-विधान से सम्बन्धित है। इसमें भाषा, शैली, प्रतीक योजना, शब्द-शक्तियों, वक्रोक्ति एवं गुण तथा रीतियों का उदाहरण सहित विवेचन प्रस्तुत किया गया है। षष्ठ अध्याय में तीर्थङ्कर महावीर के प्रमुख सिद्धान्तों का विस्तार से निरूपण किया गया है। यथा-ज्ञान, निक्षेप, नय, अनेकान्त और स्याद्वाद, नवतत्त्व, गुणस्थान और पुनर्जन्म आदि। इसी अध्याय में आधुनिक विचार-दर्शनों की भी समीक्षा प्रस्तुत की गई है। अन्तिम सप्तम अध्याय सांस्कृतिक-निरूपण के अन्तर्गत संस्कार-सौन्दर्य, गुरु का महत्त्व, ऋण, नवधा-भक्ति, उत्सव-प्रियता, परिवार-व्यवस्था, वर्णाश्रम-व्यवस्था, अतिथि-सत्कार, नारी के प्रति दृष्टिकोण और मातृ-भूमि की महिमा आदि विभिन्न विषयों का वर्णन किया गया है।

तीर्थङ्कर महावीर को चरित नायक मानकर आधुनिक युग में रचित काव्यों पर आधारित यह ग्रन्थ विज्ञजनों एवं शोधार्थियों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

-पूर्व डी.एस.ओ., 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 72
ISSN 2249-2011

सम्मान

23 जनवरी, 2022 को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की आम सभा में घोषित गुणी-अभिनन्दन-सम्मान

संघ रत्न सम्मान

1. श्री कैलाशचन्द जी हीरावत–जयपुर, वर्ष 2020
2. श्री प्रमोद जी महनोत–जयपुर, वर्ष 2021

आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान

1. डॉ. नरेन्द्रजी भण्डारी–अहमदाबाद

युवा प्रतिभा शोध–साधना–सेवा सम्मान

1. श्री निर्मल जी चोरड़िया–पीपाड़सिटी
2. श्री नमन रूणवाल–बीजापुर

विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान

वरिष्ठ स्वाध्यायी

1. श्री उम्मेदमल जी जैन–जरखोदा
2. श्री राजमल जी संचेती–अमलनेर

वरिष्ठ महिला स्वाध्यायी

1. श्रीमती अनिता जी लुंकड़–जलगाँव
2. श्रीमती कान्ता जी जैन–जयपुर

वरिष्ठ युवा स्वाध्यायी

1. श्री विनोद जी जैन–चेन्नई
2. श्री जिनेन्द्र जी जैन–मुम्बई

गुणी–अभिनन्दन–सम्मान

चिकित्सा सेवा

1. श्री गौवर्द्धन जी पाराशर–जोधपुर

न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमलजी लोढ़ा स्मृति युवा शिक्षा प्रतिभा सम्मान

1. श्रीमती अंशिमा जी भण्डारी–पीपाड़ सिटी

डॉ. बिमला भण्डारी जैन रत्न शोध सम्मान

1. डॉ. रुचि जी जैन–नई दिल्ली
2. श्री कालूराम जी बेनीवाल–दिल्ली
3. जीनत जहाँ जी पठान–जोधपुर
4. डॉ. वीरचन्द्र जी जैन–उदयपुर
5. डॉ. खुशबू जी सिंघवी–जोधपुर

केवलचन्द हीरावत करुणा पुरस्कार

1. श्री उम्मेदमलजी जैन–जयपुर

संघ–सेवा सम्मान

विशिष्ट स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवा

1. डॉ. राकेश जी हीरावत–जयपुर
2. डॉ. शरद जी डागा–जयपुर
3. डॉ. महेन्द्र जी लोढ़ा–जोधपुर
4. भण्डारी हॉस्पिटल–जयपुर
5. श्रीमती श्वेता जी कर्नावट–जोधपुर
6. श्री धर्मेश जी लोढ़ा–चेन्नई

विशिष्ट तपस्या सम्मान

1. श्रीमती बिन्दू जी मेहता–जोधपुर, 150 उपवास की दीर्घ तपस्या।
2. श्रीमती उषा जी लुणावत–अजमेर, 13 वर्षीतप

भामाशाह सम्मान

1. श्री प्रमोद जी महनोत–जयपुर
2. श्री विनोद जी लोढ़ा–जयपुर
3. श्री राजीव जी डागा–ह्युस्टन
4. श्री कस्तुरचन्द जी सुशील जी बाफना–जलगाँव

संघ में अर्थ सहयोग हेतु विशेष प्रयास

1. श्री प्रमोद जी लोढ़ा–जयपुर
2. श्री अनिल जी सुराणा–मुम्बई

विरक्त भाई–बहिनों की सार–सम्भाल

1. श्री अरुणजी मेहता–जोधपुर
2. श्रीमती पुष्पा जी भंसाली–बैंगलोर

विशिष्ट ज्ञानार्जन सम्मान

1. श्री संयम जी मेहता–पीपाड़ सिटी

विशिष्ट बाल प्रतिभा सम्मान

1. श्री रूहान जी मेहता–जोधपुर

कार्यालय सहयोगी सम्मान

1. श्री बसंत कुमार जी, जोधपुर संघ कार्यालय
2. श्री प्रहलाद जी लखेरा–दौसा, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल कार्यालय, जयपुर

संघ सहायक सम्मान

1. श्री रामदीन जी जाखड़

अन्य सेवाओं हेतु सम्मान

1. श्री श्रीचंद जी हींगड़–पाली
2. श्री नवरतन जी बाफना–जोधपुर
3. श्री निपुण जी नमन जी डागा, जयपुर

दीक्षा समारोह आयोजन सम्मान

1. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पीपाड़ सिटी

–धनपत सेठिया, महामन्त्री

जिनवाणी लेखकों का सम्मान

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका जैन समाज की श्रेष्ठ पत्रिकाओं में अग्रगण्य है। इसका श्रेय लेखकों एवं रचनाकारों को जाता है। अत: विगत 4 वर्षों (2018–2021) में जिनवाणी पत्रिका में जिन लेखकों का विशेष योगदान रहा है, उनको पूर्व संघाध्यक्ष एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के **पूर्व अध्यक्ष श्री पी. शिखरमलजी सुराणा, चेन्नई** के सौजन्य से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा सम्मानित किया जाएगा। लेखकों एवं रचनाकारों के नाम निम्न प्रकार से है–

क्र.सं.	लेखक का नाम	लेखन का प्रकार	पुरस्कार राशि
1.	श्री तरुणजी बोहरा 'तीर्थ', चेन्नई	प्रासङ्गिक प्रभावी श्रेष्ठ रचना हेतु	11000/–
2.	डॉ. दिलीपजी धींग, चेन्नई	सतत साहित्य रचना हेतु	11000/–
3.	श्रीमती कमला हणवन्तमलजी सुराणा, जोधपुर	श्रेष्ठ कथा लेखन हेतु	11000/–
4.	श्री मोहनजी कोठारी 'विनर', दुर्ग	श्रेष्ठ काव्य रचना हेतु	11000/–
5.	डॉ. प्रियदर्शनाजी जैन, चेन्नई	अंग्रेजी आलेख हेतु	11000/–
6.	डॉ. चंचलमलजी चोरड़िया, जोधपुर	स्वास्थ्य विषयक आलेख हेतु	11000/–
7.	श्री पदमचन्दजी गाँधी, (थाँवला वाले), जयपुर	सतत साहित्य रचना हेतु	11000/–
8.	श्रीमती निधि दिनेशजी लोढ़ा, वर्ली–मुम्बई	प्रेरक प्रसङ्ग लेख हेतु	5100/–
9.	श्री त्रिलोकचन्दजी जैन (अध्यापक), जयपुर	लेख एवं कविता हेतु	5100/–
10.	श्री धर्मचन्दजी जैन (रजिस्ट्रार), जोधपुर	तत्त्वज्ञान सम्बन्धी लेखन हेतु	5100/–
11.	श्री अंशु संजयजी सुराणा, जयपुर	सतत लेखन हेतु	5100/–
12.	श्री रणजीतसिंहजी कूमट, मुम्बई	श्रेष्ठ आलेख हेतु	5100/–
13.	डॉ. रमेशजी 'मयंक', चित्तौड़गढ़	मुक्तक रचना हेतु	5100/–
14.	डॉ. एच. कुशलचन्दजी जैन	अंग्रेजी शोध आलेख हेतु	5100/–
15.	प्रो. अनेकान्तजी जैन, दिल्ली	चिन्तनपूर्ण आलेख हेतु	5100/–

–अशोक कुमार सेठ, मन्त्री

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 74
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पीपाड़ शहर की धर्मधरा पर पूज्य आचार्यप्रवर की सन्निधि में तप-त्याग, ज्ञान-ध्यान, साधना-आराधना का निरन्तर ठाट

स्थानकवासी परम्परा में रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, व्यसन-मुक्ति के प्रबल प्रेरक, सामायिक-शीलव्रत के संप्रेरक जिनशासन गौरव **आचार्यप्रवर पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी परम श्रद्धेय भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-10 एवं **विदुषी महासती श्री सुशीलाकँवरजी म.सा.** आदि ठाणा सुखे समाधे पीपाड़ में विराजित हैं।

आचार्य भगवन्त की मौन साधना एवं तप आराधना निरन्तर चल रही है। भगवन्त की पावन सन्निधि में सन्त एवं सतियों का तथा भक्तजनों का निरन्तर आवागमन बना हुआ है। दर्शन, वन्दन, मांगलिक-श्रवण, तप-त्याग आदि का लाभ लेकर सभी आत्मविभोर हैं। सन्त-सतीवृन्द की तप आराधना में श्रद्धेय श्री जितेन्द्र मुनिजी म.सा. ने 21 दिन का उपवास 22 दिसम्बर, 2021 को पूर्ण कर उसके पश्चात् 9 दिन का उपवास 17.1.2002 को पूर्ण किया है। महासती श्री ऋद्धिप्रभाजी म.सा. ने 10 दिन का उपवास कर अपनी श्रद्धा-भक्ति गुरु चरणों में अर्पित की एवं अन्य सन्त सतीवृन्द द्वारा भी तेला, बेला आदि की अन्य तपस्याएँ की गई।

पौष शुक्ला चतुर्दशी 16 जनवरी, 2022 को अध्यात्म योगी, युगमनीषी पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का 112वाँ जन्म दिवस, मारवाड़ की धरा पीपाड़ शहर में बड़े ही उत्साह, उमङ्गपूर्वक सामायिक-साधना, व्रत-नियम उपवास, एकाशन आदि तपाराधना के साथ मनाया गया। प्रवचन में प्रतिपल स्मरणीय आचार्य भगवन्त के गुणों का गुणानुवाद करते हुए **श्रद्धेय श्री अशोक मुनिजी म.सा.** ने कहा कि आचार्य पूज्य गुरुहस्ती सर्वश्रेष्ठ चारित्र धर्म की विशुद्ध पालना में सजग रहते थे, इसलिए उन्हें चारित्र चूड़ामणि कहा जाता था। **श्रद्धेय गुणवन्त मुनिजी म.सा.** ने अपने भजन के माध्यम से भाव प्रकट किये।

महासती श्री पूनमजी म.सा. ने भाव फरमाये कि पूज्य गुरु हस्ती सभी के नयनों के आनन्द केन्द्र थे तथा उनका जीवन साधना की सुगन्ध से परिपूरित था। **महासती श्री सिद्धिप्रभाजी म.सा.** ने अपने हृदयोद्गार व्यक्त कर फरमाया कि सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक पूज्य गुरु हस्ती समय के प्रति सजग, मौन प्रिय, अल्पभाषी एवं अप्रमत्त साधक थे। **महासती श्री चैतन्यप्रभाजी म.सा.** ने भी बड़े ही मार्मिक शब्दों में परमाराध्य पूज्य गुरु हस्ती के गुण वर्णन किये। **विदुषी महासती श्री सुशीलाकँवरजी म.सा.** ने माँ रूपा के नन्दन, केवल कुल के चन्दन, ऐसे गुरु हस्ती को वन्दन करते हुए गुरु हस्ती को साधना का बेजोड़ संगम बताया। श्रद्धेय श्री यशवन्त मुनिजी म.सा. ने फरमाया ''न जन्म की महिमा है, न मरण की महिमा है, महिमा तो संयम जीवन की है।''

महान् अध्यवसायी **भावी आचार्य श्रद्धेय श्री महेन्द्र मुनिजी म.सा.** ने फरमाया कि गुरु हस्ती सभी के पथ प्रदर्शक थे, उनका जीवन दर्पण के समान पारदर्शी था। उन्होंने अपनी प्रेरणा, वात्सल्य एवं स्नेह से अनेक जीवों को बोध प्रदान किया। उनकी जय-जयकार करने के साथ-साथ उनके गुणों को भी अपने जीवन में उतारकर क्रियान्वित करें।

9 जनवरी, 2022 को शान्त-दान्त-गम्भीर श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. की

द्वितीय पुण्य तिथि एवं 22 जनवरी, 2022 को जन्म दिवस तप-त्याग, सामायिक-साधना, उपवास, एकाशन आदि तपाराधना के साथ गुणानुवाद करते हुए मनाये गए।

प्रवचन सभा में **महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.** ने उपाध्याय श्री को उपकारी एवं वात्सल्यमय बताते हुए उनके गुणों को अपने जीवन में उतारने की प्रेरणा दी। **महासती श्री पुष्पलताजी म.सा.** ने फरमाया कि उपाध्यायप्रवर गुरु हस्ती के प्रति पूर्ण समर्पित थे। उनकी विशेषता No Choice (पसन्द नहीं) No Voice (आवाज नहीं, मौन) No फरमाईश (कोई इच्छा नहीं) थी। श्रद्धेय श्री उपाध्यायप्रवरजी की अग्लान भाव से सेवा करने वाले **श्रद्धेय श्री जितेन्द्र मुनिजी म.सा.** ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में गुणानुवाद करते हुए श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर का जीवन निर्मल, निश्छल एवं अविचल बताया। **श्रद्धेय श्री यशवन्त मुनिजी म.सा.** ने फरमाया कि गुरु के बिना मोक्ष मार्ग की प्राप्ति नहीं होती है। इसलिए उपाध्याय प्रवर का जीवन गुरु के प्रति विनय एवं समर्पण भाव से समर्पित था।

20 जनवरी, 2022 को महासती श्री सुदर्शनाजी म.सा. का जयपुर में देवलोक गमन होने पर चार-चार लोगस्स का काउस्सग्ग किया गया एवं 21 जनवरी, 2022 को सन्त-सतीवृन्द द्वारा उनके संयम-जीवन का गुणानुवाद किया गया तथा पिछली उम्र में भी जो संयम ग्रहण करता है, वह या तो मोक्ष प्राप्त कर लेता है या देवगति का अधिकारी बन जाता है, ऐसा फरमाया।

नित्य के प्रवचन में **श्रद्धेय श्री अशोक मुनिजी म.सा.** एवं **श्रद्धेय श्री यशवन्त मुनिजी म.सा.** के द्वारा विभिन्न विषयों पर तात्त्विक एवं मार्मिक प्रवचन फरमाया जा रहा है तथा भावी आचार्यश्री के द्वारा भी यथाप्रसङ्ग प्रवचन एवं महापुरुषों के जीवन का दिग्दर्शन कराया जा रहा है।

स्थानीय श्रावक एवं श्राविकाओं द्वारा आचार्य भगवन्त की सन्निधि में एकान्तर, संवर आदि तप चातुर्मास के बाद भी निरन्तर चल रहे हैं। इसी क्रम में **श्रीमती सन्तोषजी धर्मपत्नी श्री नितेशजी कटारिया ने 33 दिवस की तपस्या पूर्ण की है तथा युवारत्न श्री अखिलजी लुणावत, मन्त्री-युवक परिषद्, पीपाड़ पिछले कई महीनों से 19 वर्ष की आयु में एकान्तर तप कर रहे हैं** एवं नियमित रात्रि संवर-साधना कर रहे हैं, साथ ही युवक परिषद् सहमन्त्री, पीपाड़ शाखा भी संवर-साधना में बढ़ रहे हैं।

पीपाड़ श्री संघ में श्रावक संघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद्, बालिका मण्डल सभी सेवा-सम्भाल व्यवस्था, आतिथ्य सत्कार एवं विहार सेवा इत्यादिक सभी प्रक्रमों में अथक संलग्न हैं। दर्शन-वन्दन-मांगलिक श्रवण एवं साधना-आराधना हेतु श्रद्धालुओं का आवागमन निकटवर्ती एवं दूरवर्ती क्षेत्रों से नियमित बना हुआ है। वीर भ्राता-श्री प्रेमचंदजी गाँधी के देवलोक गमन उपरान्त गाँधी परिवार, पूज्य आचार्य भगवन्त की सेवा में मांगलिक श्रवण हेतु उपस्थित हुआ, हीरादेसर के लोढ़ा वीरपरिवारजन एवं संघ हितैषी समर्पित सुश्रावक श्री प्रसन्न चन्दजी बाफना अपनी धर्म सहायिका के देवलोक गमन होने के उपरान्त सपरिवार मांगलिक श्रवणार्थ आये तथा अन्य और भी गुरु भक्त परिवार मांगलिक श्रवणार्थ आये। जलगाँव से वीरपिता श्री राजेशजी जैन सपरिवार, नदबई से वीर पिता श्री टीकमचन्दजी जैन गुरु चरण सन्निधि में पधारे। *-गिरराज जैन*

आचार्यश्री हस्ती का 112वाँ जन्मदिवस एवं मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी म.सा. का 36वाँ स्मृति दिवस तप-त्याग से मनाया गया

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी महाराज साहब का 112वाँ जन्मदिवस एवं मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी महाराज साहब का 36वाँ पुण्य-स्मृति दिवस पौष शुक्ला चतुर्दशी 16 जनवरी, 2022 को सम्पूर्ण देश में एवं कहीं विदेश में भी तप-त्याग, धर्म-साधना एवं गुणगान के साथ मनाया गया। कहीं आचार्यप्रवर एवं सन्तप्रवरों के

सान्निध्य में तथा कहीं महासती मण्डल के सान्निध्य में और कहीं श्रावक-श्राविकाओं ने अपने स्तर पर इस दिवस को आत्म-साधना एवं गुणग्रहण की भावना से सार्थक किया।

बालोतरा-भैरुलाल जीरावला कम्पाउण्ड में श्री जैन रत्न युवक परिषद एवं श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल के संयुक्त तत्त्वाधान में आयोजित विशेष कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के रूप में गुरुहस्ती कल्याण संस्थान के मन्त्री श्री ओमप्रकाशजी बाँठिया ने आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज साहब के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि-पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी महाराज के सभी सम्प्रदायों के साथ मधुर सम्बन्ध रहे। विशेषकर आचार्य श्री जवाहर लालजी महाराज साहब, आचार्य श्री गणेशी लालजी महाराज साहब, बहुश्रुत पंडित समर्थमलजी महाराज साहब, श्रमण संघ के आचार्य श्री आनन्दऋषिजी महाराज साहब के प्रेरणा प्रसङ्गों का भी उन्होंने उल्लेख किया। खरतरगच्छ की परम विदुषी साध्वी श्री विचक्षणश्रीजी एवं अन्य सम्प्रदायों के साधुओं एवं आचार्यों के साथ उन्होंने जैनधर्म की एकता तथा भगवान महावीर के सन्देशों को प्रसारित करते हुए सामायिक स्वाध्याय की प्रबल प्रेरणा, इतिहास, साहित्य की अनमोल रचना सहित 71 वर्ष के दीक्षा पर्याय एवं 61 वर्ष तक आचार्य पद को सुशोभित करते हुए जिन शासन की अपूर्व प्रभावना की। मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी महाराज ने सामाजिक चेतना एवं धार्मिक संस्कारों को गति प्रदान की। कार्यक्रम में आशुकवि कमलेश चौपड़ा ने प्रेरक गीतिका, श्राविका मण्डल अध्यक्ष मनीषा देवी भंसाली, शोभा देवी चोपड़ा, टीना जैन, मुकनचन्द भंसाली ने गुण गान रचनाएँ प्रस्तुत की। कार्यक्रम में विशेष रूप से दानदाता भेरूलाल, महेंद्र कुमार, भरत कुमार धीरज कुमार जीरावला परिवार द्वारा श्रीमती सोहनी देवी की पुण्य स्मृति में भूमि खरीद कर उस पर भव्य **स्वाध्याय भवन के निर्माण के सन्दर्भ पर परिवार का विशेष सम्मान किया गया।** कार्यक्रम में प्रश्नोत्तरी, गीत एवं निबन्ध प्रतियोगिता के विजेताओं को भी पुरस्कृत किया गया।

-ओमप्रकाश बाँठिया

चेन्नई-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में स्वाध्याय भवन, साहूकारपेट में चौथे तीर्थंकर भगवान अभिनन्दनजी का केवलज्ञान कल्याणक, जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा का जन्मदिवस, मरुधरकेसरी श्री मिश्रीमलजी म.सा की 38वीं पुण्यतिथि एवं जयमलसंघ के आचार्यश्री पार्श्वचन्दजी म.सा के 74वें जन्म दिवस को सामायिक स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया गया। स्वाध्यायी श्री महावीरचन्दजी तातेड़, श्री गौतमचन्दजी मुणोत ने तीर्थंकर और महापुरुषों के जीवन पर अपनी रचनाएँ सुनाते हुए गुणगान रूप में भाव प्रकट किए। वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री चम्पालालजी बोथरा ने महापुरुषों के जीवन के अनेक रोचक संस्मरण बताये। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ तमिलनाडु के प्रचार-प्रसार सचिव आर. नरेन्द्रजी कांकरिया ने श्रमण सूर्य श्री मिश्रीमलजी म.सा. के जीवन-चरित्र पर प्रकाश डालते हुए प्रतिपल स्मरणीय आचार्य भगवन्त पूज्यश्री हस्तीमलजी म.सा के श्रावकों और गृहस्थों की जीवनशैली हेतु कर्त्तव्यों और सुन्दर प्रेरणाओं का उल्लेख करते हुए तीर्थंकर एवं महापुरुषों के गुणगान किये। श्री रूपराजजी सेठिया, श्री के. प्रकाशचन्दजी ओस्तवाल, श्री जे. इन्दरचन्दजी कर्णावट और श्री जे. अम्बालालजी कर्णावट ने महापुरुषों के जीवन पर गुणगान रूप में सामूहिक स्तुति की। सभी उपस्थित श्रदालुओं ने सामूहिक व्रत-प्रत्याख्यान किए।

-आर. नरेन्द्र कांकरिया

सवाईमाधोपुर-साधना भवन, महावीर नगर, सवाईमाधोपुर में पूज्य गुरुदेव का जन्मदिवस तप-त्यागपूर्वक मनाया गया। श्रावक-श्राविकाओं द्वारा एकाशन, उपवास, एकल ठाणा, आयम्बिल एवं सामायिक-स्वाध्याय की साधना की गई। कई श्रावक-श्राविकाओं ने गुरु हस्ती के अमर गुणों का बखान कर संस्मरण सुनाये तथा गुरुदेव के संयमी जीवन पर प्रकाश डाला।

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा. की सन्निधि में दूदू के पश्चात् जयपुर में धर्मसाधना एवं तपाराधना के विविध प्रसङ्ग

जयपुर-आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी महाराज साहब के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी महाराज साहब आदि ठाणा के दूदू विराजने पर स्थानीय लोगों ने सन्तों के समागम से जिस उत्साह और रुचि के साथ प्रवचन, सन्त-सेवा और आतिथ्य-सत्कार का लाभ लिया वह अपने आप में एक आदर्श उदाहरण था। प्रवचन के समय में प्रतिष्ठान बन्द रखने से बच्चे से लगाकर बुजुर्ग तक ने प्रवचन में बड़ी एकाग्रता के साथ लाभ लेकर एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया। आचार्यप्रवर के संकेतानुसार श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी महाराज साहब आदि ठाणा-3 ने जयपुर की ओर ज्योंही विहार के क़दम बढ़ाए, देखते ही देखते प्रतिदिन विहार-सेवा में युवाओं ने बड़ी तत्परता के साथ लाभ लिया। सर्दी का प्रकोप था, मगर सन्त-सेवा के लाभ में सर्दी भी गौण थी। विहार क्रम में मुनिप्रवर 8 जनवरी को राधानिकुञ्ज पधारे, और अगले दिन 9 जनवरी को पूज्य उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. की पुण्यतिथि का प्रसङ्ग होने से शहर से, आस-पास के उपनगरों से लगभग 400-450 लोगों ने तीन-तीन सामायिक कर प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया और सन्तों में भी श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी, श्रद्धेय श्री अविनाशमुनि जी म.सा. ने कई सारे रोचक प्रसङ्ग सुनाकर उपाध्याय भगवन्त के जीवन को जीवन्त कर दिया। श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. ने उपाध्याय भगवन्त के सम्बन्ध में फरमाया कि वे प्रत्युत्पन्न मति के धनी थे तथा निस्पृह साधक थे। रत्नसंघ के आचार्य का मनोनयन होने के पूर्व उनसे प्रमुख श्रावक द्वारा पृच्छा की गयी तो फरमाया कि मुझे उपाधि नहीं समाधि चाहिये। होलनांथा से मारवाड़ की ओर विहार करते समय मेरे स्थान पर जब तत्त्वचिन्तक प्रमोदमुनिजी म.सा. उनके साथ रहे तब उपाध्याय भगवन्त बोले इञ्जन बदल गया है। उपाध्याय भगवन्त के भीलवाड़ा एवं दिल्ली के चातुर्मास ऐतिहासिक रहे। बाबाजी श्री जयन्तमुनिजी म.सा. की आपने अग्लान भाव से सेवा की। उपाध्याय भगवन्त के प्रेरक वचनों के आधार पर चर्चा करते हुए फरमाया कि उपाध्याय भगवन्त फरमाया करते थे-''अप्रभावना से बचते रहना ही सच्ची प्रभावना है।'' इस दिन तीन से लेकर पाँच सामायिक की साधना एवं एकाशन व्रत किये गये।

राधानिकुञ्ज के श्रावकों ने सभी आगन्तुकों के आतिथ्य सत्कार का लाभ लिया। राधानिकुञ्ज में धर्म प्रभावना कर मुनि श्री शिवशक्तिनगर विराजे, जहाँ प्रवचन के साथ धर्मनिष्ठ सुश्रावक स्व. श्री रामदयालजी सर्राफ, सवाईमाधोपुर के समस्त परिवार ने आतिथ्य-सत्कार के साथ धर्मसेवा का लाभ लिया, वह भी एक अनुकरणीय और प्रशंसनीय सत्कर्म था।

यहाँ से विहार कर 13 जनवरी को महावीर नगर स्थित स्वाध्याय-भवन पधारे। मुनिश्री के आगमन की सूचना पाते ही शहर एवं आस-पड़ौस के लोगों की सन्त दर्शन-वन्दन हेतु बड़ी चहल-पहल रही। मुनिश्री ने यहाँ प्रवचन सभा में उपस्थित लोगों को स्मरण कराते हुए आह्वान किया कि पौषशुक्ला चतुर्दशी, 16 जनवरी को गुरु हस्ती का 112वाँ जन्मदिवस है,अतः तीन-तीन सामायिक, एकाशन, 112 पौषध-संवर होने चाहिए। मुनिश्री ने बात को स्पष्ट करते हुए फरमाया कि लोग देवी-देवता के नाम पर सवामणि करते हैं, देवता नहीं खाते, पर उनके निमित्त से लोग अपना पेट भरते हैं, ठीक इसी तरह महापुरुषों के पुण्य प्रसङ्ग पर किए गए धर्म का लाभ हमें ही मिलेगा। इसलिए इस लाभ से कोई वञ्चित न रहे। कहना होगा कि रविवार होने से सरकारी लॉकडाउन के बावजूद भी लोगों ने जिस श्रद्धा-भक्ति का परिचय दिया, उससे प्रवचन में सामायिक व्रत के साथ विशाल संख्या, तो रात्रिकालीन संवर और पौषध की संख्या भी आह्वान के अतिरिक्त ही हुई। इस पावन प्रसङ्ग पर सन्तों ने जिसमें श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा. ने गुरु हस्ती के महिमा का संगान करते हुए अनेक प्रसङ्गों का जिक्र किया तो साथ ही श्रद्धेय श्री अविनाशमुनिजी म.सा. ने महानता का दिग्दर्शन कराते हुए उनकी अप्रमत्तता का विशेष उल्लेख किया।

इसी क्रम में श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने गुरु हस्ती की विशेषताओं का चित्रण करते हुए फरमाया कि आप और हम सब भाग्यशाली हैं कि हमें अच्छे और सच्चे गुरु का सान्निध्य प्राप्त हुआ। क्योंकि गुरु हस्ती महावीर की परम्परा के वीर थे, गौतम की परम्परा के लब्धिधारी थे, जम्बू की परम्परा के वैराग्यवान थे, स्थूलिभद्र की परम्परा के शीलवन्त थे और लोकाशाह की परम्परा के धर्म प्रभावक थे। उनका सम्पूर्ण जीवन कीर्तिमानों का अविस्मरणीय दस्तावेज रहा। एकाशन व्रत की व्यवस्था महावीर नगर संघ की ओर से की गई। महावीर नगर से विहार कर मुनिश्री जय-जवान कॉलोनी होते हुए आचार्य श्री हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, बजाज नगर पधारे, जहाँ बच्चों के बीच में मुनिश्री ने विशाल उपस्थिति में प्रवचन फरमाया और जीवन के सर्वांगीण विकास की प्रेरणा देते हुए आत्मानुशासन, एकाग्रता आदि सूत्रों पर विशद चिन्तन करते हुए प्रेरक उद्बोधन फरमाया। उपस्थित बच्चों ने भी पूरे दिन गुरुभक्ति का परिचय देते हुए संवर, सामायिक-प्रतिक्रमण के साथ सन्तों की सन्निधि में धर्माराधना की। यहाँ से विहार कर सन्त भगवन्त रत्नस्वाध्याय भवन में पधारे। यहाँ से 30 जनवरी को विहार कर श्री विनयचन्दजी कोठारी के सी-स्कीम स्थित आवास पर होते हुए 31 जनवरी को लाल भवन, चौड़ा रास्ता पधारे। मुनिश्री का विहार आगे दौसा, महुआ, हिण्डौन की तरफ होने की सम्भावना है। *-सुरेशचन्द कोठारी, मन्त्री*

संघ की सञ्चालन समिति, कार्यकारिणी बैठक तथा वार्षिक आमसभा ऑनलाइन सम्पन्न

न्यायमूर्ति श्री प्रकाश जी टाटिया पुनः राष्ट्रीय अध्यक्ष मनोनीत

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की सञ्चालन समिति एवं कार्यकारिणी की संयुक्त बैठक 22 जनवरी, 2022 को राष्ट्रीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री प्रकाश जी टाटिया की अध्यक्षता में ऑनलाइन जूम मीटिंग के माध्यम से सफलातपूर्वक आयोजित हुई। 23 जनवरी, 2022 को संघ एवं संघीय संस्थाओं की संयुक्त आमसभा भी आयोजित हुई। जिसमें संघ संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत ने संघ के आगामी कार्यकाल में राष्ट्रीय अध्यक्ष हेतु वर्तमान **राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाश जी टाटिया-जोधपुर** का नाम प्रस्तावित किया, जिसका आमसभा ने अनुमोदन किया। साथ ही सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के **अध्यक्ष पद पर श्री आनन्द जी चौपड़ा-जयपुर,** अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल के **अध्यक्ष पद पर श्रीमती अलका जी दुधेड़िया-अजमेर** तथा अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के **अध्यक्ष पद पर श्री विवेक जी लोढ़ा-जयपुर** की घोषणा हुई। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

मानसरोवर-जयपुर में छात्राओं के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्रा संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्रा के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान (बालिका), जयपुर, संघ और समाज की प्रतिभाशाली छात्राओं के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 2017 से सञ्चालित संस्था है। यहाँ इस संस्था में वर्तमान में 40 अध्ययनरत छात्राओं को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की निःशुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जा रही हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्राओं को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं इन बालिकाओं के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्राओं के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में तथा उनके संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं–

1. श्री मोहनलालजी, सुमेरचन्दजी चोरड़िया, इन्दौर 49000/-
2. श्रीमती चंचलकँवरजी भण्डारी धर्मसहायिका स्व. डॉ. मोहनराजजी भण्डारी, जयपुर 48000/-
3. श्री चंचलमलजी बच्छावत, कोलकाता, निवर्तमान अध्यक्ष–सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल 25000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्राँजेक्शनस्लिप अथवा जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:–Name : ***SAMYAGGYAN PRACHARAK MANDAL***, Account Type : *Saving*, Account Number : ***51026632997***, Bank Name : *SBI*, Branch : Bapu Bazar, Jaipur, Ifsc Code : SBIN0031843 **निवेदक :** अशोक कुमार सेठ, मन्त्री। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क फोन नं. अनिल जैन 9314635755

राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाश जी टाटिया द्वारा कतिपय संघ पदाधिकारियों का मनोनयन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के नवनिर्वाचित राष्ट्रीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री प्रकाश जी टाटिया ने अपनी कार्यकारिणी का गठन करते हुए कतिपय पदों पर निम्नाङ्कित घोषणा की है–

कार्याध्यक्ष	–	श्री मनीष जी मेहता, जयपुर
महामन्त्री	–	श्री धनपत जी सेठिया, जोधपुर
संयुक्त महामन्त्री	–	श्री प्रकाश जी सालेचा, जोधपुर
कोषाध्यक्ष	–	श्री महेन्द्र जी कुम्भट, मुम्बई
संयुक्त कोषाध्यक्ष	–	श्री लोकेन्द्रनाथ जी मोदी, जोधपुर

-धनपत सेठिया, महामन्त्री

विद्यार्थियों के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी
छात्र संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना
(प्रतिवर्ष एक छात्र के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, (सिद्धान्त शाला) जयपुर, संघ व समाज के प्रतिभाशाली छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 1973 से सञ्चालित संस्था है। इस संस्था से अब तक सैकड़ों विद्यार्थी अध्ययन कर प्रशासकीय, राजकीय एवं प्रोफेशनल क्षेत्र में कार्यरत हैं। अनेक छात्र व्यावसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं। समय-समय पर ये संघ-समाजसेवी कार्यों में निरन्तर अपनी सेवाएँ भी प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान में भी यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जाती हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्रों को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। वर्तमान में संस्थान में 71 विद्यार्थियों के लिए अध्ययनानुकूल व्यवस्थाएँ हैं। संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं इन बालकों के लिए समुचित अध्ययननाकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्रों के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में बालकों के संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है–

25. श्री जम्बुकुमारजी जैन (बगावदा वाले), मुख्य लेखाधिकारी, भूजल विभाग जयपुर मानसरोवर-जयपुर (पूर्व छात्र) 24,000/-

26. श्री अमितजी जैन (गंगापुरसिटी वाले), कोटा 24,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्रॉंजेक्शनस्लिप अथवा जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***GAJENDRA CHARITABLE TRUST***, Account Type : *Saving*, Account Number : ***10332191006750***, Bank Name : *Punjab National Bank*, Branch : Khadi Board, Bajaj Nagar, Jaipur, Ifsc Code : PUNB0103310, Micr Code : 302022011, Custumer ID : 35288297 **निवेदक :** डॉ. प्रेमसिंह लोढ़ा (व्यवस्थापक), सुमन कोठारी (संयोजक), अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें-दिलीप जैन 'प्राचार्य' 9461456489, 7976246596

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा द्वारा कतिपय मण्डल पदाधिकारियों का मनोनयन

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के नवीन अध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा ने अपनी कार्यकारिणी का गठन करते हुए कतिपय पदों पर निम्नाङ्कित घोषणा की है-

कार्याध्यक्ष	::	श्री विनयचन्दजी डागा, जयपुर
कार्याध्यक्ष	::	डॉ. धर्मचन्दजी जैन, जयपुर
मन्त्री	::	श्री अशोक कुमारजी सेठ, जयपुर
कोषाध्यक्ष	::	श्री रितुलजी पटवा, जयपुर

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री

शिक्षण बोर्ड की आगामी परीक्षा 17 जुलाई, 2022 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षा 1 से 12 तक की आगामी परीक्षा **17 जुलाई, 2022** रविवार को **दोपहर 12.30 से 3.30 बजे** तक आयोजित की जाएगी।

1. परीक्षा, ज्ञान वृद्धि का प्रमुख साधन है। क्रमबद्ध एवं सही ज्ञान ही व्यक्ति को हित-अहित की जानकारी कराता है। अत: ज्ञान बढ़ाने एवं सुसंस्कार पाने हेतु आप स्वयं भी परीक्षा दें तथा अन्य भाई-बहनों को भी परीक्षा में भाग लेने की प्रभावी प्रेरणा कर धर्म दलाली का लाभ प्राप्त करें।
2. कम से कम 10 परीक्षार्थी होने पर परीक्षा केन्द्र नया प्रारम्भ किया जा सकता है।
3. परीक्षा से सम्बन्धित आवेदन-पत्र, पुस्तकें, शिक्षण बोर्ड कार्यालय से प्राप्त की जा सकती हैं।
4. सभी उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को प्रोत्साहन पुरस्कार एवं मेरिट में आने वालों को विशेष पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।
5. परीक्षा में भाग लेने हेतु आवेदन-पत्र भरकर जमा कराने की अन्तिम तिथि 17 जून, 2022 है। नियत समय में आवेदन-पत्र जमा कराना अनिवार्य है।

परीक्षा सम्बन्धी अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें-अशोक बाफना 9444270145 (संयोजक), सुभाषचन्द्र नाहर 9413202678 (सचिव) शिक्षण बोर्ड कार्यालय-सामायिक स्वाध्याय भवन, नेहरुपार्क,

जोधपुर-342003 (राज) 291-2630490, व्हाट्सएप्प नं. 7610953735 Website : jainratnaboard.com, E-mail: shikshanboardjodhpur@gmail.com

संक्षिप्त समाचार

चेन्नई-जैन हिस्टोरिकल मोनुमेंट रेस्टोरेशन एंड प्रिजर्वेशन ट्रस्ट, चेन्नई, तमिलनाडु द्वारा जैनियों की समृद्ध विरासत की रक्षा करने, भगवान महावीर की शिक्षाओं के बारे में युवाओं में जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से 4 जनवरी, 2022 को आयोजित पहली बैठक में पूर्व अल्पसंख्यक आयुक्त एवं आई.ए.एस. श्री वल्लालरजी ने अपने सम्बोधन में कहा कि स्वतन्त्रता संग्राम में महात्मा गाँधी ने भगवान महावीर के सिद्धान्त अहिंसा तथा जियो और जीने दो का पालन किया। **मुझे इस बात का दुःख है कि वर्तमान समय में जैनदर्शन से जुड़े व्यक्ति भगवान महावीर के सिद्धान्तों के प्रचार की तुलना में मूर्तियों को स्थापित करने में अधिक रुचि रखते हैं।** वर्तमान समय में संसार को शान्तिपूर्ण, सौहार्दपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए भगवान महावीर के सिद्धान्तों का अक्षरशः पालन करने की आवश्यकता है। आगे कहा कि जैन युवाओं और अन्य व्यक्तियों को जैनदर्शन की समृद्ध विरासत, सिद्धान्तों एवं संस्कृति के बारे में महाकाव्यों और कहानियों के माध्यम से शिक्षित किया जाना चाहिए।

संस्थापक ट्रस्टी श्री मोहनजी जैन ने ट्रस्ट के कार्यों की रूपरेखा स्पष्ट करते हुए कहा कि जैन स्मारकों, साहित्य और संस्कृति के संरक्षण की दिशा में ट्रस्ट की ओर से पहला क़दम उठाया गया है। अल्पसंख्यक आयोग के सदस्य श्री प्रवीणजी टाटिया ने धन्यवाद ज्ञापित किया। बैठक में श्री सुगालचन्दजी जैन, श्री एम.के. जैन, श्री राजेन्द्र प्रसादजी जैन, श्रीमती वासुकीजी, श्रीमती शान्तिबाईजी, श्री जीवाजी, श्री मनोज कुमारजी, श्री कमलजी एवं अनेक गणमान्यजनों ने भाग लिया।

-सुगालचन्द जैन

नोखामण्डी-आचार्य श्री रामेश के आज्ञानुवर्ती शासनदीपक श्री संजयमुनिजी म.सा. के सान्निध्य में 161 उपवास की दीर्घ तपस्या कर श्रीमती हेमलता-प्रदीपजी बाँठिया ने अपूर्व आत्मशक्ति का परिचय दिया। जिनशासन एवं संघ की गौरव गरिमा में चार चाँद लगा दिये। सकल जैन समाज एवं साधुमार्गी जैन संघ ने तपस्विनी हेमलता की दीर्घ तपस्या पर शानदार अभिनन्दन किया। पूर्व में भी आपने अनेक तपस्याएँ कर कीर्तिमान स्थापित किया है।

-महेश नाहटा

बधाई

जयपुर-सुश्री डॉ. अर्पिताजी जैन सुपुत्री डॉ. अभय कुमारजी-डॉ. चन्द्रकान्ताजी सुपौत्री श्री धर्मीचन्दजी-श्रीमती

कमलादेवीजी नाहर को महात्मा गाँधी मेडिकल कॉलेज एवं यूनिवर्सिटी में एम.एस. (स्त्री रोग विशेषज्ञ) में उच्चतम अंक प्राप्त करने पर यूनिवर्सिटी के चतुर्थ दीक्षान्त समारोह में गोल्ड मेडल से सम्मानित किया गया। नाहर परिवार धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में सदैव अग्रणी रहा है।

-अशोक कुमार सेठ

जयपुर-डॉ. प्रीतिजी (वरिष्ठ अध्यापिका संस्कृत) धर्मसहायिका श्री गौरव कुमार जी जैन को जैन विश्व भारती

विश्वविद्यालय, लाडनूँ ने अपने शोध प्रबन्ध 'औपपातिकसूत्र पर अभयदेवसूरिकृत संस्कृत टीका : समीक्षात्मक अध्ययन' के लिए डाक्ट्रेट की उपाधि प्रदान की है। आपने अपना शोध कार्य डॉ. समणी संगीत प्रज्ञाजी के निर्देशन में पूर्ण किया है।

-राहुल जैन

जयपुर-तपस्वीराज श्री नवरतनमलजी लूँकड़ की सुपौत्री सुश्री ख्यातिजी जैन सुपुत्री श्री राजेशजी-श्रीमती रेखाजी जैन

र्ष की आयु में प्रथम प्रयास में सी.ए. परीक्षा जनवरी, 2022 में उत्तीर्ण की है। इससे पूर्व राजस्थान विश्वविद्यालय से बी.कॉम की परीक्षा 72% से तथा एम.कॉम की परीक्षा 69% अंकों से उत्तीर्ण की है और वर्तमान में ऑडिट कम्पनी डिलाइट में कार्यरत है।

मुम्बई-श्री निक्षय जैन पुत्र श्रीमती करिश्माजी (B. Com)-श्री प्रशांतजी जैन (CA & CS) का आई.आई.टी.- जे.ई.ई. 2021 (IIT-JEE 2021) पास करने के बाद भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई.आई.टी.), मद्रास-चेन्नई में चयन हुआ। आपने आई.सी.एस.ई. दसवीं बोर्ड परीक्षा, 2019 (ICSE 2019 X Board) में 98.20 फीसदी अंक हासिल कर अपने परिवार को गौरवान्वित किया।

श्रद्धाञ्जलि

महासती श्री सुदर्शनाजी म.सा. का समाधिभाव में देवलोकगमन

जयपुर-परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. की सुशिष्या महासती श्री सुदर्शनाजी म.सा. का माघ कृष्णा द्वितीया विक्रम सम्वत् 2078 दिनांक 20 जनवरी, 2022 को जयपुर के महारानी फार्म स्थित उत्तम स्वाध्याय भवन में दोपहर 12.30 बजे समाधि भावों में देवलोकगमन हो गया एवं निकटस्थ मोक्षधाम में पार्थिव देह का अन्तिम संस्कार किया गया। उन्होंने कार्तिक शुक्ला पञ्चमी विक्रम सम्वत् 2069 दिनांक 18 नवम्बर, 2012 को उज्जैन में विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. की सन्निधि में 76 वर्ष की वय में प्रव्रज्या पथ अङ्गीकार किया था। 9 वर्ष से अधिक निरतिचार संयम पर्याय का पालन करते हुए आप स्वाध्याय एवं तप में लीन रहीं। आपने चार-पाँच वर्षों तक एकान्तर तप-साधना भी की तथा दिनभर प्रत्याख्यान करती रहती थीं। वे दृढ़ संकल्प की धनी थीं। वृद्धावस्था में जहाँ गर्मी, सर्दी अधिक लगती है, सहनशीलता कम होती है, उस आयु में आपने संयम ग्रहण कर महान् पुरुषार्थ किया एवं जीवन को सार्थक किया।

गृहस्थ जीवन में आपने 40 वर्ष की वय में इस संकल्प के साथ शक्कर के सेवन का त्यागकर दिया था कि जब तक दीक्षा अङ्गीकार नहीं करूँगी तब तक शक्कर का सेवन नहीं करूँगी। महासतीजी ने समाधिभावों में सहजता से प्रयाण किया। लगभग डेढ़ माह पूर्व उनके कमर की हड्डी में फ्रेक्चर हो गया था। ऑपरेशन के पश्चात् चलने-फिरने की स्थिति नहीं हो पाई थी, किन्तु उससे पूर्व अपना कार्य स्वयं करने का प्रयत्न करती थी। ऑपरेशन काल में एवं उसके पश्चात् महासतीवृन्द ने अग्लानभाव से सेवा का लाभ लेकर कर्मनिर्जरा की। चिकित्सा कार्य में डॉ. राकेशजी हीरावत, डॉ. शरदजी डागा का सहयोग रहा। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री प्रमोदजी महनोत की तत्परता एवं सेवा भावना भी प्रशंसनीय रही।

21 जनवरी को गुणानुवाद सभा में महावीर नगर स्थित स्वाध्याय भवन में उन्हें हार्दिक श्रद्धाञ्जलि दी गई। यहाँ पर मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 विराज रहे थे, किन्तु कोहरे के कारण उनकी अनुपस्थिति में श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री प्रमोदजी महनोत, श्री प्रकाशचन्दजी जैन प्राचार्य एवं डॉ. धर्मचन्दजी जैन ने महासतीजी के अनेक गुणों पर प्रकाश डाला। महासती जी सांसारिक दृष्टि से छोटे लक्ष्मीचन्दजी म.सा. की भतीजी थी। उनका सांसारिक नाम रेशमबाई था। वे बाघमलजी एवं केसरबाईजी चौहान की

सुपुत्री एवं श्री मदनलालजी चोरड़िया की धर्मसहायिका थी। महासतीजी के सांसारिक पुत्र श्री कुन्दनमलजी चोरड़िया, इन्दौर भी सभा में उपस्थित थे। महासतीजी का गुरु समर्पण, समाचारी के प्रति निष्ठा, तप-त्याग एवं स्वाध्याय के प्रति सजगता आदि अनेक गुण थे। अन्त में चार लोगस्स का कायोत्सर्ग कर उन्हें श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गई। *-श्री सुरेशचन्द कोठारी, मन्त्री*

दिल्ली-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ, संघसेवी, सन्तसेवी श्रावकरत्न वीरभ्राता श्री प्रेमचन्दजी सुपुत्र स्व. श्रीमती

मोहिनीदेवीजी-स्व. मोतीलालजी गाँधी का 02 जनवरी, 2022 को स्वर्गगमन हो गया। आप रत्नसंघ के संघशिरोमणि, व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक, प्रवचन प्रभाकर, आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सांसारिक भ्राता थे। धर्मसंस्कारों, अनन्य गुरु भक्ति, संघनिष्ठा एवं समर्पणता के गुणों को आत्मसात् करने वाले शान्त, सौम्य, मृदुस्वभावी तथा सरल चित्त के धनी थे। जीवन समताभाव से ओतप्रोत और धर्ममय रहा। रत्नसंघीय गुरु हस्ती, गुरु हीरा एवं प्रभृति सभी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। सरिवार गुरुचरण सन्निधि में आना और सविनय, सभक्ति सामायिक-स्वाध्याय, धर्मध्यान, तप-त्याग अनेको व्रत-प्रत्याख्यानों के साथ सुपात्र दान की भावना में रत रहते। मूक सेवी थे। चातुर्मासों में लम्बे समय तक सेवा करते। जीवन पर्यन्त खूब सेवा का लाभ लिया जिसके फलस्वरूप भावी पीढ़ी में भी धर्मसंस्कारों, अनन्य गुरुभक्ति, संघनिष्ठता एवं समर्पणता के गुण विद्यमान है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जयपुर-चतुर्विध संघ-सेवी, विलक्षण प्रतिभा के धनी, लब्धप्रतिष्ठ रत्नव्यवसायी, संघ के प्रमुख स्तम्भ, अनन्य

गुरुभक्त श्रावकरत्न श्री नथमलजी सुपुत्र स्व. श्री मोतीचन्दजी हीरावत का 20 जनवरी, 2022 को 92 वर्ष की आयु में देवलोकगमन हो गया। आप अध्यात्मयोगी, पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के अनन्य कृपापात्र श्रावक थे एवं समय-समय पर आप श्रावक-श्राविकाओं एवं सन्त-सतियों को भी आध्यात्मिक जीवन में उत्तरोत्तर आगे बढ़ने की प्रेरणा किया करते थे। गुरुदेव से तथा वर्तमान आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. से आपकी सत्परामर्शात्मक चर्चा हुआ करती थी। आपने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के मन्त्री पद को एवं अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष पद को गौरवान्वित किया। आप शासनसेवा समिति में प्रारम्भ से ही जीवनपर्यन्त जुड़े रहे तथा संघ संरक्षक के रूप में आपकी अमूल्य सेवाएँ प्राप्त हुई। इतिहास समिति के गठन एवं सञ्चालन में आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। जैन विद्वान् तैयार करने के लिए प्रारम्भ हुई संस्था श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर के संस्थापक एवं सञ्चालन में भी आपने रुचिपूर्वक योगदान किया। जिनवाणी मासिक पत्रिका की डाँवाडोल स्थिति में आपने सम्बल प्रदान किया। कुछ समय जिनवाणी का कार्यालय आपके आवास हीरावत बिल्डिंग में सञ्चालित हुआ। आपने आचार्यश्री विनयचन्द ज्ञान भण्डार की व्यवस्थाओं में योगदान करने के साथ वहाँ नियमित रूप से बैठकर श्वेताम्बर एवं दिगम्बर आगमों का श्रावकरत्न श्री श्रीचन्दजी गोलेच्छा, श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा, श्री मोहनलालजी मूथा के साथ गहन स्वाध्याय किया। आप गजेन्द्रनिधि के ट्रस्टी भी रहे। आप जब 19 वर्ष के थे, तभी आपके पिताजी श्री मोतीचन्दजी हीरावत का निधन हो गया था। आपने अपने 5 छोटे भाई-बहनों का जिम्मेदारी पूर्वक पालन-पोषण किया तथा पूर्वकृत निर्णयानुसार 40 वर्ष की वय में रत्न व्यवसाय से निवृत्ति ले ली। आपकी एक आँख की रोशनी कुछ वर्षों पूर्व अचानक चली गई थी, तो आपकी आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ और सुदृढ़ हो गईं। अभी फ्रेक्चर हो जाने से आपका बाहर आवागमन रुक गया था। किन्तु स्वाध्याय-सामायिक आदि का क्रम बना रहा। संघ की गतिविधियों की जानकारी रखने के साथ समय-समय पर सुझाव भी देते रहते थे। आपके निधन से संघ में अपूरणीय क्षति हुई है। आपके अनुज

श्री टीकमचन्दजी हीरावत ने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष के रूप में तथा द्वितीय अनुज श्री विनयचन्दजी हीरावत, मुम्बई ने समर्पित संघसेवी के रूप में सेवाएँ प्रदान की। आपकी तीन बहनें कमलाजी, कान्ताजी एवं इन्द्राजी-सुमतिचन्दजी कोठारी धर्मनिष्ठ एवं श्रद्धाशील हैं। आप अपने पीछे धर्मसहायिका श्राविकारत्न श्रीमती पदमदेवीजी, सुपुत्र श्री अमिताभजी-आरतीजी हीरावत, सुपुत्री श्रीमती अमिताजी-श्री धीरेनजी नवलखा, सुपौत्र शशांकजी, अश्विनजी और सुपौत्री अदितिजी-श्रेयांसजी रांका सहित भरा-पूरा धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गए हैं। आपने संघ समाज को जो योगदान दिया वह चिरस्मरणीय रहेगा। *-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री*

जोधपुर-धर्मनिष्ठ, संघ-सेवी, सुश्राविका श्रीमती कमलाबाईजी धर्मसहायिका श्री बादलचन्दजी लोढ़ा (हीरादेसर

वाले) का 08 जनवरी, 2022 को देहावसान हो गया। हीरादेसर-भोपालगढ़ में सन्त-सतीवृन्द के शेखेकाल पधारने पर आप सहित परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। आप पावटा-शक्तिनगर, जोधपुर में सन्त-सतीवृन्द के चातुर्मास में गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करने वाली अग्रणी श्राविका थी। आपके सुपुत्र श्री नवरत्नजी लोढ़ा ने सन्त-सतीवृन्द की विहार-सेवा में और भोपालगढ़ चातुर्मास में गोचरी गवेषणा के साथ अपूर्व धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। आप रत्नसंघीय श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. की सांसारिक बड़ी मातुश्री थी। केवल आप ही नहीं सम्पूर्ण लोढ़ा परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में भी लोढ़ा परिवार पूर्ण रूप से सन्नद्ध रहता है। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य सत्कार में लोढ़ा परिवार सदैव तत्पर रहता है। *-सुभाष गुन्देचा, अध्यक्ष*

जोधपुर-संघ-सेवी, सुश्राविका श्रीमती कौशल्यादेवीजी धर्मसहायिका श्री प्रसन्नचन्दजी बाफना का 07 जनवरी,

2022 को देहावसान हो गया। त्याग-प्रत्याख्यान में तत्पर श्राविकारत्न ने नवकार मन्त्र का स्मरण करते हुए सजग अवस्था में प्रयाण किया। आप नियमित रूप से गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करने वाली अग्रणी श्राविका थी। नेहरु पार्क में पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द के विराजने पर आप सहित समस्त बाफना परिवार सेवा-भक्ति में सन्नद्ध रहा है। असाध्य बीमारी से ग्रसित होते हुए भी आप दृढ़ आत्म-शक्ति की धनी थी एवं समता में रहने का प्रयत्न करती थी। आपका परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है। आपके ज्येष्ठ आदरणीय श्री मूलचन्दजी बाफना श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के ज्ञानवान समर्पित श्रावक है। श्रावकरत्न श्री प्रसन्नचन्दजी बाफना ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में राष्ट्रीय महामन्त्री और श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर में अध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया था। वर्तमान में आप अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के संघ संरक्षक के रूप में महनीय सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। आपके सुपुत्र श्री सुनीलजी, वर्द्धमानजी और अरिहन्तजी श्री जैन रत्न युवक परिषद् में सक्रिय सदस्य के रूप में सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। देवर श्री नवरत्नजी बाफना सन्त-सतीवृन्द की विहार-सेवा में महनीय सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में आपका परिवार सदैव तत्पर है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

चेन्नई-संघ-सेवी, सन्त-सेवी सुश्रावक श्री बाबूलालजी कोठारी का 30 दिसम्बर, 2021 को देहावसान हो गया।

आपका जीवन सरलता, सहजता, कर्त्तव्यपरायणता, कर्मठ सेवाभावना, विनम्रता आदि अनेक गुणों से ओतप्रोत था। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. के चेन्नई-अहमदाबाद चातुर्मास में आप सहित समस्त

परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त किया था। चेन्नई-अहमदाबाद में आयोजित संघ के समारोह, कार्यक्रमों में कोठारी परिवार का सक्रिय योगदान प्राप्त होता है। सुश्रावक श्री बाबूलालजी कोठारी सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में भी पूर्ण रूप सन्नद्ध रहते थे। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के शेखेकाल रणसीगाँव विराजने पर समस्त कोठारी परिवार ने अपूर्व धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। आदरणीय श्री पदमचन्दजी कोठारी ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के उपाध्यक्ष तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के कार्याध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया। कोठारी परिवार अहमदाबाद-चेन्नई-रणसीगाँव में संघ में सक्रिय सहयोग प्रदान कर रहा है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री हरकचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री पन्नालालजी-स्व. श्रीमती सुगनकँवरजी सिंघवी

(निवासी किशनगढ़ वाले) का 6 जनवरी, 2022 को संथारा सहित देहावसान हो गया। आप खादी ग्रामोद्योग संस्थान में सेवारत थे तथा जीवन में गाँधीवादी विचारधारा से प्रेरित होकर आपने खादी के वस्त्र ही जीवन पर्यन्त धारण किए। आप प्रतिवर्ष तेले की तपस्या करते एवं अष्टमी तथा चतुर्दशी को स्थानक में संवर, पौषध आदि की आराधना करते थे। आपने अपने सम्पूर्ण जीवन को नैतिकता, कर्त्तव्यनिष्ठा एवं ईमानदारी के साथ जिया। आपने पूरे परिवार में उच्च कोटि के संस्कारों का बीजारोपण किया। सेवानिवृत्ति के पश्चात् निरन्तर आध्यात्मिक आराधना में लीन रहते हुए 5 सामायिक आप प्रतिदिन करते थे। जनवरी 2017 में आपकी धर्मसहायिका का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् आपने अपने जीवन को अध्यात्म की ओर मोड़ दिया। निरन्तर सामायिक, स्वाध्याय, जप-तप एवं प्रवचन आदि में समय व्यतीत करने लगे। आप अपने पीछे भरा-पूरा धर्मनिष्ठ एवं संस्कारवान् परिवार छोड़कर गये हैं। *-मन्त्री-अशोक कुमार सेठ*

पाली-धर्मनिष्ठ श्राविकारत्न श्रीमती भँवरीदेवीजी धर्मसहायिका स्व. श्री शान्तिलालजी पगारिया का 22 दिसम्बर,

2021 को स्वर्गवास हो गया। आपके परिवार की पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा-भक्ति थी। आप एक वरिष्ठ श्राविका होने के साथ-साथ धार्मिक गतिविधियों में सक्रिय रहती थीं। आप अपने पीछे सुपुत्र श्री आनन्दजी एवं सुपौत्र श्री मनीषजी पगारिया सहित धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गयी हैं।

सरवाड़-अजमेर-धर्मनिष्ठ, संघसेवी सुश्रावक श्री भँवरलालजी सुपुत्र स्व. श्री ताराचन्दजी कक्कड़ का लगभग 87 वर्ष की आयु में 16 दिसम्बर, 2021 को स्वर्गवास हो गया। आपकी देव-गुरु-धर्म के प्रति दृढ़ आस्था थी। आपका धर्ममय जीवन सभी के लिए प्रेरणास्पद रहेगा। आप वर्षों तक संघ के मन्त्री रहे तथा संघ को अपने पिताश्री ताराचन्दजी कक्कड़ के सिद्धान्तों पर चलाते हुए आपने सरवाड़ श्रीसंघ को नई बुलन्दियाँ प्रदान की एवं संघ हित में समर्पित रहे। आप सन्त-सतियों की सेवा में हमेशा अग्रणी रहते थे। चातुर्मास में क्षेत्र खाली नहीं रहे, आपकी सदा यही भावना रहती थी। प्रवचन सुनते-सुनते ही कविता एवं मुक्तक बनाने में आपकी विशेषता के कारण प्राय: सभी सन्त-मुनिराज आपको कविरत्न के नाम से ही सम्बोधित करते थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा धर्मनिष्ठ एवं सुसंस्कारित परिवार छोड़कर गए हैं। *-कक्कड़ परिवार सरवाड़-जयपुर*

अहमदाबाद-धर्मनिष्ठ, सुश्राविका श्रीमती सिरेकँवरजी धर्मपत्नी स्व. श्री सरदारमलजी बरड़िया का 26 नवम्बर, 2021 को 98 वर्ष की आयु में संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। आपका जीवन सरल और परिवार के प्रति समर्पित रहा। आप डेढ़-दो वर्ष पूर्व तक नियमित धर्मस्थानक में जाती तथा सामायिक साधना में रत रहती थीं। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गई हैं। *-अजीत भण्डारी, जोधपुर*

अहमदाबाद-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती वीनाजी धर्मसहायिका श्री राजकुमारजी बरड़िया का 4 जनवरी, 2022 को

ो गया। आपके मृत्यूपरान्त देहदान किया गया है। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धाभक्ति थी। पारिवारिक सुंस्कारों से संस्कारित धार्मिक संस्कारों के प्रति जागरूक सन्त-सतीवृन्द की सेवा में तरत्प रहने वाली वीनाजी बरड़िया का जीवन सरलता, मधुरता, सहिष्णुता, उदारता जैसे सद्गुणों से ओतप्रोत था। आपके श्वसुर स्व. श्री पूनमचन्दजी वरिष्ठ स्वाध्यायी एवं आगम रसिक श्रावकरत्न रहे तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की कार्यकारिणी में सदस्य के रूप में सेवाएँ दी। पूज्य श्री घासीलालजी म.सा. की आगम बत्तीसी के प्रचार-प्रसार में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता था। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के अहमदाबाद चातुर्मास में आप एवं आपके परिवार ने सेवाभक्ति का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। आतिथ्य-सत्कार में बरड़िया परिवार सदैव तत्पर है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

चेन्नई-संघसेवी सुश्रावक श्री पुखराजजी सुपुत्र श्री चन्दनमलजी-श्रीमती जानीकँवरजी बाघमार का 16 जनवरी,

2022 को 74 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आप आचार्यश्री हस्ती-हीरा-भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी, उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. के प्रति समर्पित श्रावकरत्न थे। आप गजेन्द्रनिधि एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के स्वाध्याय भवन, चेन्नई के ट्रस्टी थे। कोसाणा ग्राम में श्री चन्दनमलजी-जानीकँवर बागमार अतिथि भवन के लिए आपने स्थान एवं अच्छा सहयोग प्रदान किया। आप अष्टमी, चतुर्दशी तिथि पर व्रत-नियम रखते थे। माणक अस्पताल-जोधपुर, स्वाध्याय भवन-उनियारा (टोंक) में स्थानक निर्माण में आपने सहयोग प्रदान किया। आप अपने पीछे तीन सुपुत्र श्री प्रकाशजी, रमेशजी, पदमजी और सुपुत्री श्रीमती संगीताजी ओस्तवाल, सुपौत्र-सुपौत्रियों से भरापूरा सुसंस्कारित परिवार छोड़कर गये हैं। *-आर. नरेन्द्र कांकरिया*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती प्रकाशदेवीजी कूमठ का 14 जनवरी, 2021 को 73 वर्ष की आयु में देहावसान

हो गया। प्राय: करके आपका जीवन धर्माराधना में ही व्यतीत होता था। तपस्या को भी कर्मनिर्जरा का हेतु मानते हुए दो वर्षीतप ओलीजी, 11, 9, 8 एवं रात्रि-भोजन त्याग के प्रत्याख्यान किए। संसार में रहते हुए भी अपना कर्त्तव्य पूरा करने के बाद सामायिक साधना में लीन रहती थी। सादा जीवन उच्च विचारों वाली जीवनशैली से ओतप्रोत थी। आपकी इच्छानुसार निम्स मेडिकल कॉलेज में देहदान किया गया। *-दीपक कूमठ*

चेन्नई-सेवाभावी, धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सुभाषचन्दजी सुपुत्र श्री रतनलालजी कोठारी (गोटन वाले) का 17

जनवरी, 2022 को स्वर्गवास हो गया। आप मिलनसार एवं हँसमुख व्यक्तित्व के धनी थे और प्रत्येक धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों में पूर्ण रूप से तन-मन-धन के साथ भाग लेते थे। आपका जब भी राजस्थान जाने का प्रसङ्ग होता अपने आराध्य गुरुदेव के दर्शन के सङ्ग आचार्य भगवन्त पूज्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा., उपाध्याय भगवन्त पूज्यश्री मानचन्द्रजी म.सा के दर्शन करने अवश्य जाते,आप हमेशा हर सम्प्रदाय की चारित्र आत्माओं की सेवा में तत्पर रहते थे और अभी हाल ही में ओसवाल गार्डन, टाउनशिप-कुरुक्पेट चेन्नई में स्थानक के निर्माण में आपकी मुख्य भूमिका रही और तन-मन-धन से योगदान रहा। आपमें सेवा एवं सहयोग का गुण कोरोना काल में भी देखा गया। आपके अनुज भाइयों सहित पूरा कोठारी परिवार ही धर्मनिष्ठ परिवार है और आपके पूज्य पिताजी मारवाड़ रत्न श्री रतनलालजी कोठारी, गोटन हमेशा संघ और समाज की सेवा में अग्रणी रहते हैं। आप अपने पीछे सुसंस्कृत परिवार में धर्मसहायिका श्रीमती कंचनजी देवी के अलावा तीन पुत्र और एक पुत्री का भरा पूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

जोधपुर-धर्मनिष्ठ, संघसेवी, सुश्राविका श्रीमती अकलकँवरजी गांग का 22 जनवरी, 2022 को देहावसान हो गया। सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में आप सदैव तत्पर रहती थी। आपने स्वयं संस्कारी जीवन जीते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया था जिसके फलस्वरूप गांग परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है। आपके सुपुत्र आदरणीय श्री सुरेशजी गांग ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अंकेक्षक के रूप में अपना दायित्व बखूबी निर्वहन किया था। पुत्रवधू श्रीमती आशाजी गांग ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल में महासचिव पद का तथा सुपौत्र श्री आदित्यसिद्धार्थजी गांग ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड में कोषाध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया। स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में भी गांग परिवार सदैव समर्पित रहा है। *-धनपतसेठिया, महामन्त्री*

चौथ का बरवाड़ा-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती हेमलताजी धर्मपत्नी श्री रतनलालजी जैन 'कामदार' (जगमोदा

वाले) का 12 दिसम्बर, 2021 को 66 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आप देव-गुरु-धर्म के प्रति पूर्णत: समर्पित थी। आप सरलमना, हँसमुख स्वभावी होने के साथ प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करती थी तथा सन्त-सतियों की सेवा एवं दर्शनलाभ के लालायित रहती थी।

अजमेर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक डॉ. ललित कुमारजी जैन का 12 जनवरी, 2022 को 62 वर्ष की आयु में स्वर्गारोहण हो

गया। आप अत्यन्त सरल हृदय, मिलनसार, व्यवहार कुशल एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के धनी थे। शैक्षिक, सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अग्रणी रहने वाले डॉ. जैन राजकीय महाविद्यालय, नसीराबाद से प्रोफेसर पद से दो पूर्व सेवानिवृत्त हुए थे। उसके पश्चात् आपने अपना सम्पूर्ण जीवन संघसेवा की विभिन्न प्रवृत्तियों में समर्पण कर दिया था। जैन श्वेताम्बर संस्था वैशाली नगर में आप उपाध्यक्ष थे। आपने जीवन्त पर्यन्त निष्ठा, ईमानदारी, सच्चाई एवं अनुशासन का अनुसरण किया। आपकी धर्मसहायिका श्रीमती नीलमजी जैन, सुपुत्री स्व. श्री कंवलराजजी मेहता, जोधपुर, सुपुत्र-पुत्रवधुओं एवं पौत्र-पौत्रियों का चारित्रक आत्माओं की सेवाभक्ति एवं साधार्मिक बन्धुओं के आतिथ्य सत्कार में तत्पर परिवार छोड़कर गये हैं।

जोधपुर-धर्मनिष्ठ, संघ-सेवी सुश्राविका श्रीमती केसरकँवरजी धर्मपत्नी स्व. श्री मूलराजजी धारीवाल का 29

दिसम्बर, 2021 को देहावसान हो गया। आपका जीवन सरलता, मधुरता, सहिष्णुता, उदारता जैसे सद्गुणों से ओतप्रोत था। उनके चेहरे पर सदा शान्ति-सौम्यता झलकती रहती थी। वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता और मन की निष्कपटता के कारण वे सबकी प्रियपात्र थी। आपको जब भी अवसर प्राप्त होता वे गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करने वाली अग्रणी श्राविकारत्न थी। आपके निवास स्थान में अनुकूलता होने के कारण शास्त्री नगर क्षेत्र में पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द वहाँ विराजते थे, जिससे आप सहित समस्त परिजन सेवा-भक्ति में सन्नद्ध हो जाते थे। आदरणीया श्रीमती केसरकँवरजी धारीवाल को वर्ष 2010 में वरिष्ठ नागरिक का सम्मान तथा नेत्रहीन विकास संस्थान से भामाशाह सम्मान भी प्राप्त हुआ। आपने गत वर्ष ही आयु का शतक पार किया था। आप स्वयं ने संस्कारी जीवन जीते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया, जिसके फलस्वरूप आपका परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है। आपकी सुपुत्री आदरणीया श्रीमती सुशीलाजी बोहरा ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष पद को एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष पद के साथ संघ एवं संघीय संस्थाओं में विभिन्न पदों पर रहकर बखूबी दायित्व निर्वहन किया

और विभिन्न संस्थाओं में कार्य दायित्व निर्वहन कर रहे हैं। आपकी ज्येष्ठ सुपुत्री श्रीमती शान्ताजी मोदी जयपुर ने वीतराग ध्यान समिति में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान की। दोहित्र श्री अनिलजी बोहरा ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया। सम्पूर्ण परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में आपका परिवार सदैव तत्पर है।

उपर्युक्त दिवगंत आत्माओं को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं सभी सम्बद्ध संस्थाओं के सदस्यों की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

पर्यावरण का प्रतीक : जैनधर्म

श्री अशोक कुमार जैन (हरसाना वाले)

पर्यावरण प्रतीक है, जैनधर्म का सार।
धर्म अहिंसा परम है, जीवों को सुखकार।।
जैनधर्म का मूल है, पर्यावरण सुधार।
जीव दया की भावना, आगम का आधार।।1।।
पर्यावरण पुनीत हो, करना शाकाहार।
सब जीवों को लाभप्रद, सह अस्तित्व विचार।।
सदाचार से होता है, पर्यावरण सुधार।
सब जीवों की रक्षा करो, होकर अधिक उदार।।2।।
कपटपूर्ण व्यवहार नहीं, नहीं चोरी के भाव।
सब जीवों के प्रति सदा, बना रहे सद्भाव।।
वन प्राणी अरू वनस्पति, है जीवन के अङ्ग।
इनके संरक्षण के लिए, मन में होय उमङ्ग।
सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, जैनधर्म का मन्त्र।
जन मानस का धर्म है, करो नहीं षड्यन्त्र।।
जीवों के प्रति करुणा, सभी धर्मों का मूल।
पर पीड़ा पहुँचा कर, करें कभी ना भूल।।4।।

-निजी सचिव, प्रधान मुख्य वन संरक्षक (वन बल प्रमुख) राजस्थान, जयपुर

सुन-सुन गुरुणी भक्तों की सुन

श्री गजेन्द्र कुमार जैन

सुन-सुन गुरुणी भक्तों की सुन, मुबारक हो दीक्षा का दिन।
नैया हमारी है, खेवनहारी है, चरणों में रख ले पल-पल।।
छिन्न-छिन्न..।।टेर।।
ज्ञान सरिता तुमने बहाई, साध्वी प्रमुखा की पदवी है पाई।
सर्वगुणों से सरजित है मैया, गण की प्रमुखा संघ की कहाई।।
फूलों से भँवरें करते गुन-गुन, मुबारक हो दीक्षा का दिन।।
सुन-सुन गुरुणी....।।1।।
अध्यात्मचारी, महाव्रतचारी, संघ की महके नित नव क्यारी
सतियाँ हमारी, संयमधारी, सब मिल करती सेवा भारी
दर्शन कर बोले हर मन, मुबारक हो दीक्षा का दिन।।
सुन-सुन गुरुणी....।।2।।
दीक्षा दिवस का प्रसङ्ग है आया, गौरव हमें है संघ ऐसा पाया।
कृपा दृष्टि जग से विरक्ति, कर्मों की होती तत्काल वृष्टि।।
'गजेन्द्र' करता शत-शत नमन, मुबारक हो दीक्षा का दिन।।
सुन-सुन गुरुणी....।।3।।

-ए 9, आध्यात्मिक शिक्षा समिति, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर

पृष्ठ 69 का शेषांश

था। अपने विचारों को दृढ़ता से प्रतिपादित करते थे। आचार्यश्री के प्रति उनके मन में अटूट श्रद्धा थी जो समय-समय पर उनके मुखारविन्द पर आ ही जाती थी। श्री हीरावत सा दूरदर्शी थे। बहुत आगे की बात बताने में सक्षम थे। उनको पता लग जाता था और वे बहुत स्पष्ट शब्दों में बात का सार रख देते थे। किसी गहन विषय का प्रतिपादन करते समय उनकी भाषा कठोर हो जाती थी।

श्री हीरावत साहब के चले जाने से आचार्यश्री के गगन मण्डल का एक नक्षत्र ही टूट गया। ऐसे 'वज्रादपि कठोर एवं कुसुमादपि कोमल' व्यक्तित्व को शत-शत नमन।

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 89
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 16279 से 16282 तक कुल 4 सदस्य बने।

जिनवाणी प्रकाशन योजना हेतु साभार

100000/- श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, जयपुर-मुम्बई, श्री अंशजी हीरावत की जैन-भागवती दीक्षा सम्पन्न होने की खुशी में।

100000/- श्री सतीशचन्दजी जैन (कंजोली वाले), जयपुर

जिनवाणी मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

21000/- श्री ज्ञानचन्दजी जैन, श्रीकालाहस्ती, चितलून जिनवाणी हेतु सप्रेम।

11000/- श्री चंचलमलजी बच्छावत, कोलकाता, अध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री विनयचन्दजी डागा, जयपुर, कार्याध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- डॉ. धर्मचन्दजी जैन, जयपुर, कार्याध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री राजेन्द्रजी नाहर, भोपाल, उपाध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री अशोककुमारजी सेठ, जयपुर, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री रितुलजी पटवा, जयपुर, कोषाध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री वीरेन्द्रजी जामड, जयपुर, संयुक्तमन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री अशोकजी सुराणा, दिल्ली, सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री महेन्द्रजी पारख, जयपुर, सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्रीमती मंगलाजी चौरडिया, जलगाँव सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री छगनमलजी लुणावत, बैंगलौर, सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री धनरूपमलजी अमितकुमारजी मेहता, बैंगलौर, सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री मोहनलालजी सुमेरचन्दजी चौरडिया, इन्दौर, सदस्य-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सप्रेम।

11000/- श्री अनिलजी एवं श्रीमती अलकाजी दुधेडिया, अजमेर सुपुत्र चि. आयुषजी संग सौ.कां. पारूल के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में।

5100/- श्रीमती निर्मलाजी सुराणा, जयपुर, स्व. श्री विरदराजजी सुराणा (पूर्व मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल) की प्रथम पुण्य तिथि 10 फरवरी, 2022 की पुण्य-स्मृति में।

5100/- श्री राज्यवर्द्धनजी, हर्षवर्द्धनजी, सक्षमजी जैन (किशनगढ़ वाले), जयपुर पूजनीय श्री हरकचन्दजी सिंघवी, जयपुर का 4 जनवरी, 2022 को देवलोकगमन होने पर पुण्य-स्मृति में।

5100/- श्रीमती नीलमजी धर्मपत्नी डॉ. ललितकुमारजी जैन, निखिलजी-आकांक्षाजी, नितिनजी-प्रियंकाजी, (पुत्र-पुत्रवधू) अनिकाजी अदविकजी जैन (पौत्री-पौत्र), अजमेर पूजनीय डॉ. ललितकुमारजी जी जैन पुत्र स्व. श्री जवानमलजी-स्व.श्रीमती मोहनकँवरजी जैन का 12 जनवरी, 2022 को स्वर्गवास होने पर पृण्य-स्मृति में।

5100/- श्री पदमचन्दजी जैन, राजस्थान पत्रिका, जयपुर सुपुत्र अक्षत जैन की प्रोन्नतिपूर्वक Publicis Sapient कम्पनी में नियुक्ति के उपलक्ष्य में।

2500/- श्रीमती ज्ञानदेवीजी सुखलेचा, जयपुर, सप्रेम।

2100/- श्री अशोककुमारजी मनीषकुमारजी जैन, कोटा, सभक्ति।

2100/- श्रीमती पुष्पाजी मेहता, भोपाल, जन्मभूमि पुण्यधरा पीपाड में गुरुचरण सन्निधि में साधना-आराधना का सौभाग्य प्राप्त होने की खुशी में।

2100/- श्री रतनचन्दजी, प्रकाशचन्दजी, मनीषजी बोरा, विल्लुपुरम, सपरिवार गुरुचरण सन्निधि में साधना-आराधना का सौभाग्य प्राप्त होने पर।

2100/- श्री भीकमचन्दजी आबड, चांगोटोला (वीर परिवार) दीक्षार्थी बहिन रीताजी सहित सभी मुमुक्षुओं की जैन-भागवती दीक्षा 09 दिसम्बर, 2021 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

2000/- श्रीमती पुष्पाजी मेहता, भोपाल, स्व. पति श्री रवीन्द्रजी मेहता की पुण्य-स्मृति में।

1701/- श्री महेन्द्रजी-श्रीमती ललिताजी गांग, सूरत पूज्य पिताजी स्व. श्री मनमोहनमलजी गांग की 17वीं पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री भँवरलालजी कूमठ, जयपुर धर्मपत्नी श्रीमती प्रकाशदेवीजी कूमठ का 14 जनवरी, 2022 को स्वर्गवास होने पर पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्रीमती आयचुकीदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री माणकचन्दजी लोढा, नाडसर, तह. भोपालगढ, पीपाड में चतुर्विध संघ समागम एवं चातुर्मास में धर्म-ध्यान, तप-त्याग आदि विविध धर्मचर्याओं के सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री प्रकाशचन्दजी लोढा, नाडसर, तह. भोपालगढ, भोपालगढ चातुर्मास में सेवा एवं तपाराधना का सौभाग्य प्राप्त होने की खुशी में।

1100/- श्री प्रमोदकुमारजी प्रवीणकुमारजी मोदी, मदनगंज-किशनगढ, अजमेर, सप्रेम।

1100/- श्री पारसचन्दजी, अमितकुमारजी, सुमितकुमारजी जैन, श्यामपुरा वाले हाल मुकाम सवाईमाधोपुर सौ. कां. तनिषा जैन संग चि. विकासजी जैन के शुभ विवाह 21 नवम्बर, 2021 के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री जवरीलालजी इंदरचन्दजी रांका, भरूच, स्व. श्रीमती लीलाबाईजी रांका की पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री बाबूलालजी जैन (कंजौली वाले) हिण्डौनसिटी (राज.) जन्म दिवस 30 दिसम्बर, 2021 के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री महावीरप्रसादजी, दिनेशजी, पारसजी, पंकजजी, मुकेशजी जैन (कुण्डेरा वाले) इन्दौर, पूज्य माताश्री स्व. श्रीमती शान्तिदेवीजी जैन की द्वितीय पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री मनोजजी जैन (बोहरा), जयपुर, पूज्य पिताजी श्री कँवरसिंहजी (बोहरा) की पुण्य-स्मृति में।

1100/- डॉ. राजेन्द्रकुमारजी, सुनीलकुमारजी जैन यशलहा (सूरवाल वाले) सवाईमाधोपुर चि. कनिष्क सुपुत्र श्री सुनीलकुमाजी-श्रीमती अंजनाजी संग सौ. कां. कामिनी सुपुत्री श्रीमती राजश्री-श्री दिलीप कुमारजी जैन कुण्डेरा वाले इन्दौर के परिणय सूत्र बन्धन के मांगलिक अवसर पर।

1100/- श्री बाबूलालजी, रतनलालजी, रमेशचन्दजी, ज्ञानेन्द्रकुमारजी कामदार (जगमोदा वाले) चौथ का बरवाडा (जयपुर), श्राविकारत्न श्रीमती हेमलताजी जैन का 12 दिसम्बर, 2021 को देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री प्रेमचन्दजी, प्रकाशचन्दजी हलवाई, महावीरप्रसादजी, जगदीश प्रसादजी, रिषभ कुमारजी, कोटा, स्व. श्रीमती शान्तिबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री बद्रीलालजी जैन (जरखोदा वाले) का 11 दिसम्बर, 2021 को देवलोकगमन हो जाने पर पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री चौथमलजी, महावीर प्रसादजी जैन (बाबई वाले), जयपुर, चि. दीपक सुपुत्र श्री महावीर प्रसादजी का शुभविवाह सौ.कां. आरती (बुलबुल) सुपुत्री श्री पदमचन्दजी सूरवाल, बजरिया-सवाईमाधोपुर के संग सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री लड्डूलालजी, राजेन्द्र प्रसादजी जैन (बिलोता वाले), अलीगढ़-रामपुरा, सुपुत्र चि. अमितजी जैन का शुभविवाह सम्पन्न होने की खुशी में।

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान (बालिका), मानसरोवर हेतु साभार

49000/- श्री मोहनलालजी, सुमेरचन्दजी चोरड़िया, इन्दौर, दो छात्राओं हेतु सहकार राशि।

25000/- श्री चंचलमलजी बच्छावत, कोलकाता, एक छात्रा हेतु सहकार राशि।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

11111/- श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, मुम्बई-जयपुर, श्री अंशजी हीरावत की जैन-भागवती दीक्षा सम्पन्न होने की खुशी में।

रत्नसंघ की एप्प

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ratnasangh एप्प डाउनलोड कर अनेक जानकारियाँ प्राप्त कर सकते हैं-विचरण विहार, प्रत्याख्यान पाठ, जैन कलेण्डर, सूर्योदय-सूर्यास्त, चौघड़िया, साधना-आराधना, क्विज, जिनवाणी, स्वाध्याय शिक्षा, रत्नम्, साहित्य, पंचांग, प्रार्थनाएँ, कहानियाँ आदि।

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 91
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है। उत्तर प्रदाता अपने नाम, पते तथा मोबाइल नम्बर के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड आदि का भी उल्लेख करें।

धनदत्त सार्थवाह

संकलित

राजगृह नगर में धनदत्त (धन्ना) नाम का एक सार्थवाह रहता था। उसकी स्त्री का नाम भद्रा था। उसके पाँच पुत्र और सुंसुमा नामक एक पुत्री थी। 'चिलात' नाम का एक दासपुत्र उस लड़की को खिलाया करता था, किन्तु साथ खेलने वाले दूसरे बच्चों को वह अनेक प्रकार से दुःख देता था। वे अपने माता-पिता से इसकी शिकायत करते थे। इन बातों को जानकर धनदत्त सार्थवाह ने उसे अपने घर से निकाल दिया। स्वच्छन्द बनकर चिलात, सातों व्यसनों में आसक्त हो गया। नगरजनों से तिरस्कृत होकर वह सिंहगुफा नाम की चोरपल्ली में, चोर-सेनापति विजय के पास चला गया। उसके पास रहकर उसने चोरी की सभी विद्याएँ सीख ली और चोरी करने में अत्यन्त निपुण हो गया। कुछ समय के बाद विजय चोर की मृत्यु हो गई। उसके स्थान पर चिलात को चोरों का सेनापति नियुक्त किया गया।

एक समय चिलात चोर-सेनापति ने अपने पाँच सौ चोरों से कहा-"चलो, राजगृह नगर में चलकर धन्ना सार्थवाह के घर को लूटें। लूट में जो धन आवे, वह सब तुम रख लेना और सेठ की पुत्री सुंसुमा को मैं रखूँगा।" ऐसा विचारकर उन्होंने धन्ना सार्थवाह के घर डाका डाला। बहुत-सा धन और सुंसुमा कुमारी को लेकर वे चोर भाग गए। अपने पाँच पुत्रों को तथा कोतवाल और सुभटों को साथ लेकर धन्ना सार्थवाह ने चोरों का पीछा किया। चोरों से धन लेकर राजसेवक तो वापिस लौट गए, किन्तु धन्ना सार्थवाह और उसके पाँच पुत्रों ने सुंसुमा को लेने के लिए चिलात का पीछा किया। उनको पीछे आते देखकर चिलात थक गया और सुंसुमा को लेकर भागने में असमर्थ हो गया। इसलिए तलवार से सुंसुमा का सिर काटकर धड़ को वहीं छोड़ दिया और सिर हाथ में लेकर भाग गया। जंगल में दौड़ते-दौड़ते उसे बड़े जोर से प्यास लगी। पानी नहीं मिलने से उसकी मृत्यु हो गई।

धन्ना सार्थवाह और उसके पाँचों पुत्र चिलात चोर के पीछे दौड़ते-दौड़ते थक गए और भूख प्यास से व्याकुल होकर वापिस लौटे। रास्ते में पड़े हुए सुंसुमा के मृत-शरीर को देखकर वे अत्यन्त शोक करने लगे। वे सब लोग भूख और प्यास से घबराने लगे। तब धन्ना सार्थवाह ने अपने पाँचों पुत्रों से कहा-"तुम मुझे मार डालो और मेरे मांस से भूख और खून से प्यास को शान्त करके राजगृह नगर में पहुँच जाओ।" यह बात उसके पुत्रों ने स्वीकार नहीं की। वे कहने लगे-"आप हमारे पिता हैं। हम आपको कैसे मार सकते हैं ?" तब कोई उपाय न देखकर पिता ने कहा-"सुंसुमा तो मर चुकी है। अपने को

इसके मांस और रुधिर से भूख और प्यास बुझा कर राजगृह नगर में पहुँच जाना चाहिए।'' इस बात को सबने स्वीकार किया और वैसा ही करके वे राजगृह नगर में पहुँच गए। उस समय तक धन्ना सार्थवाह जैन नहीं था।

एक समय श्रमण भगवान महावीर राजगृह नगर के गुणशील उद्यान में पधारे। जनता दर्शनार्थ गई और धन्ना सार्थवाह भी गया। भगवान का धर्मोपदेश सुनकर उसे जैन धर्म पर श्रद्धा उत्पन्न हुई, वह जैन बना, साथ ही उसे वैराग्य भी उत्पन्न हुआ जिससे उसने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की। कई वर्षों तक संयम का पालन किया और आयु पूर्ण होने पर प्रथम सौधर्म देवलोक में देव हुआ। वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष प्राप्त करेगा।

-'नन्दीसूत्र' से साभार

Life still has a meaning

Shri Shrikant Gupta

If there is a future there is time for mending-
Time to see your troubles coming to an ending.
Life is never hopeless however great your sorrow-
If you're looking forward to a new tomorrow.
If there is time for wishing then there is time for hoping-
When through doubt and darkness you are blindly groping.
Though the heart is heavy and hurt you may be feeling-
If there is time for praying there is time for healing.
So if through your window there is a new day breaking-
Thank God for the promise, though mind and soul be aching.
If with harvest over there is grain enough for gleaning-
There is a new tomorrow and life still has meaning.

114, ई रोड, नेहरु पार्क, गणगौर गार्डन के सामने, जोधपुर (राज.)

सामायिक-प्रश्नोत्तर

प्र. 1- 'इरियावहिया' के पाठ में विराधना (जीव-हिंसा) के कितने प्रकार बतलाये हैं और कौन-कौन से हैं? अर्थ सहित बताइए।

उत्तर- 'इरियावहिया' के पाठ में विराधना दस प्रकार की बतलायी है, यथा-1. अभिहया-सामने आते हुए, को ठेस पहुँचाई हो। 2. वत्तिया-धूल आदि से ढ़ँके हो। 3. लेसिया-जीव को भूमि आदि पर रगड़े-मसले हों, 4. संघाइया-इकट्ठे किये हों। 5. संघट्टिया-पीड़ा पहुँचे जैसे गाढ़े छुए हों। 6. परियाविया-परिताप (कष्ट) पहुँचाया हो। 7. किलामिया-खेद उपजाया हो। 8. उद्दविया-हैरान किया हो। 9. ठाणाओ ठाणं संकामिया-एक स्थान से दूसरे स्थान पर रखे हों और 10. जीवियाओ ववरोविया-जीवन (प्राणों) से रहित किया हो।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

वीर प्रभु से करें प्रार्थना

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

वीर प्रभु से करें प्रार्थना, जीवन का उत्थान हो,
दूर करो अज्ञान अन्धेरा, जन-जन में सद्ज्ञान हो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।टेर।।

कभी न भटकें हम राहों से, सद्बुद्धि, सद्ज्ञान दो,
मात-पिता का नाम करें हम, ऐसी नव पहचान दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।1।।

नव शक्ति दो, नई दिशा दो, मन में दृढ़ विश्वास दो,
सत् कृत्यों से भरो ज़िन्दगी, शान्ति का पैग़ाम दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।2।।

मर्यादामय रहे आचरण और विनय हो जीवन में,
जैनी बनकर जिएँ ज़िन्दगी, ऐसा बस वरदान दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।3।।

प्रेम, अहिंसामय हो जीवन, नहीं किसी से वैर हो,
मानव जीवन बने सार्थक, सत्य का सम्मान हो।

वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।4।।

भाईचारा हो दुनिया में, हर हृदय में प्यार हो,
वीर सन्देशा गूँजे घर-घर, जन-जन का कल्याण हो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना....।।5।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, फरिश्ता कॉम्प्लेक्स, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

कर भला तो हो भला

संकलन : श्री राजीव नेपालिया (माथुर)

दीनदयालजी पेशे से एक कस्बे में प्राथमिक विद्यालय के अध्यापक थे। घर से विद्यालय की दूरी लगभग 7 किलोमीटर वीराने में थी। कस्बे से विद्यालय तक पहुँचने का साधन यदा-कदा ही मिलता था। अक्सर दीनदयालजी को किसी-न-किसी से लिफ्ट माँग कर ही विद्यालय तक पहुँचना पड़ता था और कभी-कभी तो पैदल भी।

दीनदयालजी विद्यालय जाने के लिए लिफ्ट माँगते और साधन तलाशते समय अक्सर वे सोचते थे कि-''कैसे उजाड़ वीराने में विद्यालय खोल रखा है सरकार ने, इससे तो यह अच्छा होता कि मैं कस्बे में ही परचून की दुकान लगा लेता।''

रोज-रोज विद्यालय आने-जाने में होने वाली कठिनाई को देखते हुए उन्होंने एक स्कूटर खरीदने का निर्णय लिया। अपने पास धीरे-धीरे जमा की हुई पूँजी से उन्होंने एक नया स्कूटर खरीदा। स्कूटर लेते समय उन्होंने एक प्रण भी लिया कि कभी भी किसी को लिफ्ट के लिए मना नहीं करूँगा। क्योंकि वे जानते थे कि जब कोई लिफ्ट देने के लिए मना कर देता है तो कितनी शर्मिंदगी महसूस होती है। दीनदयालजी अब अपने नये स्कूटर से विद्यालय आते-जाते थे। रोजाना कोई न कोई उनके साथ हो जाता तथा वापसी में भी कोई न कोई उन्हें लिफ्ट माँगने वाला मिल ही जाता।

एक दिन विद्यालय से लौटते समय उन्हें एक परेशान-सा व्यक्ति लिफ्ट के लिए हाथ फैलाये खड़ा मिला। अपनी आदत के अनुसार दीनदयालजी ने स्कूटर रोक दिया और उसको स्कूटर पर बैठने के लिए कहा। वह व्यक्ति उनके पीछे स्कूटर पर बैठ गया। थोड़ी दूरी पर एक सुनसान स्थान पर पीछे बैठे व्यक्ति ने अपनी जेब से एक चाकू निकालकर दीनदयालजी की पीठ पर लगा दिया और बोला-''तुम्हारे पास जितना भी रुपया-पैसा है वह तथा यह स्कूटर मेरे हवाले करो, जल्दी।''

मारे डर के दीनदयालजी ने स्कूटर रोक दिया। रुपये-पैसे तो उनके पास अधिक थे नहीं, पर अपना सबसे प्रिय और पाई-पाई जोड़कर जो स्कूटर खरीदा था उसकी चाबी उस व्यक्ति को देते हुए उससे बोले-''भाई! आपसे एक निवेदन कर सकता हूँ?''

'क्या?'-वह व्यक्ति लगभग गुर्राते हुए बोला।

''मेरा निवेदन सिर्फ इतना ही है कि आप कभी किसी को यह मत बताना कि आपने यह स्कूटर कहाँ से, किससे और कैसे लूटा? मेरा विश्वास कीजिए कि मैं भी इसकी रिपोर्ट पुलिस में नहीं करूँगा।''

''क्यों?''-व्यक्ति ने बड़ी हैरानी से पूछा।

''क्योंकि यह रास्ता बड़ा ही उजाड़ और वीरान है। यहाँ पर आने-जाने के लिए आसानी से कोई सवारी नहीं मिलती। उस पर मेरे साथ हुए ऐसे हादसे को सुनकर कोई भी भला व्यक्ति किसी अनजान को कभी भी लिफ्ट नहीं देगा।''-दीनदयालजी ने कहा।

उस व्यक्ति को दीनदयालजी भले मनुष्य प्रतीत हुए। परन्तु वह तो एक चोर था। फिर भी उसने कहा-''ठीक है।'' यह कह कर वह स्कूटर लेकर वहाँ से चला गया।

अगले दिन सुबह-सुबह दीनदयालजी ने अखबार लेने के लिए जैसे ही अपने घर का दरवाजा खोला तो उनके आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। उन्होंने देखा कि उनके घर के बाहर उनका प्यारा स्कूटर खड़ा है। मारे खुशी के दीनदयालजी दौड़कर बाहर गए और स्कूटर को अपने बच्चे की तरह चूमने लगे। स्कूटर के आगे की टोकरी में पड़े एक लिफाफे से उनको एक पत्र मिला।

उस पत्र में लिखा था कि-''मास्टरजी! यह मत समझना कि तुम्हारे द्वारा दी गई ज्ञान की बातों को सुनकर मेरा दिल पिघल गया होगा। मैंने तुम्हारा स्कूटर लूटकर सोचा कि कस्बे में ले जाकर उसे कबाड़ी वाले को बेच दूँगा। इसे बेचने के लिए जैसे ही मैं कबाड़ी की दुकान पर गया तो मेरे द्वारा उसको कुछ बताने से पहले ही वह बोला-''अरे! यह स्कूटर तो मास्टरजी का है, तुम्हें कहाँ से मिला।''

''मुझे मास्टरजी ने ही किसी काम से भेजा है।'' ऐसा कहकर मैं उस कबाड़ी की शक भरी नजरों से बचते हुए वहाँ से चला गया।

आगे चलकर मुझे भूख लगी तो मैं पास ही की एक मिठाई की दुकान पर कुछ खाने की सामग्री लेने के लिए पहुँचा। सामग्री तोलते हुए मिठाई वाला बोला-''अरे! यह तो मास्टरजी का स्कूटर है।''

''हाँ, उन्हीं का है। उनके घर पर कुछ मेहमान आए हुए हैं, इसलिए उन्होंने मुझे कुछ मिठाई एवं नमकीन खरीदने के लिए भेजा है।'' ऐसा कहकर जैसे-तैसे मैं वहाँ से भी बचा। फिर मैंने सोचा कि इसे कस्बे से बाहर ले जाकर बेच दूँ। जैसे ही मैं कस्बे से बाहर निकल रहा था कि नाके के पुलिस वाले ने पकड़ लिया। पुलिस वाले ने लगभग गुर्राते हुए मुझसे पूछा-''कहाँ जा रहे हो? और यह मास्टरजी का स्कूटर तुम्हारे पास कैसे?'' किसी तरह मैंने उससे भी बहाना बनाया।

पत्र में आगे लिखा था कि मास्टरजी यह तुम्हारा स्कूटर है या हमारे प्रधानमन्त्री-श्री नरेन्द्र मोदीजी। सभी पहचानते हैं इसे। आपकी अमानत वापस आपके हवाले कर रहा हूँ। इसे बेचने की न तो मुझमें शक्ति है न हौंसला। आपको जो तकलीफ हुई है उसके एवज में मैंने स्कूटर के पेट्रोल का टैंक फुल करवा दिया है तथा कष्ट के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

पत्र को पढ़कर दीनदयालजी मुस्कुरा दिए और प्रभु का धन्यवाद देते हुए बोले-''कर भला तो हो भला।''

-401, 'बंशी निकुञ्ज', महावीरपुरम् सिटी, चौपासनी, जागीर, फनवर्ल्ड के पीछे, जोधपुर

मुहावरा बदल गया

डॉ. दिलीप धींग

लोगों के हाथों में लाठियाँ थीं। 'मारो, मारो' की आवाज आ रही थी। रास्ते से गुजरते आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज को यह आवाज ठीक नहीं लगी। उनका कोमल मन तुरन्त बोल उठा, 'मत मारो, मत मारो।'

वे बड़े ही सहज भाव से लोगों के समीप चले गये। भयभीत लोग उन्हें देख सहम गए। उन्होंने देखा कि हाथ में लाठी लिये लोग एक साँप को मारने वाले हैं। एक आदमी बोला-''महाराज! इधर साँप है।''

''कोई बात नहीं। आप डरो मत। साँप को नुकसान मत पहुँचाओ। यह किसी का अहित नहीं करेगा।'' बड़े विश्वास के साथ आचार्यश्री बोले।

ऐसा कहते हुए उन्होंने अपना ओघा आगे किया। भयभीत साँप को कोमल धवल आश्रय मिल गया। वह उस ओघे पर लिपट गया। आचार्यवर बिलकुल निडरता से उसे निर्जन स्थान तक ले गये। वहाँ ओघा धरती पर रखा। अपने आप को सुरक्षित मान साँप ओघे से उतर जंगल में चला गया।

अभय के साधक और अभय-प्रदाता आचार्यश्री ने एक मुहावरे को ही बदल दिया। वह मुहावरा इस प्रकार हुआ करता था-साँप भी मर गया और लाठी भी नहीं टूटी। अब लोग कह रहे थे-''न तो साँप मरा, न लाठी टूटी।''

यही सही मार्ग है। अब पर्यावरण के पैरोकार भी कहते हैं कि जैव विविधता और पारिस्थितिकी सन्तुलन के लिए साँप तथा अन्य छोटे-बड़े प्राणियों का जीवित रहना भी जरूरी है।

-निदेशक : आई.सी.पी.एस.आर., 7, अय्या मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001

10 फरवरी 2022
जिनवाणी 95
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

रोहिणेय चोर भी बदल गया

संकलित

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 मार्च, 2022 तक जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपना नाम, आयु, मोबाइल नम्बर तथा पूर्ण पते के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड इत्यादि का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

राजगृही नाम की एक सुन्दर और वैभवशाली नगरी थी। उस नगरी के पास वैभारगिरि पर्वत की गुफा में रोहिणेय चोर अपनी चोर-मण्डली के साथ रहता था। रोहिणेय ने चोरी का गुर अपने पिता से सीखा था तथा दूसरी अनेक विद्याओं के ज्ञान से वह बुद्धिमान भी हो गया था।

रोहिणेय चोर ने अपने पिता को मृत्यु के वक्त एक वचन दिया था कि वह प्रभु महावीर की वाणी कभी-भी नहीं सुनेगा।

पिता की मृत्यु के बाद वह राजगृही नगरी में जाकर बड़ी-बड़ी चोरी करता और लोगों को बहुत पीड़ा देता। दिनोंदिन उसका आतंक बढ़ता जा रहा था। वह इतना चालाक था कि राजा के सिपाहियों के हाथ कभी नहीं आता।

प्रजाजनों ने महाराज श्रेणिक से फरियाद की और चोर के आतंक से सबको जल्दी मुक्त करवाने की विनति की। चोर को बुद्धिशाली और चपल जानकर राजा ने उसे पकड़ने का काम अपने पुत्र और राज्य के मन्त्री अभयकुमार को सौंप दिया। मन्त्री ने नगर के दरवाजे पर सख्त पहरा लगा दिया और कोई नया आदमी अन्दर आये या बाहर जाये उसका खास ध्यान रखने को कह दिया। सिपाही और नगर के कोतवाल सुप्त रूप से दरवाजे पर ध्यान रखने लगे।

रोहिणेय चोर को अभयकुमार द्वारा बनाई व्यवस्था की जानकारी अपने आदमियों के द्वारा मिल गई। उसने अभयकुमार को छलने का निश्चय किया। उसके लिए उचित समय की राह देखने लगा।

एक बार प्रभु महावीर विहार करते-करते राजगृही नगरी में पधारे और नगरी के बाहर के उद्यान में विराजे। प्रभु नगरी के बाहर पधारे हैं, ऐसा जानकर नगरजन उनके दर्शन करने और उपदेश सुनने उद्यान में इकट्ठे हुए। प्रभु महावीर को वन्दन करके सब नगरजन उनकी पवित्र, मीठी, आनन्दकारी देशना सुनने बैठे।

उस दिन रोहिणेय चोर भी पर्वत की गुफा में से निकलकर राजगृही की ओर जा रहा था।

प्रभु महावीर की दिव्य और तेजस्वी वाणी में देशना चल रही थी। अपने पिता को हुआ वचन भङ्ग न हो, इसलिए रोहिणी चोर अपना जूता बगल में दबाकर, दोनों कान में अंगुलियाँ डालकर उद्यान के पास से जल्दी से दौड़ा। परन्तु जैसे ही वह समवसरण के पास से निकला, तभी उसके पैर में काँटा चुभ गया।

उसने सोचा कि यदि अभी काँटा निकालने का प्रयत्न करूँगा तो कान में डाली अंगुलियाँ निकालनी पड़ेगी और प्रभु के वचन कान में जाएँगे तो पिता को दिया वचन टूट जाएगा। इसलिए काँटे वाले पैर से दौड़ना

चालू रखा। परन्तु काँटा पैर में जोर से लगा था और पैर में बहुत पीड़ा हो रही थी, इसलिए अब उससे थोड़ा भी दौड़ा नहीं जा रहा था। आखिर पैरों में से काँटा निकालने के लिए उसे नीचे झुकना ही पड़ा।

उस समय प्रभु देवताओं के स्वरूप का वर्णन कर रहे थे। भगवान के मुख में से निकलती अमृत समान वाणी उसके कान में पड़ी-''(1) देवों का श्वासोच्छ्वास सुगन्ध वाला होता है। (2) उनके गले की माला कभी मुर्झाती नहीं। (3) उनकी आँखें नहीं झपकती। (4) वे जमीन से चार अंगुल ऊपर ही रहते हैं, मतलब कि उनके पैर जमीन को स्पर्श नहीं करते।'' ये वचन सुनकर रोहिणी चोर पैर का काँटा निकालकर, कान में अंगुलियाँ डालकर जल्दी से आगे दौड़ गया। प्रभु महावीर के वचन जो उसके कान में पड़े थे, उन्हें भूलने की उसने बहुत कोशिश की, लेकिन भूल नहीं सका।

दुर्भाग्य से उस दिन नगर प्रवेश करते वक्त कोतवाल ने उसे पकड़ लिया और बाँधकर श्रेणिक राजा के पास ले आया। अभय कुमार को भी बुलाया गया। अभयकुमार ने कोतवाल से पूछा-''चोर के पास से चोरी की चीजें मिली क्या? सबूत के बिना उसे सजा नहीं हो सकती।'' कोतवाल ने कहा-''हमने तो उसे नगर में प्रवेश करते वक्त सन्देह के कारण पकड़ा है, इसलिए उसके पास से कुछ भी नहीं मिला।''

राजा श्रेणिक ने चोर से पूछा-''तेरा नाम क्या है? तू कौन से गाँव में रहता है?''

चोर ने जवाब दिया-''मेरा नाम दुर्गचन्द है, मैं शालिग्राम में रहता हूँ।''राजा ने आगे पूछा-''तू क्या करता है?''चोर ने कहा-''मेरी जात कबीले की है। खास काम के लिए आया हूँ। मुझे आते देर हो गई, इसलिए कोतवाल ने मुझे पकड़ लिया।'' राजा ने शालिग्राम में जाँच की, लेकिन वहाँ सब चोर के ही आदमी थे, इसलिये जो चोर ने कहा वैसा ही वर्णन ग्राम वालों नें भी किया।

अभयकुमार मन्त्री ने सोचा-''यह चोर बहुत होशियार है, इसलिए बुद्धि से काम लेना चाहिए।'' यह सोचकर उन्होंने चोर से कहा-''भाई तू घबराना नहीं, थोड़े दिन तू मेरे साथ ही मेरा मेहमान बनकर रहेगा।'' ऐसा कहकर चोर को अपने पास रखा।

अभयकुमार मन्त्री होने के बावजूद भी श्रावकों के व्रतों का पालन दृढ़ता से करते थे। वे प्रतिदिन सामायिक भी करते थे। पर्व तिथि के दिन पौषध आदि विशेष धर्माराधना करते थे। रोहिणेय भी उनके साथ रहकर उनका अनुकरण करता, इसलिए वह खुद चोर है, ऐसा नहीं लगता।

आखिर अभयकुमार ने एक युक्ति की। महल के एक विशाल खण्ड में उन्होंने अनेक प्रकार के झूमर, चंदरवा और ध्वजाएँ बँधवा दी। दरवाजे पर शोभायमान तोरण लगवाये। कमरे में अगर, चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्य रखे। शयनखण्ड में सुन्दर तरीके से शय्या लगवायी। अत्यन्त रूपवती दासियों को सुन्दर शृङ्गार से सजाकर, उनके हाथ में मृदङ्ग और वीणा देकर कमरे में खड़ा कर दिया। उस कक्ष को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो साक्षात् देवलोक को धरती पर उतारा गया है।

अभयकुमार ने रोहिणेय को उस दिन विविध प्रकार का स्वादिष्ट, रुचिकर और सुगन्धित भोजन खिलाया। भोजन के बाद नशाकारक मदिरा पिलाई। मदिरापान से रोहिणेय को बहुत नशा चढ़ा और वह गहरी निद्रा में सो गया। उसी वक्त उसे महल के उस सजे हुये कमरे में शय्या पर सुला दिया गया।

थोड़ी देर के पश्चात् रोहिणेय को होश आया और आश्चर्य से चारों ओर देखने लगा। जीवन में कभी देखा नहीं, वैसा दृश्य उसकी नज़रों के सामने था। उसी वक्त देवी जैसी दासियों ने सुन्दर हावभाव से और मधुर स्वर से पूछा-''हे स्वामिनाथ! आप बहुत भाग्यशाली हैं, आपका जन्म देवलोक में हुआ है। आपने ऐसे कौन-से पुण्य के कार्य किये हैं कि जिससे हमारे स्वामी हुए और देवलोक में उत्पन्न हुए?'' ऐसा सुनकर चोर सोचने लगा-''मैंने ऐसा कोई पुण्य कार्य किया नहीं कि मैं देवलोक में उत्पन्न हो सकूँ।'' उसी समय उसे जो भगवान महावीर ने देवताओं का वर्णन किया था, वह उपदेश याद

आया, देवों के श्वासोच्छ्वास सुगन्ध वाला रहता है। उनकी गले की मालाएँ मुर्झाती नहीं। उनकी आँखों की पलकें नहीं झपकती। वे जमीन से चार अंगुल ऊपर ही रहते हैं मतलब कि उनके पैर जमीन का स्पर्श नहीं करते।

उसने देवी जैसी दिखने वाली सुन्दरियों का सूक्ष्म निरीक्षण किया तो समझ में आया कि ये स्त्रियाँ तो जमीन पर पैर रखकर ही चलती हैं, उनकी आँखें पलकें झपकती हैं, उनकी गले की मालाओं में कई फूल मुरझाये हैं। यह सब देखकर उसे पता चला कि वह झूठा नाटक चालाक अभयकुमार ने मुझे फँसाने के लिए खड़ा किया है। अब मुझे भी नाटक के सामने नाटक करना पड़ेगा।

वह देवियों को कहने लगा-''देवियों! मैंने मनुष्य के भव में दान, धर्म, पुण्य, नियम, व्रतों का पालन किया है और सात बड़े व्यसनों से रहित जीवन जीकर बहुत पुण्य कमाया है, इसलिए आपके स्वामी के रूप में उत्पन्न हुआ हूँ।'' देवियों ने फिर प्रश्न किया-''हे नाथ! आपकी पुण्यकरणी तो हमने सुनी, लेकिन आपने कुछ पाप किये होंगे, वो भी हमें बताइए।'' चोर ने कहा-''मैंने मनुष्य भव में सिर्फ धर्म ही किया है, परन्तु पाप तो एक भी नहीं किया।''

रोहिणेय चोर और दासियों के बीच जो वार्तालाप हुआ वह अभयकुमार गुप्त रीति से सुन रहे थे। उन्होंने समझ लिया कि यह चोर बहुत बुद्धिमान है। इसे पकड़ना आसान नहीं अत: श्रेणिक राजा को सब घटना की जानकारी देकर अभय कुमार ने चोर को छोड़ दिया।

छूटकर घर वापस लौटते वक्त रोहिणेय चोर चिन्तन करने लगा-''आज तो जीवन और मौत की बात बन गई। महावीर प्रभु की थोड़ी-सी वाणी मेरे कान में पड़ी तो उसके सहारे आज अभयकुमार जैसे बुद्धि निधान महामन्त्री के हाथों से आजाद बच निकला, इसलिये वह वाणी मेरे लिए महान् उपकारक बन गई है। अगर महावीर प्रभु के इतने से वचनों से मैं एक भव में बच जाऊँ तो उनकी अमृत तुल्य वाणी को ज्यादा सुनकर तो कितना फायदा होगा? अब मैं पाप का धन्धा छोड़कर उनकी शरण में जाऊँगा और दु:खों से बचने का मार्ग जानूँगा।''

ऐसा चिन्तन करते-करते वह चोर प्रभु महावीर के पास पहुँचा। प्रभु के चरणों में भावपूर्वक वन्दन करके वह बोला-''हे प्रभु! आपकी अमृतवाणी के थोड़े शब्दों ने मेरी यह ज़िन्दगी बचाई है, इसलिए शेष जीवन आपको समर्पित करने की भावना रखता हूँ। कृपा करके मुझे सुखी होने का मार्ग बताइए।''

प्रभु महावीर ने उसे मार्ग बताया। श्रावक धर्म और साधु धर्म का पालन करना समझाया और उनमें भी श्रेष्ठ ऐसा साधु धर्म बताया जिसके पालन से इस भव और भव-भवों के सब दु:ख दूर हो जाते हैं। रोहिणेय चोर ने भगवान के पास दीक्षा लेने की भावना प्रकट की और कहा-''हे प्रभो! मैं श्रेणिक राजा से मिलकर वापस आकर आपके पास दीक्षा लूँगा।''

रोहिणेय चोर राजा श्रेणिक के पास आया और अपने जीवन में हुए परिवर्तन की राजा को जानकारी दी। उसने नगर में से चुराया हुआ धन जहाँ-जहाँ रखा था, वहाँ से निकालकर दे दिया। राजा, अभयकुमार और प्रजाजन उसके परिवर्तन से बहुत ही खुश हुए। रोहिणेय ने अपने परिजनों तथा अपने साथियों को भी प्रतिबोध दिया। उन सबकी आज्ञा लेकर प्रभु महावीर के पास आकर दीक्षा ग्रहण की। साधु जीवन में ऊँचा चारित्र पालकर जीवन के अन्तिम समय में संथारा लेकर कालधर्म पाकर रोहिणेय मुनि देवलोक में उत्पन्न हुए। प्रभु महावीर के मार्ग पर चलने और जीवन को उज्ज्वल बनाने वाले उन रोहिणेय मुनि को धन्य हो।

-'जैन पाठ्यक्रम - पुस्तक : 1' से साभार

प्र.1 रोहिणेय चोर ने प्रभु महावीर की क्या देशना सुनी?

प्र. 2 रोहिणेय चोर ने अभयकुमार के नाटक का सामना कैसे किया?

प्र. 3 पिता को दिया हुआ वचन पालने के लिए रोहिणेय ने क्या किया?

प्र. 4 निर्दोष छूट जाने पर रोहिणेय ने क्या किया?

प्र. 5 इस कथा से हमें क्या सीख मिलती है?

प्र. 6 प्रस्तुत कथा से कोई चार विशेषण युक्त शब्द छाँटकर लिखिए।

बाल-स्तम्भ [दिसम्बर-2021] का परिणाम

जिनवाणी के दिसम्बर-2021 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'शालिभद्र' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	लवि जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	25
द्वितीय पुरस्कार-300/-	नमन एस. छाजेड़, भुसावल (महाराष्ट्र)	24
तृतीय पुरस्कार- 200/-	सुदर्शन जैन, चौथ का बरवाड़ा (राजस्थान)	23
सान्त्वना पुरस्कार (5) - 150/-	निकिता जैन, मसूदा-अजमेर (राजस्थान)	22
	प्रणव भण्डारी, जोधपुर (राजस्थान)	22
	विशाल सिंघवी, जोधपुर (राजस्थान)	22
	अवधि तातेड़, आसीन्द (राजस्थान)	22
	सुजल जैन, आदर्शनगर, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	22

बाल-जिनवाणी जनवरी, 2022 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 मार्च, 2022)

प्र. 1. 'घर में शान्ति और प्रेम' कथा हमें क्या प्रेरणा देती है?
प्र. 2. King Shrenik was surprised to see what?
प्र. 3. संयुक्त परिवार बच्चों के विकास में किस तरह सहायक बनता है?
प्र. 4. 'आलोचना सूत्र' के पाठ का क्या प्रयोजन है?
प्र. 5. पैदल चलना हमारे स्वास्थ्य के लिए किस रूप में लाभदायक है?
प्र. 6. राहुल अपने माता-पिता को छोड़कर अमेरिका क्यों नहीं गया?
प्र. 7. सन्तों के सान्निध्य एवं धर्मक्रियाओं में रत रहने से राहुल ने क्या अनुभव किया?
प्र. 8. 'संयममय जीवन जीना ही जल-संकट का समाधान है।' कैसे?
प्र. 9. What is the objective of performing austerities?
प्र. 10. Write three synonyms for each-Meditation, Protector, Sensation, Remedy

बाल-जिनवाणी [नवम्बर-2021] का परिणाम

जिनवाणी के नवम्बर-2021 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	कु. आरोही श्रेणिक छाजेड़, नाशिक (महाराष्ट्र)	38
द्वितीय पुरस्कार-400/-	भूमि सिंघवी, जोधपुर (राज.)	37
तृतीय पुरस्कार- 300/-	आशीष जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	36
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	नमन जैन, हा.बोर्ड, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	35
	अंश जैन, जयपुर (राजस्थान)	35
	समकित जैन, कोटा (राजस्थान)	35

बाल-जिनवाणी, बाल-स्तम्भ के पाठक ध्यान दें

बाल-जिनवाणी एवं बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रत्येक अंक में दिए जा रहे प्रश्नों के उत्तर प्रदाताओं से निवेदन है कि वे अपना नाम, पूर्ण पता, मोबाइल नम्बर, बैंक विवरण-(खाता संख्या, आई.एफ.एस.सी. कोड, बैंक का नाम इत्यादि) भी साथ में स्पष्ट एवं साफ अक्षरों में लिखकर भिजवाने का कष्ट करें ताकि आपका पुरस्कार उचित समय पर आपको प्रदान किया जा सके। जिन्हें अब तक पुरस्कार राशि प्राप्त नहीं हुई है, वे श्री अनिल कुमारजी जैन से (मो. 9314635755) सम्पर्क कर सकते हैं। *-सम्पादक*

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

7506357533 ✆ : 9022786523, 022-26287187

ई-मेल : **oswalmatrimony@gmail.com**

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्जवल भविष्य की ओर एक कदम.....

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. **We Have Launched Membership Plans For Donors.**

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)		
SILVER MEMBER RS.50000	**GOLD MEMBER** RS.75000	**PLATINUM MEMBER** RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		**KOHINOOR MEMBER** RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund **IFSC Code** - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 **PAN No.** - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यों एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची -

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)

श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई।
श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन।
युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।
श्रीमती इन्द्राबाई सूरजमल जी भण्डरी, चैन्नई (निमाज-राज.)।

DIAMOND MEMBER (RS.200000)

श्रीमान् प्रकाशचन्द जी भण्डारी, हरलूर रोड, बैंगलोर
M/s Prithvi Exchange (India) Ltd., Chennai

SILVER MEMBER (RS.50000)

श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (भोपालगढ़)
कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, अहमदाबाद।
श्रीमती हेमलता मदनलाल जी सांखला, मुम्बई।
श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर
श्रीमती सुशीला जी साण्ड धर्मपत्नी स्व. श्री कस्तूरमल जी साण्ड, अजमेर
श्रीमती बीना सुरेशचन्द्र जी मेहता, उमरगांव (भोपालगढ़ वाले)।

PLATINUM MEMBER (RS.100000)

श्रीमान् दूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई।
श्रीमान् दलीचन्द जी सुरेश जी कवाड़, पूल्लामल्लई।
श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
श्रीमान् सम्पतराज जी राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई।
कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद।
प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)।
श्रीमान् विजय जतिन जी नाहर, इन्दौर।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़।
श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडू।
श्रीमती पुष्पाजी लोढ़ा, नेहरू पार्क, जोधपुर।
श्रीमान जी. गणपतराजजी, हेमन्तकुमारजी, उपेन्द्रकुमारजी, कोयम्बटूर (कोसाणा वाले)
श्रीमान सुगनचन्द जी छाजेड़, चौपासनी रोड, जोधपुर।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, तिरूवल्लुवर (तमिलनाडू)।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, **CHENNAI-56**
छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिरतन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी की प्रकाशन योजना में आपका स्वागत है

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा विगत 77 वर्षों से प्रकाशित 'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका मानव के व्यक्तित्व को निखारने एवं ज्ञानवर्धक सामग्री परोसने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसमें अध्यात्म, जीवन-व्यवहार, इतिहास, संस्कृति, जीवन मूल्य, तत्त्व-चर्चा आदि विविध विषयों पर पाठ्य सामग्री उपलब्ध रहती है। अनेक स्तम्भ निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें सम्पादकीय, विचार-वारिधि, प्रवचन, शोधालेख, अंग्रेजीलेख, युवा-स्तम्भ, नारी-स्तम्भ आदि के साथ विभिन्न गीत, कविताएँ, विचार, प्रेरक प्रसङ्ग आदि प्रकाशित होते हैं। नूतन प्रकाशित साहित्य की समीक्षा भी की जाती है।

जैनधर्म, संघ, समाज, संगोष्ठी आदि के प्रासङ्गिक महत्त्वपूर्ण समाचार भी इसकी उपयोगिता बढ़ाते हैं। जनवरी, 2017 से 8 पृष्ठों की 'बाल जिनवाणी' ने इस पत्रिका का दायरा बढ़ाया है। अनेक पाठकों को प्रतिमाह इस पत्रिका की प्रतीक्षा रहती है तथा वे इसे चाव से पढ़ते हैं। जैन पत्रिकाओं में जिनवाणी पत्रिका की विशेष प्रतिष्ठा है। इस पत्रिका का आकार बढ़ने तथा कागज, मुद्रण आदि की महँगाई बढ़ने से समस्या का सामना करना पड़ रहा है। जिनवाणी पत्रिका की आर्थिक स्थिति को सम्बल प्रदान करने के लिए पाली में 28 सितम्बर, 2019 को आयोजित कार्यकारिणी बैठक में निम्नाङ्कित निर्णय लिये गए, जिन्हें अप्रेल 2020 से लागू किया गया है-

वर्तमान में श्वेत-श्याम विज्ञापनों से जिनवाणी पत्रिका को विशेष आय नहीं होती है। वर्ष भर में उसके प्रकाशन में आय अधिक राशि व्यय हो जाती है। अत: इन विज्ञापनों को बन्दकर पाठ्य सामग्री प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया।

आर्थिक-व्यवस्था हेतु एक-एक लाख की राशि के प्रतिमाह दो महानुभावों के सहयोग का निर्णय लिया गया। ऐसे महानुभावों का एक-एक पृष्ठ में उनके द्वारा प्रेषित परिचय/सामग्री प्रकाशित करने के साथ वर्षभर उनके नामों का उल्लेख करने का प्रावधान भी रखा गया।

जिनवाणी पत्रिका के प्रति अनुराग रखने वाले एवं हितैषी महानुभावों से निवेदन है कि उपर्युक्त योजना से जुड़कर श्रुतसेवा का लाभ प्राप्त कर पुण्य के उपार्जक बनें। जो उदारमना श्रावक जुड़ना चाहते हैं वे शीघ्र मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों से शीघ्र सम्पर्क करें।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों की जानकारी में लाने की कृपा करें जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके।

'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है। 'जिनवाणी' पत्रिका में जन्मदिवस, शुभविवाह, नव प्रतिष्ठान, नव गृहप्रवेश एवं स्वजनों की पुण्य-स्मृति के अवसर पर सहयोग राशि प्रदान करने वाले सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। आप जिनवाणी पत्रिका को सहयोग प्रदान करके अपनी खुशियाँ बढ़ाना न भूलें।

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

जिनवाणी प्रकाशन योजना के लाभार्थी

'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका की अर्थ-व्यवस्था को सम्बल प्रदान करने हेतु निम्नाङ्कित धर्मनिष्ठ उदारमना श्रावकरत्नों से राशि रुपये 1,00,000/- प्राप्त हुई है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी परिवार उनका हार्दिक आभारी है।

वित्तीय वर्ष 2021-22 हेतु लाभार्थी

(1) श्री भागचन्दजी हेमेशजी सेठ, जयपुर
(2) श्री सौभाग्यमलजी, हरकचन्दजी, हनुमान प्रसादजी, महावीर प्रसादजी, कपूरचन्दजी जैन (बिलोता वाले), अलीगढ़-रामपुरा, सवाईमाधोपुर, कोटा एवं जयपुर
(3) श्री स्वरूपचन्दजी, सुदर्शनजी बाफना, सूरत
(4) श्री सुमतिचन्दजी कोठारी, जयपुर
(5) श्री पवनलालजी मोतीलालजी सेठिया, होलनांथा
(6) श्रीमती अलकाजी, विजयजी नाहर, इन्दौर
(7) सेठ चंचलमल गुलाबदेवी सुराणा ट्रस्ट, बीकानेर
(8) डॉ. सुनीलजी, विमलजी चौधरी, दिल्ली
(9) इन्दर कुमार मनीष कुमार सुराणा चेरिटेबल ट्रस्ट, बीकानेर
(10) श्री गणपतराजजी, हेमन्त कुमारजी, उपेन्द्र कुमारजी बाघमार (कोसाणा वाले), कोयम्बटूर
(11) Shri Ankit ji lodha, Jewels of Jaipur Gie gold creations Pvt Ltd, Mahaveer Nagar, Jaipur
(12) श्री राधेश्यामजी, कुशलजी, पदमजी, अशोकजी, प्रदीपजी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर (राज.)
(13) श्री सुरेशचन्दजी इन्दरचन्दजी मुणोत, लासूर स्टेशन, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
(14) श्री कस्तूरचन्दजी, सुशील कुमारजी, सुनील कुमारजी बाफना, जलगाँव (महाराष्ट्र)
(15) पुष्पा चन्द्रराज सिंघवी चेरिटेबल ट्रस्ट, मुम्बई (महाराष्ट्र)
(16) श्री राजेन्द्रजी नाहर, भोपाल (मध्यप्रदेश)
(17) श्रीमती लाडजी हीरावत, जयपुर (राजस्थान)
(18) श्री प्रकाशचन्दजी हीरावत, जयपुर (राजस्थान)
(19) श्री अनिलजी सुराणा, वैल्लूर (तमिलनाडु)
(20) डॉ. सुनीलजी, विमलजी चौधरी, दिल्ली
(21) श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, जयपुर-मुम्बई
(22) श्री सतीशचन्दजी जैन (कंजोली वाले), जयपुर

उदारमना लाभार्थियों की अनुमोदना एवं स्वेच्छा से नये जुड़ने वाले लाभार्थियों का हार्दिक स्वागत।

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :

NUTRITION FOODS

BREAKFAST CEREALS

FORTIFIED RICE KERNELS

WHOLE & BLENDED SPICES

VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

ISO 22000 CERTIFIED

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

Food Safety System Certification 22000

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT IMMENSA THANE (W)

EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

In association with HDFC PROPERTY FUND

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन